वैद्यसार

अनुवादक तथा सम्पादक:
आयुर्वेदाचार्य पं० सत्यंधर जैन, काव्यतीर्थ

देवकुमार-ग्रन्थमाला का चतुर्थ पुष्प

वैद्यसार

अनुवादक तथा सम्पादक :

आयुर्वेदाचार्य पं० सत्यंधर जैन, काव्यतीर्थ

प्रकाशक :

निर्मलकुमार जैन, मंत्री

जैन-सिद्धान्त-भवन

आरा

वि० सं० १९९८

मूल्य : बारह आना

श्रीवीतरागाय नमः

भूमिका

अनादि काल से संसार-भ्रमण करता हुआ यह जीव महान् पुण्योदय से मनुष्य-जन्म प्राप्त करता है। यद्यपि प्रायः सभी मत मतांतरवालों ने इस मनुष्य-जन्म को सब योनियों में श्रेष्ठ माना है, तथापि जैनधर्म में तो इसका और भी गौरव बताया गया है। प्राणिमात्र का अंतिम उद्देश्य और सर्वोपरि अनुपम सौख्य-स्थान, मोक्ष की प्राप्ति इसी जन्म से होती है। जीव को देव, तिर्यंच, नरक गतियों से मोक्ष नहीं प्राप्त होता। यद्यपि देव-योनि उत्तम और सुख की भूमि है, फिर भी अन्तिम ध्येय, जो कि संयम-प्राप्ति और केवलज्ञान की अनुपम विभूति प्राप्त होने के बाद प्राप्त होता है, और जहाँ पहुँच जाने के बाद यह जीव अनंतानंत काल तक अनंतज्ञान, अनंतदर्शन, अनंतसौख्य अनंतवीर्य—इन अनुपमेय लब्धियों का सुख भोगता है, इस मनुष्ययोनि में ही प्राप्त होता है। सारांश, सांसारिक अवस्था में इस जीव की उन्नति के लिए मनुष्य-जन्म-प्राप्ति ही उत्तम साधन है। वैद्यक शास्त्र के प्रसिद्ध ग्रंथ, सुश्रुतसंहिता, में प्रारंभ के अध्याय में ही लिखा है कि "तत्र पुरुषः प्रधानम्, तस्योपकरणमन्यत्" अर्थात् सांसारिक योनियों में पुरुष प्रधान है, अन्य पदार्थ सब उसकी उन्नति के साधन हैं।

मनुष्य की उन्नति को रोकने के लिए जिस प्रकार जरा, चिंता, जन्म-मरण, निर्धनता आदि विघ्न स्वरूप हैं, उसी प्रकार रोग भी इस जीव का इतना प्रबल शत्रु है कि अनेक प्रकार के उपाय करते हुए भी जब यह अपना अधिकार इस शरीर पर जमा बैठता है, तब मनुष्य के ज्ञान, बुद्धि, बल-वीर्य आदि सभी गुण परास्त हो जाते हैं, और कुछ काल के लिए तो वह किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो जाता है। वैद्यक के प्रसिद्ध ग्रन्थों में लिखा है कि—

> रोगाः कार्श्यकराः बलक्षयकराः देहस्य दार्ढ्यापहाः।
> दृष्टा इंद्रियशक्तिसंक्षयकराः सर्वांगपीडाकराः॥
> धर्मार्थाखिलकाममुक्तिषु महाविघ्नस्वरूपाः बलात्।
> प्राणानाशु हरन्ति सन्ति यदि ते क्षेमं कुतः प्राणिनाम्॥

अर्थात् रोग दुर्बल बना देते हैं, बल नष्ट करते हैं, शरीर की दृढ़ता का अपहरण करते हैं, इन्द्रियों की शक्ति के नाशक हैं और सभी अङ्गों में पीड़ा पहुँचाते हैं। धर्म, अर्थ, सम्पूर्ण काम और मुक्ति में हठात् महान् विघ्न के रूप में उपस्थित हो जाते और प्राणों का हरण कर लेते हैं। यदि किसी प्राणी को वे रोग हुए हों, तो उसकी कुशल कहाँ।

जैन-शास्त्रों में भी इसके अनेक दृष्टांत मौजूद हैं; जैसे स्वामी समन्तभद्र को भस्मक व्याधि ने कुछ काल के लिये क्रियाहीन कर दिया था। श्री मुनि वादिराज को कुष्ठ रोग के कारण परेशानी उठानी पड़ी थी। रोग प्राणिमात्र का महान् वैरी है और जबतक जीव उसके

चंगुल में फँसा रहता है, अर्धमृतक के समान रहता है। व्यापार, धर्मसाधन, विद्यासाधन आदि कोई भी सांसारिक या धार्मिक उन्नति करनेवाला कार्य वह नहीं कर सकता है।

वैद्यक शास्त्र में रोगों के प्रादुर्भाव के कारण पूर्वजन्मकृत पाप तथा इस जन्म में कुपथ्यादि सेवन बतलाये गये है, यथा :

पूर्वजन्मकृतं पापं व्याधिरूपेण बाधते।
तच्छांतिरौषधैर्दानैः जपहोमव्रतार्चनैः ॥

अर्थात् पूर्वजन्म के पाप (असातावेदनीय के द्वारा) इस जन्म में रोगरूप में प्रकट होकर कष्ट देते हैं। उनकी शान्ति के लिये औषध, दान, पूजन आदि हैं। इस प्रकार यह सिद्ध होता है कि रोग इस जीव के पापकर्मो का फलस्वरूप है और उससे बचने के लिये मनुष्य को सदैव संयम से रहना चाहिये। जिस प्रकार पूर्वजन्म का संयम, रोग-प्राप्ति से बचाता है, उसी प्रकार इस जन्म का संयम (पथ्यादि) मनुष्य का रोग नष्ट करने में सहायक होता है।

इस जीव के जन्म-मरण की परंपरा अनादि से है। तब यह बात निर्विवाद कही जा सकती है कि इस जन्म-परंपरा के साथ चलने वाले रोग भी अनादिकाल से हैं और उनको नष्ट करने के उपायों का ज्ञान भी, जो कि आयुर्वेद के नाम से प्रसिद्ध है, जीव को अनादि काल से है। इसी कारण शास्त्रकारों ने आयुर्वेद का लक्षण, जो कि अतिव्याप्ति, अव्याप्ति और असंभव—इन तीन दोषों से रहित है, इस प्रकार बतलाया है :

आयुर्हिताहितं व्याधिर्निदानं शमनं तथा विद्यते यत्र विद्वद्भिः स आयुर्वेद उच्यते
अनेन पुरुषो यस्मादायुर्विन्दति वेत्ति च तस्मान्मुनिवरैरेष आयुर्वेद इति स्मृतः।

अर्थात् जिसमें आयु, उसके हित, अहित, व्याधि तथा उसके कारण तथा उसके शांत करने के उपाय बताये गये हों, उसको आयुर्वेद कहते हैं। जिसके द्वारा मनुष्य आयु को प्राप्त करता है, जिसके द्वारा आयु को कायम रखने के उपायों को जानता है, उसको मुनियों ने आयुर्वेद कहा है।

जरा ध्यान दीजिए, कैसा स्पष्ट और व्यापक लक्षण है। संसार की सब चिकित्सा-प्रणालियों को छान डालिये, सबका तत्त्व निकालिये, ऐसा उत्तम सिद्धांत कहीं पर भी नहीं मिलेगा। सब पद्धतियों में दोष मौजूद है। कहीं पर पथ्यापथ्य का विवेचन नहीं, तो कहीं पर उम्र बढ़ानेवाले उपाय नहीं लिखे हैं; कहीं पर रोगों की परीक्षा का तरीका दोषपूर्ण है, तो कहीं पर चिकित्सा ऐसी सुलभ नहीं है, जो अमीर-गरीब, बाल-वृद्ध, स्त्री-पुरुष—सबों के लिए उपयोगी हो। सारांश में हमारा प्राचीन आयुर्वेद ही सर्वोपरि और सर्वाङ्गपूर्ण है। बहुतसे व्यक्ति इसको अवैज्ञानिक कहते हैं, और इसकी हँसी उड़ाया करते हैं; लेकिन ज्यों-ज्यों आयुर्वेद का अध्ययन और प्रचार बढ़ता जा रहा है, इसके विरोधी भी इसके हिमायती बनते

जा रहे हैं। आयुर्वेद का आठ अंगों में विभक्तीकरण ही उसकी वैज्ञानिकता को सिद्ध करता है। ये आठों अङ्ग इस प्रकार हैं :—

१ शल्य—चीर-फाड़ (ऑपरेशन) का इलाज।

२ शालाक्य—गर्दन से ऊपर की बीमारी, जैसे कान, नाक, गला, आँख, दाँत और सिर के रोगों का इलाज।

३ कायचिकित्सा—सम्पूर्ण शरीर में होनेवाले बुखार, दस्त, कास, श्वास, प्रमेह एवं जलोदर आदि रोगों का इलाज।

४ भूतविद्या—गृहदोष, भूत-प्रेत, पिशाच आदि का उपाय।

५ कौमारभृत्य—बच्चों के रोगों का इलाज, उनका लालन-पालन, माता के रोग तथा उसके दुग्ध के शोधन-वर्द्धन आदि का उपाय।

६ अगदतंत्र—सर्प, बिच्छू, बर्र, गृहगोधिका आदि जंगम विषों का तथा संखिया, धतूरा, अफीम आदि स्थावर विषों के लक्षण और उनसे ग्रसित रोगियों के विष दूर करने का उपाय।

७ रसायनतंत्र—वृद्ध, बाल, निर्बल, इन्द्रियहीन, बुद्धिहीन व्यक्तियों का बल तथा आयु बढ़ाने के उपाय।

८ वाजीकरणतंत्र—वीर्यहीन या दुष्टवीर्य, नपुंसक और बलहीन पुरुषों के वीर्य-शोधन, वीर्यवर्द्धन, संतानोत्पत्ति आदि के उपाय।

अब पाठक स्वयं सोच सकते हैं कि इन आठ अङ्गों के बाहर कौन सी चीज बाकी रह जाती है ?

आयुर्वेद में शरीर-रचना मुख्यतया वात, पित्त और कफ से मानी गई है और इन तीन दोषों की (कार्य के अनुसार इनकी गणना—मल और धातु में भी की गई है) रचना पंचतत्त्वों (पृथ्वी, अप, तेज, वायु, आकाश) से हुई है, जो शरीर की बनावट के कारण हैं और उसके पोषण और वर्द्धन में सहायक हैं। इन पंचतत्त्वों से ही मीठा, खट्टा, लवण, कड़वा (मिरच आदि) तिक्त (नीम, चिरायता आदि), कसैला (हड़ आदि) इन छः रसों का जन्म होता है। संसार में जितने भी पदार्थ हैं, वे सब इन छः रसों के अन्तर्गत आ जाते हैं। इनका भी पंचतत्त्वों से ही पोषण होता है। सारांश, पंचतत्त्वों से ही शरीर बना है और इन्हीं से उसका पालन-पोषण, और वर्द्धन भी होता है। उनमें न्यूनाधिकता होने से शरीर में रोगोत्पत्ति होती है। और उसकी न्यूनाधिकता ठीक करने के लिए षट् रस ही उपयोगी होते हैं। जिस तत्त्व की शरीर में न्यूनाधिकता होती है उसको ठीक करने के लिये उसी रस का उपयोग तथा त्याग किया जाता है। संक्षेप में यही व्याधियाँ हैं, और यही चिकित्सा का मूल मंत्र है। जैनमत के अनुसार ये सब पदार्थ पुद्गल के अन्तर्गत आ जाते हैं और बहुत अच्छी तरह घटित होते हैं। इस विषय को लेकर एक स्वतंत्र पुस्तक बनाई जा सकती है।

इन ऊपर की पंक्तियों का आयुर्वेद में दो श्लोकों में कितना अच्छा विवेचन किया गया है, वह ध्यान देने योग्य है :

विसर्गादानविक्षेपैः सोमसूर्यानिलाः यथा
धारयन्ति जगद्देहं कफपित्तानिलास्तथा ॥

अर्थात्—जैसे छोड़ना, ग्रहण करना, विक्षेप इन क्रियाओं से चन्द्रमा, सूर्य, और वायु संसार को धारण किए हुए हैं। इसीप्रकार वात, पित्त, कफ शरीर को धारण किये हुए हैं। इसी विषय को चरक के विमानस्थान में 'पुरुषोऽयं लोकसम्मित इत्युवाच भगवान् पुनर्वसुरात्रेयः ॥ यावन्तो हि मूर्त्तिमन्तो लोके भावविशेषास्तावन्तः पुरुषे यावन्तः पुरुषे तावन्तो लोके'। इत्यादि पंक्तियों में पुरुष और लोक का सादृश्य सिद्ध किया है। जैनमत के अनुसार तो यदि मनुष्य अपनी कमर पर दोनों हाथ टेककर खड़ा हो जाय, बस वही स्वरूप लोक का है। देखिये, यहाँ जैनमत और आयुर्वेद का कितना सामंजस्य है, जो कि पदार्थों के सामंजस्य से ही नहीं, आकार के सामंजस्य से भी वैसा ही है।

पूज्य उमास्वातिकृत दशाध्याय सूत्र के पाँचवें अध्याय के "शरीरवाङ्मनःप्राणापानाः पुद्गलानां, सुखदुःखजीवितमरणोपग्रहाश्च"—इन दो सूत्रों में रोगों के और जीवों के संबंध को भले प्रकार से दर्शा दिया है।

जैसा कि मैंने पहले लिखा है कि पंचतत्त्वों से ही रस बनते हैं, इस बात का चरक के एक ही श्लोक में कैसा अच्छा वर्णन किया गया है :

क्ष्मांभोऽग्निक्ष्मांबुतेजःखः वाय्वग्न्यनिलगोनिलैः
द्वयोल्बणैः क्रमाद्भूतैः मधुरादिरसोद्भवः ॥

अर्थात् पृथ्वी-जलतत्त्व से मधुर, अग्नि-पृथ्वी तत्त्व से अम्ल, जल और अग्नितत्त्व से लवण, आकाश-वायु तत्त्व से कटु (मिरच आदि), अग्नि और वायुतत्त्व से तिक्त (नीम आदि), पृथ्वी और वायुतत्त्व से कसैला (हड़ आदि) रस बनते हैं। यह ठीक है कि यदि सूक्ष्म विवेचन किया जाय, तो प्रत्येक रस में प्रत्येक तत्त्व के अंश हैं। उक्त वर्णन में केवल प्रधानता बताई गई है।

जैनधर्म में आयुर्वेद का स्थान

जैनधर्म में तो आयुर्वेद का खास स्थान है। इसके द्वादशांग शास्त्र में जो दृष्टिवाद नाम का बारहवाँ अंग है (जिसके पाँच भेद किये हैं और जिसका एक भेद पूर्वगत है) उसको चौदह प्रकार का बतलाया है। इनमें जो प्राणवाद नाम का पूर्वशास्त्र है, उसमें विस्तारपूर्वक वैद्यक-शास्त्र का वर्णन किया गया है, जो त्रिकालाबाधित है। यह बात निर्विवाद सिद्ध है कि जैन तीर्थंकर केवल-ज्ञान-विभूति सहित होते थे, उनका ज्ञान पूर्णज्ञान होता था, उसमें किसी भी प्रकार की भूल होने की संभावना नहीं। इस अंग के लाखों श्लोकों में

अष्टांग आयुर्वेद का विस्तार से वर्णन है, जिसमें निदान, रोगों के लक्षण, पथ्यापथ्य, अरिष्ट लक्षण (रोगी के मरण के पहले उत्पन्न होनेवाले चिह्न) आदि का वर्णन है। सारांश, सब प्रकार के वैद्यकोपयोगी विषयों का वर्णन है। जिस प्रकार ये अंग, छिन्न-भिन्न हो गये हैं और काल-दोष से दुर्लभ और अप्राप्य भी हैं, उसी प्रकार वैद्यक ग्रन्थों का भी परम्परानुसार मिलना कठिन हो रहा है।

इस बार श्रीगोम्मटेश्वर महामस्तकाभिषेक के उत्सव से लौटते समय मूडबिद्री के 'सिद्धांत-भवन' में वहाँ के अध्यक्ष ने मुझ को कई ग्रन्थ कन्नड लिपि के दिखलाये थे तथा पढ़कर भी सुनाये थे। खेद के साथ लिखना पड़ता है कि हम जैनों की साहित्यिक अरुचि के कारण अभी वे ग्रन्थ जिह्वा पर कहने लायक ही बने हुए हैं। वे ग्रन्थ दस-पन्द्रह हजार श्लोक-संख्या तक के हैं। समन्तभद्रस्वामी एवं पूज्यपादस्वामी जैसे महान् आचार्यों के बनाये हुए वैद्यक-ग्रन्थ इनमें हैं। ये महानुभाव जैन-साहित्य में उत्तम कोटि के आचार्य गिने जाते हैं।

अभी सोलापुर से श्रीवर्द्धमान पार्श्वनाथ शास्त्री ने 'कल्याणकारक' ग्रन्थ का अनुवाद कराके छपाया है। यह ग्रन्थ भी अत्युत्तम है। इस के प्रकाशित होने से जैनेतर विद्वानों का ध्यान भी जैन-आयुर्वेद की तरफ आकृष्ट हुआ है। इसकी भूमिका तथा सम्पादकीय वक्तव्य मनन करने योग्य है, तथा जैन वैद्यककार आचार्यों की कृतियों पर अच्छा प्रकाश डालता है।

जैन वैद्यक की खास विशेषता यह है कि इसमें स्वार्थ को ही मुख्य स्थान नहीं दिया गया है, अर्थात् अपने क्षणभंगुर शरीर की रक्षा के लिए अन्य जीवों के शरीरावयवों को उदरस्थ कर लेने का उपदेश या विधान इसमें नहीं है। जहाँ अन्य वैद्यक-ग्रन्थों में मल-मूत्र, अस्थि-चर्म, रक्त-मांस आदि का स्पष्ट विधान है, यहाँ तक कि एकाध स्थानों पर गो-रक्त, गो-मांस, मनुष्यावयव तक के योग वैद्यकग्रन्थों में आये हैं—वहाँ शहद तक का त्याग जैन-आचार्यों ने बतलाया है। आसव, अरिष्ट, जिनमें एकेंद्रिय तो क्या, दो इन्द्रिय, जीव तक आँखों से दिखाई पड़ते हैं, त्याज्य बतलाये गये हैं। अवलेह आदि की मर्यादा बतलाई गई है, जिनमें कभी कभी आधुनिक यंत्रों (खुर्दबीन आदि) से साक्षात् दो इन्द्रिय वाले जीव दिखाई पड़ते हैं। इसी कारण से जैन आचार्यों ने तरल पदार्थों द्वारा चिकित्सा के स्थान पर रसादि चिकित्सा पर अधिक जोर दिया है और बौद्धकाल तथा जैनकाल में इस रस-चिकित्सा का प्रचार और उन्नति भी विशेष हुई है। प्राचीन ग्रन्थ इसके साक्षी हैं कि रस-चिकित्सा विशेष लाभ-दायक है :

अल्पमात्रोपयोगित्वादरुचेरप्रसंगतः।
क्षिप्रमारोग्यदायित्वादौषधेभ्योऽधिको रसः॥

ऐसा अनेक आचार्यों ने लिखा है। सारांश में वैद्यक-साहित्य में जैनाचार्यों का खास स्थान है। योगरत्नाकर में मृतसंजीवनी वटिका के संबंध में "पूज्यपादैरुदाहृता" ऐसा पाठ आता है,

तथा 'भाषितं पूज्यपादैः' इत्यादि अनेक योगों के अन्त में मिलता है, जिससे सिद्ध होता है कि जैन आचार्यों ने इस समस्या को भले प्रकार हल किया है।

लेख बहुत बढ़ गया है। अन्त में सारांश यह है कि मनुष्यमात्र को रोगमुक्ति के लिए चिकित्सा की आवश्यकता है और उसकी अच्छी विधि के लिये आयुर्वेद ज्ञान की आवश्यकता है। जिन अचार्यों ने ऐसे ग्रन्थ संग्रह किये हैं, उन्होंने संसार का बड़ा उपकार किया है, खासकर रस-ग्रन्थ रचनेवालों ने तो और भी कमाल का काम किया है।

ऐसे ही एक आचार्य का बनाया हुआ 'वैद्यसार' नामक ग्रन्थ हमारे सामने है, जो जैनसमाज के प्रसिद्ध दानवीर, परोपकारी बाबू निर्मल कुमारजी तथा बाबू चक्रेश्वर कुमारजी बी० एस-सी, एल-एल-बी०, एम० एल० ए० द्वारा संचालित 'जैन-सिद्धान्त-भवन' आरा से प्रकाशित हुआ है। इसकी खोज और प्राप्ति के लिए 'भवन' के अध्यक्ष श्रीमान् विद्याभूषण पं० के० भुजबलीजी शास्त्री ने बड़ा परिश्रम किया है। आपकी बहुत दिनों से इच्छा थी कि कोई जैन वैद्यक-ग्रन्थ प्रकाश में आवे। इसके लिये आप सदैव से हम लोगों को प्रेरणा किया करते थे।

इसकी टीका श्रीमान् पण्डित सत्यंधरजी जैन 'वत्सल' आयुर्वेदाचार्य ने, जो कानपुर के आयुर्वेद-विद्यालय में ही कई वर्ष रह कर वैद्यक की उच्चकोटि की शिक्षा प्राप्त कर चुके हैं, आज कल छपारा, जिला छिंदवाड़ा में रहते हैं, बड़े परिश्रम से की है। इसके लिए उनको अनेक धन्यवाद है।

यद्यपि ग्रन्थ छोटा है, किन्तु बड़ा उपयोगी है। इसके संग्रहकर्त्ता का नाम तथा स्थान और समय का पता न लगा सका। कई बार मेरे और पं० के० भुजबलीजी शास्त्री के बीच पत्र-व्यवहार भी हुआ, एक दो जगह और भी तलाश की गई, लेकिन शोक है कि हम लोग इस कार्य में सफल न हो सके। ग्रन्थ छपे भी लगभग दो वर्ष हो गये। कुछ इस कारण से कुछ अन्य विघ्न-बाधाओं के आ जाने के कारण इसकी भूमिका भी नहीं लिखी जा सकी थी।

अब कुछ इस ग्रन्थ में आये हुए योगों पर पाठकों का ध्यान आकर्षित करके इसको समाप्त करता हूँ और आशा करता हूँ कि जैनसमाज में तथा वैद्यक-संसार में यदि इसका कुछ प्रचार हुआ और जनता को लाभ पहुँचा तो आगे वैद्यक ग्रन्थों के प्रकाशन में सहायता पहुँचेगी।

इस ग्रन्थ की रचना कविता के ख्याल से तो बहुत ऊँची नहीं मालूम होती है, लेकिन लेखक विद्वान् और विशेष अनुभवी मालूम होता है। प्रायः प्रत्येक रोग पर ऐसी योग्यता और अनुभव के नुस्खे लिखे हैं, जो बहुत लाभकारी हैं। बहुत-से योग तो ऐसे मालूम होते हैं कि वैद्यकशास्त्र-भर का मंथन करके लिखे गये हैं। कुछ दृष्टान्त देखिये:

कन्दर्परस—यह रस अपनी श्रेणी का नवीन प्रकार का है। ऐसा रस किसी भी ग्रन्थ

में नहीं देखा गया है; क्योंकि प्रायः उपदंश के औषध केवल व्रणों को ही ठीक करते हैं; किन्तु कंदर्परस शारीरिक शुद्धि के साथ-साथ धातुवर्द्धक और पौष्टिक भी है। इसके प्रयोग से निकृष्ट रक्त वाले और अशुद्ध वीर्य वाले व्यक्ति भी कामदेव-सदृश सुन्दर शरीर को प्राप्त कर तेजस्वी सन्तान पैदा कर सकते हैं।

विबन्ध के लिए—विरेचकतिक्तकोषातकी योग—यह योग कड़वी तोरई से बनाया गया है। इसके द्वारा बनाये गये तेल को सिर्फ पैर के तलवों पर लगाने और नाभि पर मलने से अन्तरङ्ग आमदोष का बहिःनिःसरण होने लगता है। कैसा चमत्कार है कि औषध सेवन किये बिना भी, स्पर्शमात्र से, भीतर की व्याधियाँ शान्त हो जाती हैं।

इसी विषय का जयपाल योग है। भैषज्यरत्नावली, रसेन्द्रसार-संग्रह आदि ग्रन्थों में इच्छा-भेदीरस नाराचरस आदि औषध विबन्ध अवस्था में रेचन कराने के लिये दिये जाते हैं, क्योंकि वहाँ पर जयपाल को विरेचक ही माना गया है किन्तु इस ग्रन्थ में ठंडे पानी के अनुपान से विरेचन गुण जतलाते हुए गरम पानी के साथ देने से वमन गुण भी प्रकट किया गया है। इस प्रकार एक ही योग से दो विरुद्ध कार्य किये जा सकते हैं।

उदयादित्यवर्ण रस—यह तो वास्तविक में यथा नाम तथा गुण वाला है। इसको मोती मूँगा,सोना और तांबा आदि रत्नों और भस्मों के सम्बन्ध से अद्भुत चमत्कारपूर्ण कर दिया गया है; इसका प्रयोग त्रिदोषज, इराम कुष्ठ सन्निपात आदि कष्टसाध्य रोगों के लिये सदुपयोगी है। जो व्यक्ति जीर्णज्वर, राजयक्ष्मा आदि बीमारियों से हताश हो चुके हैं, वे लोग इस रस का अवश्य सेवन करें। ऐसी बीमारियों को दूर करने के लिये यह रामबाण निर्णीत हो चुका है।

लोकचिन्तामणि रस—तूतिया, वत्सनाभ विष और लाङ्गली आदि विषैले पदार्थों से बनाया गया यह रस कठिन से कठिन व्रण और विषैली गाँठों को बैठाने के साथ-साथ भयानक ज्वरों को भी शान्त कर देता है। प्लेग-जैसी महामारी के लिए इस औषध का प्रयोग बहुत उत्तम है। वर्त्तमान समय में ऐसा अच्छा योग किसी भी ग्रन्थ में देखने में नहीं आया है, जो कि खाने और लगाने—इन दोनों प्रयोगों के द्वारा प्लेग, कण्ठमाला, कारबङ्कल आदि दुःसाध्य बीमारियों को ठीक कर सके। आशा है कि हमारे चिकित्सकगण इस उत्तम योग को प्रयोग में लाकर इसका प्रचार करेंगे।

वातरोग में रसादि योग—कुछ समय पहले सुना करते थे कि अमुक महात्मा ने चुटकी से जरा सी खाक या सरसों-सी गोली दे दी थी, उससे बड़ा लाभ किया इत्यादि। आज वैसा ही आश्चर्यजनक रस आपके सामने प्रस्तुत है। इस योग की सर्षप-सदृश वटी चौरासी प्रकार के वातरोग, कफरोग, प्रमेह, उदररोग और विषूचिका आदि उग्र व्याधियों पर अव्यर्थ लाभ प्रकट करती है।

कामाङ्कुश रस—इस रस में व्योमसिन्दूर, लौहसिन्दूर, वज्रभस्म (हीरा भस्म) और स्वर्ण भस्म आदि उत्तमोत्तम पदार्थ डाले गये हैं। कैसा भी क्षीण व्यक्ति इस रस के प्रयोग से बलवान् बन जाता है। यह रस स्तम्भन के लिए भी अनुपम योग्यता रखता है। एक तो वैसे ही हीरे की शक्ति बलवती होती है, किन्तु उसमें जो स्वर्ण आदि हृदय और मस्तिष्क को पुष्ट करने वाली रसायन रूप चीजें डाली गई हैं। वास्तव में इस रसको सेवन करनेवाला पुरुष शत या सहस्र स्त्रियों को तृप्त कर सकता है, और तभी उसको शान्ति मिल सकती है।

प्रभावती वटी—इसके गुणों को देखकर आश्चर्य होता है। प्रत्येक रोग पर अनुपान योग से ही इसका प्रयोग है। आँखों की बीमारियों में नेत्रों में आँजने से, व्रणों और ग्रन्थियों में लेप करने से, ज्वर, शूल आदि में खाने से बहुत लाभ होता है। नेत्ररोग, उदररोग, रक्त-विकार, मूत्रकृच्छ्र, पराडना, सन्निपात आदि कौन सी बीमारियां हैं, जो इससे दूर न होती हों।

त्रिलोकचूडामणि रस—तूतिया की भस्म शायद ही किसी रस में डाली जाती हो किन्तु इसमें तूतिया का प्रयोग है। लाङ्गली गुञ्जा आदि का भी सम्बन्ध है, हुलहुल, नागदौन और धतूरे आदि की भावना देकर इसको इतना शक्तिशाली बनाया गया है कि यह वटबीज-प्रमाण मात्रा में देने पर भी सन्निपात में पड़े हुए मरणासन्न रोगी को यमराज से छुड़ा लेता है। डाकिनी-शाकिनी, प्रेत-राक्षस आदि की बाधाएँ भी इसके अस्तित्व में नहीं रहने पातीं। इसी तरह के और भी अनेक योग हैं, जो अनुभव में लाने योग्य हैं। हम वैद्य-संसार से — खास कर जैन वैद्यों से प्रार्थना करते हैं कि वह इस पर परिश्रम करके कुछ योग प्रचार में लावें, जिस से जनता का उपकार हो, तथा जैन वैद्यक ग्रंथों की तथा उनके रचयिता जैन आचार्यों की धाक संसार में पुनः उच्च पद प्राप्त करे।

इस भूमिका के लिखने में मेरे सहयोगी वैद्यराज पं० जयचन्द्रजी आयुर्वेदाचार्य, प्रधान-वैद्य, जैन औषधालय, कानपुर ने सहायता दी है, इसके लिये उनका आभारी हूँ।

अन्त में श्रीजिनेन्द्र देव से प्रार्थना है कि—

सर्वे वै मनुजाः भवन्तु सुखिनो ह्यैश्वर्ययुक्ताः सदा
पूर्णारोग्यसमन्विताः नयपराः दीर्घायुषः श्रीयुताः
सद्धर्माचरणे सदैव निरताः धैर्यानुकम्पान्विताः
सत्यक्षांतिविवेकदानविमलाचारप्रभाशालिनः ॥

विनीत—

कन्हैयालाल जैन, कानपुर

प्रकाशक की ओर से

जर्मनी, अमेरिका और इंगलैण्ड आदि पश्चिम राष्ट्रों के विख्यात विद्वान भी अब मानने लगे हैं कि संसार भर की चिकित्सा-प्रणालियों का जन्मदाता हमारा आयुर्वेद ही है। अपने दीर्घकालीन अविश्रान्त अनुसंधान के फलस्वरूप इतिहास-विशारदों का भी कहना है कि सर्वप्रथम बौद्धों ने चरक एवं सुश्रुत इन महान ग्रन्थों का अनुवाद पाली भाषा में करके जापान और चीन देशों में फैलाया तथा आज भी उन देशों की चिकित्सा-पद्धति आयुर्वेद-चिकित्सा-पद्धति से मिलती-जुलती है। इतना ही नहीं, अरबी भाषा के प्राचीन ग्रन्थों में भी अनेकत्र उल्लिखित चरकसुश्रुतों का उल्लेख दृष्टि-गोचर होता है।

आयुर्वेदीय औषधों को ढूंढ़ निकालने वाले हमारे जितेन्द्रिय समदर्शी ऋषि-महर्षियों ने जंगलों में वास करते हुये केवल लोकहित के लिये इस ओर गम्भीर विचार के साथ विपुल परिश्रम किया है। निर्दोष, चमत्कारी एवं अधिक चामत्कारी विशिष्ट औषधों को निर्माण करने के लिये स्वार्थ-शून्य विचार अधिक आवश्यक है। आयुर्वेद, ज्योतिष और मन्त्रवाद आदि विद्याएं वास्तव में लोककल्याण के लिये ही पैदा हुई हैं। आजकल के चिकित्सकों में उपर्युक्त वे गुण बहुत ही कम मात्रा में मिलते हैं। इसीलिये आज हमारे आयुर्वेद की दशा इतनी गिर गई है। एक बात और है। आज हमारे आयुर्वेद-विद्वानों में इस विषय में परिपूर्णता प्राप्त कर नवीन नवीन आविष्कारों द्वारा आयुर्वेद के महत्त्व को संसार में प्रकट करने योग्य पण्डित भी नहीं है! आजकल की आयुर्वेदाध्ययन की प्रणाली भी इस युग के अनुकूल नहीं है। अन्यान्य चिकित्सा-पद्धतियों में हमें प्रतिदिन नये-नये सुधार दृष्टिगत हो रहे हैं। परन्तु खेद की बात है कि हमारे बहुत से आयुर्वेदज्ञ अभी तक चरक-सुश्रुत युग का ही स्वप्न देख रहे हैं। ये सुधार नहीं चाहते हैं। अनुसंधान की ओर तो इनका लक्ष्य भी नहीं जाता। इसमें सन्देह नहीं है कि प्राचीन ऋषि-महर्षियों के प्रयोगों को ही थोड़ा-सा परिवर्तन कर अपने नाम से रजिस्ट्री कराने वाले वैद्य काफी मिलेंगे। किन्तु वास्तव में यह चीज उनको नहीं है। इस गुरुतर लोकोपकारी विद्या के लिये पसीना बहाने वाले हमारे यहाँ बहुत कम हैं। इसीलिये आज आयुर्वेद की अवस्था इतनी दयनीय हो गई है।

बहुधा बहुमूल्य एलोपैथिक औषध, सुई (इंजेक्शन) आदि के द्वारा आराम नहीं होने वाले सन्निपात, विषम ज्वर, क्षय, प्रसूत, संग्रहणी, मधुप्रमेह आदि असाध्य रोगों को हमारे पूर्वजों के द्वारा हजारों वर्ष के पूर्व ढूंढ़ निकाले गये मकरध्वज, जयमङ्गलरस, च्यवनप्राश, वसन्ततिलक एवं सुवर्णभस्म आदि अमूल्य औषध आसानी से दूर कर सकते हैं। आज भी विशुद्ध विष किस रोगी को किस परिमाण में देना चाहिये, इस बात का विशद ज्ञान बड़े

बड़े सर्जनों की अपेक्षा एक भारतीय वैद्य अधिक रखता है। इस संबंध में हमारे पूर्वजों ने पर्याप्त परिश्रम किया है। आयुर्वेद में नाड़ीज्ञान तो अपना एक खास स्थान रखता है। इस संबंध में 'द्विवेदी-अभिनन्दन ग्रन्थ' में प्रकाशित आयुर्वेदपंचानन पं० जगन्नाथ प्रसाद शुक्ल के द्वारा लिखित भारतीय चिकित्सा-शास्त्र की विशेषता—नाड़ी-परीक्षा-- शीर्षक लेख अवश्य पठनीय है। चरकसुश्रुतसदृश बहुमूल्य चिकित्सासंबंधी ग्रन्थ प्राचीन पाश्चात्य चिकित्सा-साहित्य में एक भी उपलब्ध नहीं है। इसीलिये प्रो० विलसन, सर विलीयम हंटर आदि पाश्चात्य विद्वानों ने भारतीय शल्यचिकित्सा, रसायनशास्त्र, धातृशास्त्र, सूचिकाभेदन, सर्पचिकित्सा, पशुचिकित्सा आदि विषयों की मुक्तकण्ठ से प्रशंसा कर आयुर्वेद चिकित्सा-प्रणाली को ही संसार की आदिम चिकित्सा-प्रणाली माना है।

हमारे पूर्वज शल्यचिकित्सा में पूर्ण निष्णात थे, इस बात को प्रमाणित करने के लिये मैं रायबहादुर महामहोपाध्याय श्रीमान् गौरीशंकर हीराचंद ओझा की 'मध्यकालीन भारतीय संस्कृति' से कुछ अंश यहां पर उद्धृत किये देता हूँ। इससे शायद हमारी उन्नति-प्राप्त प्राचीन शल्य-चिकित्सा से अनभिज्ञ वर्तमान प्रगतिशील पाश्चात्य शल्यचिकित्सा के अनन्य भक्त भारतीय विद्वानों की आँखें खुलेंगी। हाँ, मैं इस संबंध में इतना और कह देना चाहता हूँ कि जो प्राचीन शल्यचिकित्सा के विषय में विशेष देखना चाहें वे 'नागरी-प्रचारिणी पत्रिका', भाग ८, अंक १, २ में प्रकाशित 'प्राचीन शल्यतन्त्र' शीर्षक लेख अवश्य देखें।

"चीर फाड़ के शस्त्र साधारणतया लोहे के बनाए जाते थे, परन्तु राजा एवं सम्पन्न लोगों के लिये स्वर्ण, रजत, ताम्र आदि के भी प्रयुक्त होते थे। यन्त्रों के लिये लिखा है कि वे तेज खुरदरे, परन्तु चिकने मुखवाले, सुदृढ़, उत्तम रूपवाले और सुगमता से पकड़े जाने के योग्य होने चाहिये। भिन्न-भिन्न कार्यों के लिये शस्त्रों की धार, परिमाण आदि भिन्न-भिन्न होते थे। शस्त्र कुंठित न हो जाय, इसलिये लकड़ी के शस्त्रकोश (cases) भी बनाए जाते थे, जिनके ऊपर और अन्दर कोमल रेशम या ऊन का कपड़ा लगा रहता था। शस्त्र आठ प्रकार के—छेद्य, भेद्य, वेध्य (शरीर के किसी भाग में से पानी निकालना), एष्य (नाड़ी आदि में व्रण का ढूँढ़ना), आहार्य (दाँत या पथरी आदि का निकालना), विस्राव्य (रुधिर का विस्रवण करना), सीव्य (दो भागों को सीना), और लेख्य (चेचक के टीके आदि में कुचलना)—हैं। सुश्रुत ने यंत्रों (औजार, जो चीरने के काम में आते हों) की संख्या १०१ मानी है; परन्तु वाग्भट्ट ने ११५ मानकर आगे लिख दिया है कि कर्म अनिश्चित हैं, इसलिये यन्त्र संख्या भी अनिश्चित है; वैद्य अपने आवश्यकतानुसार यंत्र बना सकता है। शस्त्रों की संख्या भिन्न-भिन्न विद्वानों ने भिन्न-भिन्न मानी है। इन यंत्रों और शस्त्रों का विस्तृत वर्णन भी उन ग्रन्थों में दिया है। अर्श, भगंदर, योनिरोग, मूत्रदोष, आर्त्तवदोष, शुक्रदोष आदि रोगों के लिये भिन्न-भिन्न यन्त्र

प्रयुक्त होते थे। व्रणवस्ति, वस्तियंत्र, पुष्पनेत्र, (लिंग में औषध प्रविष्ट करने के लिये), शलाका-यंत्र, नखाकृति, गर्भशंकु, प्रजननशंकु (जीवित शिशु को गर्भाशय से बाहर करने के लिये), सर्प-मुख (सीने के लिये) आदि बहुत से यन्त्र हैं। व्रणों और उदरादि संबंधी रोगों के लिये भिन्न-भिन्न प्रकार की पट्टी बांधने का भी वर्णन किया गया है। गुदभ्रंश के लिये चर्मबंधन का भी उल्लेख है। मनुष्य या घोड़े के बाल सीने आदि के लिये प्रयोग में आते थे। दूषित रुधिर निकालने के लिये जोंक का भी प्रयोग होता था। जोंक की पहले परीक्षा कर ली जाती थी कि वह विषैली है अथवा नहीं। टीके के समान मूर्छा में शरीर को तीक्ष्ण अस्त्र से लेखन कर दवाई को रुधिर में मिला दिया जाता था। गति व्रण (Sinus) तथा अर्बुदों की चिकित्सा में भी सूचियों का प्रयोग होता था। त्रिकूर्चक शस्त्र का भी कुष्ठ आदि में प्रयोग होता था। आजकल लेखन करते समय टीका लगाने के लिये जिस तीन-चार सुइयों वाले औजार का प्रयोग होता है, वह यही त्रिकूर्चक है। वर्तमान काल का (Tooth-elevator) पहले दंत-शंकु के नाम से प्रचलित था। प्राचीन आर्य कृत्रिम दाँतों का बनाना और लगाना तथा कृत्रिम नाक बनाकर सीना भी जानते थे। दाँत उखाड़ने के लिये एनीपद शस्त्र का वर्णन मिलता है। मोतियाबिंद (Cataract) के निकालने के लिये भी शस्त्र था। कमलनाल का प्रयोग दूध पिलाने अथवा वमन कराने के लिये होता था, जो आजकल के (Stomach Pump) का कार्य देता था।" [पृष्ठ १२०—१२२]

इसी प्रकार भारतीय प्राचीन सर्पचिकित्सा और पशुचिकित्सा भी अपना विशिष्ट स्थान रखती हैं। सिकन्दर का सेनापति नियार्कस लिखता है कि यूनानी लोग सर्पविष दूर करना नहीं जानते, परन्तु जो मनुष्य इस दुर्घटना में पड़े, उन सब को भारतीयों ने दुरुस्त कर दिया।* दाहक्रिया एवं उपवास चिकित्सा से भी भारतीय पूर्णतया परिचित थे। शोथरोग में नमक न देने की बात भी भारतीय चिकित्सक हजार वर्ष पूर्व जानते थे। हमारे पूर्वजों का निदान उच्चकोटि का था। 'माधवनिदान' आज भी संसार में अपना खास स्थान रखता है। शुद्ध जल का संग्रह और व्यवहार कैसे किया जाय, औषध द्वारा कुओं का पानी साफ करना, महामारी फैलने पर कृमिनाशक औषधों के द्वारा स्वच्छता रखना आदि बातों का उल्लेख 'मनुस्मृति' में स्पष्ट मिलता है। आयुर्वेद में शरीर की बनावट, भीतरी अवयवों, मांसपेशियों, पुट्ठों, धमनियों और नाड़ियों का भी विशद वर्णन उपलब्ध होता है। वैद्य निघंटुओं में खनिज, वनस्पति और पशुचिकित्सा-संबंधी औषधों का बृहद् भाण्डार है। भारतीय आयुर्वेद-विशारदों को शरीर-विज्ञान का ज्ञान भी पर्याप्त था। अन्यथा वे स्त्री, पुरुष, पशु, पक्षी आदि की चित्ताकर्षक मूर्त्तियों को नहीं बना सकते थे। भारतीयों का रासायनिक ज्ञान आशातीत

* वाइज ; हिस्ट्री आफ मेडिसिन ; १७१

विस्मयकारक था। वे गंधक, शोरा आदि के तेजाब (Acid) जस्ता, लोहा, सीसा आदि के ऑक्साइड (Oxide) तथा कारबोनेट और सालफाइड आदि तैयार करते थे। इन रसायनों के द्वारा वे निराश रोगियों को पुनः स्वस्थ एवं वृद्धों को जवान बनाते थे। सूर्य की किरणें रोगोत्पादक कीटाणुओं को नष्ट करती हैं, इस बात को भारतीय पहले ही से जानते थे। श्वासरोग के लिये धतूरे का धुआँ पीने की विधि यूरोपियनों ने भारतीयों से ही सीखी है। 'विश्वबंधु' ५, अगस्त १९३४ के एक विद्वत्तापूर्ण लेख में लाहौर के कविराज श्रीहरिकृष्ण सहगल ने इस बात को सिद्ध कर दिखा दिया है कि हाल में अमेरिका में पुरुषसंयोग के विना ही जिन पिचकारियों द्वारा स्त्री गर्भवती बनाई गई है, उन पिचकारियों का उद्गम-स्थान भारतवर्ष ही है। भारतीय रसायन के द्वारा कृत्रिम सुवर्ण बनाना भी भली भाँति जानते थे। इन सब बातों का विशद वर्णन इस छोटे वक्तव्य में नहीं हो सकता है। इस संबंध में अंग्रेजी पढ़े-लिखे विद्वानों को The Ayurvedic System of Medicine by Kaviraj Nagendra Nath Sen, A History of Hindu Chemistry by Praphulla Chandra Roy, The Positive Sciences of the Ancient Hindus by Brajendra Nath Seal आदि पुस्तकों को अवश्य पढ़ना चाहिये।

संसार में जीवन से बढ़ कर प्यारी वस्तु दूसरी नहीं है। यही कारण है कि क्षुद्र से क्षुद्र कृमि-कीट से लेकर मनुष्य तक एवं जीर्ण रोगी से लेकर तन्दुरुस्त जवान तक सभी इस जीवन-रज्जु को अधिक लम्बी करने के उद्योग में सदैव प्रयत्नशील रहते हैं। जिस जीवन से ऐहिक और पारलौकिक दोनों सिद्धियाँ मिलती हैं, उसे दीर्घकाल तक स्वस्थ तथा कार्यक्षम बनाये रखने के लिये ही प्राचीन आर्यों ने आयुर्वेद का अनुसंधान किया था। हिन्दू, जैन एवं बौद्ध इन तीनों भारतीय प्रधान धर्मों के आयुर्वेदीय ग्रन्थों को मिलाने से हमारा आयुर्वेदीय साहित्य बहुत बढ़ जाता है। पूर्व में आयुर्वेद यहाँ की एक सर्वसुलभ विद्या थी। इसीलिये आज भी बड़े-बड़े सर्जनों एवं वैद्यों से आराम नहीं होनेवाले कई एक कठिन रोगों को एक दिहाती अशिक्षित सामान्य व्यक्ति अच्छा कर देता है। भारत की उर्वरा भूमि ने इसके लिये सर्वत्र बहुमूल्य ओषधियाँ भी जुटा रखी हैं। यह भी ध्यान में रखने की बात है कि हमारे पूर्वजों ने स्पष्ट घोषित कर दिया है कि जो व्यक्ति जहाँ पैदा हुआ हो, उसे वहीं की ओषधियाँ अधिक लाभकारी होती हैं। इसके लिये केवल एक ही दृष्टांत पर्याप्त है कि कुनाइन सल्फेट आदि औषध इंगलैण्ड आदि शीतप्रधान देशों में जितना काम करते हैं, उतना उष्णप्रधान हमारे भारतवर्ष में नहीं कर पाते। अस्तु, लेख बहुत बढ़ रहा है, अतः पाठकों का ध्यान प्रस्तुत विषय पर आकर्षित करता हूँ।

यह बात यथार्थ है कि प्रस्तुत 'वैद्यसार' के प्रयोग आचार्य पूज्यपाद के स्वयं के नहीं हैं। फिर भी इसमें सन्देह नहीं है कि इन प्रयोगों का आधार पूज्यपादजी का वही मूल

ग्रन्थ है, दुर्भाग्य से जिसका पता अभीतक हम लोग नहीं लगा सके हैं। इस बात को जैन ही नहीं, जैनेतर विद्वान् भी स्वीकार करते हैं कि आचार्य पूज्यपाद अन्यान्य विषयों के समान आयुर्वेद के भी एक अद्वितीय विद्वान् थे। खैर, इस विषय को मैं यहाँ पर बढ़ाना नहीं चाहता हूँ। इसी प्रकार का एक संग्रह भवन में और है। इसमें लगभग ६५ प्रयोग हैं। इन प्रयोगों में भी प्रायः सर्वत्र पूज्यपादजी का उल्लेख मिलता है। 'वैद्यसार' के समान इसमें भी रसों की ही बहुलता है। हाँ, चूर्ण, घृत, लेप, तैल, गुटिका, अंजन आदि का भी थोड़ा-थोड़ा समावेश है। प्रति बहुत अशुद्ध होने से वे प्रयोग इस 'वैद्यसार' में गर्भित नहीं किये जा सके। इनका प्रकाशन दूसरी शुद्ध प्रति की प्राप्ति से ही हो सकता है। यों तो 'वैद्यसार' की प्रति भी अशुद्ध ही रही। फिर भी यत्र-तत्र यह ठीक कर ली गई है। इस संग्रह का नाम 'वैद्यसार' इस आधार पर रखा गया है कि इसकी हस्तलिखित मूल प्रति में यही नाम अंकित था। वैद्यसार के संपादन एवं अनुवाद के संबंध में मैं अपनी ओर से कुछ भी न कह कर इसके गुणदोषों की जाँच का भार विज्ञ पाठकों को ही सौंप देता हूँ।

अन्त में निःस्वार्थभाव से—केवल साहित्यसेवा की भावना से इस ग्रन्थ का अनुवाद तथा संपादनकार्य को संपन्न करनेवाले सुयोग्य वैद्य, आयुर्वेदाचार्य श्रीमान पं० सत्यंधरजी जैन, काव्यतीर्थ, छपारा एवं मेरी प्रार्थना को सहर्ष स्वीकार कर इसके लिये पाण्डित्यपूर्ण भूमिका लिखनेवाले सुविख्यात वैद्यराज, वैद्यरत्न श्रीमान पं० कन्हैयालालजी, आयुर्वेदभूषण, कानपुर को मैं प्रकाशक की ओर से हृदय से धन्यवाद देता हूँ, जिन्होंने ग्रन्थ संशोधन में भी पर्याप्त सहायता की है। वास्तव में उपर्युक्त विद्वानों के सहयोग के बिना यह गुरुतर कार्य इतना सुन्दर संपन्न नहीं हो सकता था।

वीर सं० २४६८, माघ शुक्ल १०

के० भुजबली शास्त्री

विषय-सूची

		पृष्ठ सं०
१	अजीर्ण पर अजीर्णकण्टक रस	५४
२	अजीर्णादि पर अर्धनारीश्वर रस	३०
३	अजीर्णादि पर प्रभावती वटी	७७
४	अग्निमांद्य पर अग्निकुमार रस	१३
५	अतीसार पर महासेतु रस	७३
६	अनेक रोग पर त्रिलोकचूडामणि रस	७९
७	अमृतार्णव रस	१००
८	अम्लपित्तादि पर सूतशेखर रस	३२
९	अर्शनाशक योग	९५
१०	अर्शरोग पर अर्शनाशक लेप	९५
११	आमदोषादि पर उदयमार्तण्ड रस	२३
१२	आमवात पर रसादि योग	९८
१३	आमादि पर मेघनाद रस	१७
१४	उदररोग पर राजचंडेश्वर रस	१४
१५	उदररोग पर शंखद्राव	२८
१६	उन्मत्ताख्य नस्य	९९
१७	उपदंशादि पर कंदर्प रस	१२
१८	कासादि पर गगनेश्वर रस	४१
१९	कुष्ठ पर तालकेश्वर रस	७२
२०	कुष्ठ पर ताण्डवाख्य रस	७१
२१	कुष्ठ पर महातालेश्वर रस	६८
२२	कुष्ठ पर विजय रस	३७
२३	कुष्ठरोग पर मेदिनीसार रस	४४
२४	कुष्ठादि पर वज्रपाणि रस	३७
२५	कुष्ठादिपर चर्मांतक रस	३८
२६	कुष्ठादि पर महारसायन	९९
२७	गुल्मरोग पर वातगुल्म रस	१०६

		पृष्ठ सं०
२८	गुल्मादि पर अग्निकुमार रस	९२
२९	गुल्मादि पर भैरवी रस	६०
३०	गुल्मादि पर लवणपंचक योग	६७
३१	ग्रहणीरोग पर अर्कादि योग	९६
३२	ग्रहणी रोग पर ग्रहणीकपाट रस	५६
३३	ग्रहण्यादि पर कनकसुन्दर रस	८८
३४	ग्रहण्यादि पर रतिलीला रस	६४
३५	ग्रहण्यादि पर रामबाण रस	३२
३६	चिन्तामणि गुटिका	१०७
३७	जलोदर पर शूलगजांकुश रस	८६
३८	जलोदरादि पर पंचाग्नि गुटिका	११
३९	जीर्णज्वर पर औदुम्बरादि योग	९७
४०	जीर्णज्वरादि पर घोड़ाचोली रस	१८
४१	ज्वर पर लघुज्वरांकुश	४६
४२	ज्वरातिसारादि पर जयसंभव गुटिका	६८
४३	ज्वरातीसार पर आनंदभैरव रस	९५
४४	ज्वरादि पर कलाधर रस	८७
४५	ज्वरादि पर गजसिंह रस	६६
४६	ज्वरादि पर ज्वरकण्टक रस	५१
४७	ज्वरादि पर ज्वरकुठार रस	४५
४८	ज्वरादि पर ज्वरांकुश रस	१४
४९	ज्वरादि पर प्रतापमार्तण्ड रस	८९
५०	ज्वरादि पर प्राणेश्वर रस	८५
५१	ज्वरादि पर प्राणेश्वर रस	१०१
५२	ज्वरादि पर महाज्वरांकुश रस	२७
५३	ज्वरादि पर लघुज्वरांकुश	७९
५४	ज्वरादि पर संजीवनी रस	९१
५५	द्राक्षादि क्वाथ	९४
५६	द्वितीय इच्छाभेदी रस	२०
५७	नवज्वर पर करुणाकर रस	१६

		पृष्ठ सं०
५८	नवज्वर पर नवज्वरहर वटिका	१६
५९	पारदादि योग	११०
६०	पाण्डुकामलादि पर उदयभास्कर रस	३८
६१	पाण्डुरोग पर मण्डूर त्रिफलावसु	१०३
६२	पित्तदाह पर धान्यादि योग	१०८
६३	पित्तदाह पर दूसरा योग	१०८
६४	पित्तरोग पर चन्द्रकलाधर रस	५८
६५	पूर्णचन्द्र रसायन	९८
६६	प्रदरादि पर पंचबाण रस	५३
६७	प्रमेहचन्द्रकला रस	३१
६८	प्रमेह पर द्वितीय पंचवक्त्र रस...	४३
६९	प्रमेह पर प्रमेहगजकेसरी रस	२४
७०	प्रमेह पर वंगभस्म	३
७१	प्रमेह पर वंगेश्वर रस	८१
७२	प्रमेह पर मेहबद्ध रस	७४
७३	प्रमेह पर मेहारि रस	७३
७४	प्रमेह पर राजमृगांक रस	८
७५	प्रमेहादि पर कर्पूर रस	३
७६	बहुमूत्र पर तारकेश्वर रस	२५
७७	भगंदर पर रसादि योग	३६
७८	भेदिज्वरांकुश रस	२६
७९	मन्दाग्नि पर उदयमार्तण्ड रस	८७
८०	मन्दाग्नि पर कालाग्नि रस	५३
८१	मन्दाग्नि पर कालाग्निरुद्र रस	६२
८२	मन्दाग्नि पर बडवाग्नि रस	२५
८३	मन्दाग्न्यादि पर अमृत गुटिका	८८
८४	मूत्रकृच्छ्र पर कृच्छ्रांतक रस	७
८५	मूत्रकृच्छ्रादि पर वंगेश्वर रस	४९
८६	रक्तदोष पर तालकेश्वर रस	२५
८७	रक्तपित्तादि पर चन्द्रकलाधर रस	४७

		पृष्ठ सं०
८८	रसादिमर्दन	९८
८९	लूताविष चिकित्सा	१०८
९०	वाजीकरण पर कामांकुश रस	७०
९१	वाजीकरण पर रतिविलास रस	२२
९२	वाजीकरण पर रतिलीला रस	३१
९३	वाजीकरण पर रतिलीला रस	१०४
९४	वाजीकरण पर त्रिलोकमोहन रस	३३
९५	वाजीकरणादि प्रयोग पर मदनकाम रस	७५
९६	वाजीकरणादि पर लीलाविलास रस	२३
९७	वातरोग पर कल्पवृक्ष रस	५९
९८	वातरोग पर कुठार रस	६९
९९	वातरोग पर बडवानल रस	६४
१००	वातरोग पर स्वच्छन्द-भैरव रस	३४
१०१	वातरोग पर रसादि योग	५४
१०२	विनोदविद्याधर रस	१०९
१०३	विषमज्वर पर चतुर्थज्वरहर वटिका	१२
१०४	विषमज्वर पर चन्द्रकान्त रस	४८
१०५	विषमज्वर पर प्रभाकर रस	९०
१०६	विबन्ध पर इच्छाभेदी रस	१८
१०७	विबन्ध पर इच्छाभेदी रस	५१
१०८	विबन्ध पर इच्छाभेदी रस	६०
१०९	विबन्ध पर चिंतामणि गुटिका	१०३
११०	विबन्ध पर जयपाल योग	२८
१११	विबन्ध पर नाराच रस	८४
११२	विबन्ध पर प्रथम इच्छाभेदी रस	१९
११३	विबन्ध पर वज्रभेदी रस	५०
११४	विबन्ध पर विरेचक तैल	८
११५	विबन्ध पर विरेचकतिक्तकोशातकी योग	१९
११६	विबन्ध पर विरेचन वटी	८९
११७	व्रणादि पर अपामार्गादि योग	१०१

		पृष्ठ सं०
११८	व्रणादि पर जात्यादि घृत	१००
११९	शीतवात पर अग्निकुमार रस	४५
१२०	शीतज्वर पर कारुण्यसागर रस	४१
१२१	शीतज्वर पर बडवानल रस	६३
१२२	शीतज्वर पर शीतकण्टक रस	५२
१२३	शीतज्वर पर शीतकुठार रस	५२
१२४	शीतज्वर पर शीतकेशरी रस	२८
१२५	शीतज्वर पर शीतभंजी रस	८३
१२६	शीतज्वर पर शीतभंजी रस	३५
१२७	शीतज्वर पर शीतमातंगसिंह रस	८४
१२८	शीतज्वर पर शीतांकुश रस	६
१२९	शीतज्वर पर शीतांकुश रस	२९
१३०	शीतज्वर पर श्वेतभास्कर रस	५६
१३१	शीतज्वरादि पर स्वच्छन्द भैरवी रस	६१
१३२	शूलरोग पर ज्वालामुख रस	९
१३३	शूल पर शूलकुठार रस	५५
१३४	शूलादि पर तालकादि रस	५७
१३५	शूलादि पर शूलकुठार रस	३०
१३६	शूलादि पर शूलकुठार रस	५९
१३७	श्वासकासादि पर गजसिंह रस	२०
१३८	श्वासकासादि पर सूतकादि योग	२१
१३९	श्वास पर इन्द्रवारुणी योग	१०३
१४०	श्वास पर पारदादि योग	१०८
१४१	श्वास पर सूर्यावर्त्त रस	१०९
१४२	श्वासादि पर अमृतसंजीवन रस	८३
१४३	श्वासादि पर शिलातल रस	४३
१४४	षडांग गुग्गुल	१०७
१४५	सन्निपात पर गंधकादि योग	९६
१४६	सन्निपात पर पंचवक्त्र रस	४२
१४७	सन्निपातादि पर भूतादिभैरव रस	१४

		पृष्ठ सं०
१४८	सन्निपात पर यमदण्ड रस	९२
१४९	सन्निपातादि पर वीरभद्र रस	३४
१५०	सन्निपात पर सन्निपातगजांकुश	६६
१५१	सन्निपात पर सन्निपातविध्वंसक रस	४२
१५२	सन्निपात पर सन्निपातांजन	३५
१५३	सन्निपात पर सन्निपातान्तक रस	१०
१५४	सन्निपातादि पर सिद्धगणेश्वर रस	६५
१५५	स्फोटादि पर त्रिलोकचूडामणि रस	४६
१५६	सर्वज्वर पर चन्द्रोदय रस	१५
१५७	सर्वज्वर पर ज्वरांकुश रस	८०
१५८	सर्वज्वर पर मृत्युञ्जय रस	८२
१५९	सर्वज्वर पर विद्याधर रस	९१
१६०	सर्वरोग पर प्रतापलंकेश्वर रस	३६
१६१	सर्वरोग पर मरीचादि वटी	८८
१६२	सर्वरोग पर मृत्युंजय रस	१०५
१६३	सर्वरोग पर रसराज रस	६७
१६४	सर्वव्याधि पर उदयादित्यवर्ण रस	३९
१६५	हस्तिकर्ण तैल	१०९
१६६	हृद्रोगादि पर सिद्ध रस	२९
१६७	क्षयकासादि पर अग्नि रस	२१
१६८	क्षयकासादि पर अग्नि रस	२६
१६९	क्षयरोग पर वज्रेश्वर रस	५
१७०	क्षयादि पर वज्रेश्वर रस	९३
१७१	त्रिदोष पर महारस सिन्दूर	१
१७२	त्रिदोषपारदादि योग	१०५

वैद्य-सारः

१—त्रिदोषे महारस-मिन्दूरम्

शुद्धं पारदषड्गुणोक्तसुरभि-जीर्णीकृतं तद्रसं
युक्त्योक्तं नवसारकं मणिशिला-पंचांशकं टंकणं ।
वज्रक्षारकलांशकैर्विमिलितं गंधार्धभागं क्रमात्
सर्वं खल्वतले विमर्द्य शुभगे योगादिभिर्युते दिने ॥१॥
कन्याभास्करहंसपाद्यनलकैर्जंबीरनीरार्जुनी
गोजिह्वानखरंजितं फणिलतापार्थैश्च संमर्दितं ।
तत्कल्कातपशोषितं च सर्वं संरुध्य कूप्यां तथा
यंत्रे त्र्यंगुलवालुकास्थितयुतं तत्पूरितं भांडकं ॥२॥
पक्वं द्वादशयामकं क्रमगतं चोद्धृत्य सूतं गतं
खल्वे पूर्वकृतं विधाय निखिलद्रव्यान्वितं मर्दयेत् ।
प्राग्वत् कूपिकसंस्थितं दिनयुगं पक्त्वा क्रमाग्नौ शनैः
पश्चादागतसिद्धसूतमखिलं संमर्दयेत् तद्द्रवैः ॥३॥
यंत्रोक्तक्रमसिद्धकैः कृतचतुर्विंशानुयामं क्रमात्
सूतं पक्वमिति त्रिवारमुचितं सिद्धं रसेन्द्रं बुधैः ।
एकं द्वि त्रि यथाक्रमैः दशशताधिक्यात् सहस्राद् गुणैः
तस्मात् सर्वगुणानुयोगमधिकं युक्त्या त्रिवारं पचेत् ॥४॥
पक्त्वादाय सुसिद्धमंगलमिदं पूजोपचारैः क्रमम्
उद्यद्भास्करसंनिभं च विमलं तत्सूर्यभारंजितं ।
सिद्धं सूतरसायनं गदहरं धर्मार्थकामप्रदं
तत्सूतं मरिचाज्ययुक्तमनिलं हन्यात् सिताज्यैर्जयेत् ॥५॥
पित्तं क्षौद्रकणान्विते कफगदं व्योषार्कक्षारेण सह
मन्दाग्नि स च सन्निपातसकलं योगानुपानैर्जयेत्
श्वासं कासमरोचकं क्षयहरं कामाग्निसंदीपनं
तुष्टिं पुष्टिबलावहं सुखकरं लावण्यहेमप्रभं ॥६॥
नित्यं सेवितशाश्वतं रसवरं योगोत्तरं सर्वदा
रोगात् सज्जनरक्षणार्थभिषजः कीर्तिं करोति सदा।

सर्वं लोकहितंकरं विरचितं शास्त्रानुसारैः क्रमात्
विख्यातं करुणाकरं रसवरं श्रीपूज्यपादोदितम् ॥७॥

टीका—दोषरहित तथा छः गुणों से युक्त, स्वच्छ, शुद्ध तथा शोधन-मारण करने वाले द्रव्यों से जीर्ण, अर्थात् आठ संस्कार अथवा अट्ठारह संस्कार से शुद्ध किया हुआ पारा, शुद्ध नौसादर तथा शुद्ध मैनशिला ये तीनों समान भाग तथा पारे से पाँचवे भाग सुहागा, पारे से १६ वाँ भाग शातलाक्षार (थूहर) तथा पारे से आधा शुद्ध गंधक (आंवलासार गंधक) सबको मिला कर शुभ दिन, शुभ नक्षत्र शुभ मुहूर्त में खरल में मर्दन करके घीकुमारी (गंवारपाठा), आक का दूध, हंसराज (तिपतिया), चित्रक, जंबीरी नींबू का रस तथा नक्रिक, गोभी, नखरंजित (एक सुगंधित पदार्थ), नागरबेल (पान), कोहा—इनके स्वरस में एक-एक दिन अलग-अलग खूब मर्दन करके घाम में सुखा करके काँच की शीशी में बंद करे तथा वालुकायंत्र में शीशी के नीचे ३ अंगुल वालुका रहे फिर शीशी के मुंह तक वालुका भर देवे और उसको क्रम से मन्द, मध्य, खर आँच १२ प्रहर तक देवे; फिर उस शीशी में से वह पारा निकाल कर उसे उपर्युक्त सब औषधों के स्वरस में अलग-अलग मर्दन करे तथा दो दिन तक फिर वालुकायंत्र में पकावे। पाक होने पर पारा निकाल कर उन्हीं द्रव्यों के स्वरस में घोंट एवं सुखा कर वालुकायंत्र में पकावे तथा २४ प्रहर तक बराबर आँच दे। इस प्रकार तीन बार पाक करे तो यह योग सहस्र गुणों से युक्त होता है। इसलिये इसको युक्तिपूर्वक तीन बार अवश्य ही पकावे। यह पका हुआ पारा सिद्ध होने पर मंगलमय है तथा इसको इष्टदेव की पूजा करके सेवन करे। यह उदय हुए सूर्य के रङ्ग के समान स्वच्छ, उत्कृष्ट सूर्य की आभा-सहित सिद्ध पारद रसायन (महारससिन्दूर) अनेक रोगों को हरनेवाला धर्म, अर्थ, काम को देनेवाला होता है! काली मिर्च तथा घी के साथ खाने से वायु-रोग शान्त होते हैं तथा पीपल और मधु के साथ सेवन करने से कफ-जन्य रोग शान्त होते हैं। सोंठ, मिर्च, पीपल और अर्कक्षार (अकौने के क्षार) के साथ सेवन करने से मंदाग्नि शान्त होती है, तथा अनेक अनुपान के योग से सम्पूर्ण सन्निपातों को और श्वास, कास अरोचक, क्षय को जीतता है, कामाग्नि को दीपन करनेवाला, शरीर को हृष्ट-पुष्ट करनेवाला, बल को देनेवाला, सुखप्रद, सुन्दरता को देनेवाला यह सुवर्ण के समान कान्तिवाला योग नित्य ही सेवन करना चाहिये। यह योग सज्जनों की रक्षा करने एवं वैद्यों को कीर्त्ति का देनेवाला तथा सम्पूर्ण लोक का हित करनेवाला शास्त्र के अनुसार श्रेष्ठ श्रीपूज्यपाद स्वामी ने कहा है। यह प्रसिद्ध और श्रेष्ठ रस है।

२—प्रमेहे वंग-भस्म

शरावे निक्षिपेत् शुद्धं वंगं पलचतुष्टयम् ।
दीप्यकं तु चतुःप्रस्थं द्विप्रस्थं रजनीरजः ॥१॥
विलीनवंगं तज्ज्ञात्वा गालयेद्भस्मवद्भवेत् ।
विदारीकंदो मुसली गोक्षुरो भूमिशर्करा ॥२॥
सुरवल्ली सारकः साम्यमेतेषां द्विगुणा सिता ।
वंगभस्म पणैकं तु योजयित्वा तु भक्षयेत् ॥३॥
चुलुकं सितोदकं पानं द्विदलैश्चाम्लवर्जितम् ।
सर्वप्रमेहविध्वंसि पूज्यपादनिरूपितम् ॥४॥

टीका—एक मिट्टी के गहरे सरावे में अथवा हांडी में शुद्ध वंग (रांगा) को १६ तोला लेकर डाल देवे और उसके नीचे अग्नि जलावे। जब वह गल जाय, तब उसमें ५२ छटांक जीरे का चूर्ण पीस कर डाले तथा ३२ छटांक हल्दी का चूर्ण डालता जाय। इस प्रकार डालते रहने से रांगे का भस्म तैयार हो जायगा। जब वंगभस्म वारितर हो जाय (जल में तैर जावे अर्थात् नीचे नहीं डूबे) तब नीचे लिखे अनुपान से सेवन करे: यथा, विदारीकंद, मुसली, गोखुरू, भूमिशर्करा, गुर्च का सत ये पाँचों तीन तीन माशे लेकर सब का चूर्ण करे तथा सबके बराबर उत्तम मिसरी मिलाकर चूर्ण तैयार कर ले और फिर १ पण (५ रत्ती) वंग-भस्म लेकर उसमें मिलावे तथा प्रतिदिन प्रातःकाल और सायंकाल मिसरी की चाशनी से सेवन करे, तथा उसके ऊपर एक चुल्लू मिसरी का पानी पीवे तथा खटाई और दाल की बनी चीजें नहीं सेवन करे। प्रमेहों का नाश करनेवाला यह योग श्रीपूज्यपाद स्वामी का कहा हुआ है।

३—प्रमेहादौ कर्पूररसः

शुद्धं सूतं पलमितं समादाय पुनस्ततः ।
सैन्धवं स्फाटिकं सम्यक् शुद्धं द्विचतुः पलं ॥१॥
चूर्णयित्वाथ जंबीररसेन परिमर्दयेत् ।
तस्योपरि रसं क्षिप्त्वा समालोड्य विमीलयेत् ॥२॥
हंडिकायां च तत्कल्कं क्षिप्त्वोपरि शरावकं ।
निरुध्य संधिं बध्नीयात् दृढं मृण्मयकर्पटैः ॥३॥

रवियामं पचेद्यत्नादूर्ध्वं भांडगतं भवेत्।
तच्चूर्णं रूपिणं सूतं समादाय पुनस्ततः ॥४॥
नवसारं क्षिपेत् सार्धनिष्कमात्रं ततः पुनः।
प्रथमं नवसारं तु चूर्णयित्वाथ भस्मकं ॥५॥
विचूर्ण्य मेलनं कृत्वा काचकूप्यां प्रपूरयेत्।
कूपीद्वारं तु बध्नीयात् खट्या सूत्रेण बंधयेत् ॥६॥
द्वारं विहाय संपूर्य मृदा सम्यक् प्रलेपयेत्।
हंड्यामथ च वालुकया चतुरङ्गुलमात्रकम् ॥७॥
प्रपूर्य कूपिमूर्धानमूर्ध्वं कृत्वा क्षिपेदथ।
शेषं वालुकयापूर्य चतुरङ्गुलसंमितं ॥८॥
ऊर्ध्वदेशं शरावेण समाच्छाद्याथ लेपयेत्।
संधिं मृदा दृढं यत्नाच्चुल्ल्यामारोप्य यंत्रकम् ॥९॥
दिवारात्रं पचेद्धीमान् चाग्नौ तत्क्रमवर्द्धनात्।
ज्वालयेन्निर्निमेषेण पारदं च परीक्षयेत् ॥१०॥
दृढं कर्पूररूपेण रसः कर्पूरतां व्रजेत्।
मेहानां विंशतिं हन्यात् चतुराशीतिवातजान् ॥११॥
स्फोटं श्वासं च कासं च पांडुं प्लीहं हलीमकम्।
संधिशोफे क्षीणबले संधिवाते कफग्रहे ॥१२॥
अर्दिते पक्षघाते च हनुवाते गलग्रहे।
चित्तभ्रमे भग्नकामे निःप्रतीते तुनीहते ॥१३॥
श्वेतकुष्ठे दद्रुरोगे प्रदातव्यं भिषग्वरैः।
गुंजामात्रमिदं खादेत् शर्करामधुनाथवा ॥१४॥
दुग्धं सेव्यं दिने तस्मात् द्राक्षाखर्जूरकं तथा।
नारंगं नारिकेलं च कदलीफलकं तथा ॥१५॥
तक्रसारः प्रदातव्यः रसे च कुपिते तथा।
योगोऽयं प्रयुक्तः स्यात् पूज्यपादेन स्वामिना ॥१६॥

टीका—शुद्ध पारा ८ तोला लेकर तैयार रक्खे, फिर संधा नमक और फिटकरी दोनों को शुद्ध कर क्रम से ८ तोला और १६ तोला लेकर दोनों चूर्ण कर जंबीरी नींबू के रस में मर्दन कर लुगदी बनावे और फिर उस लुगदी में उस पारे को मिला देवे; फिर एक पक्की हांडी में कपड़मिट्टी करके उसके भीतर उस लुगदी को रख कर ऊपर एक सरावा ढांक कर

पक्की कपड़मिट्टी करे और उसको १२ प्रहर एक आँच देवे, और ठंढा होने पर ऊपर लगा हुआ जो सफेद रंग का हो उसको यत्नपूर्वक निकाल लेवे, और फिर उस निकाले हुए द्रव्य में ४॥ माशा (६ आने भर) नौसादर मिलावे। दोनों को खूब पीसकर काँच की शीशी में बंद करे। कुप्पी का मुख खड़िया मिट्टी से अच्छी तरह बंद कर, और फिर हांडी में शीशी का ऊँचा मुख करके वालू भर देवे, परन्तु वालू इतना भरे कि शीशी की तली ४ अंगुल खाली रहे। ऊपर से एक सरावा ढाँक देवे और कपड़मिट्टी कर देवे तथा चूल्हे पर चढ़ा देवे तथा एक दिनरात पकावे; किन्तु आँच क्रम से हीन, मध्यम, तीखी देवे, और जब स्वांग शीतल हो जाय तब खोलकर कपूर के समान जमा हुआ जो पारा है, वह निकाल लेवे; बस इसी का नाम रस-कपूर है। यह रस-कपूर २० प्रकार के प्रमेह, ८४ प्रकार के वातरोग, फोड़ा, श्वांस, खाँसी, पांडुरोग, प्लीहा—हलीमक, संधिशोथ, क्षीणता, संधियों की जकड़ाहट, कफ की जकड़ाहट, अर्दित रोग, पक्षाघात, हनुवात, गलग्रह, चित्तभ्रम, अनिच्छा (नपुंसकता) इत्यादि रोगों में वैद्यवरों को देना चाहिये। इसकी मात्रा एक रत्ती है। इसको मिसरी तथा शहद के साथ देना चाहिये। इसके ऊपर दूध का सेवन अवश्य करना चाहिये, तथा इसके पथ्य में मुनक्का, खजूर, नारङ्गी, नारियल, केला अवश्य देना चाहिये। रसधातु के कुपित होने पर तक्र देना चाहिये। यह उत्तम योग पूज्यपाद स्वामी ने कहा है।

४—क्षयरोगे वज्रेश्वररस:

कर्षं खर्परसत्त्वं च पलमात्रे हेमविद्रुते।
निक्षिपेच्चूर्णयेत् खल्वे पणिनष्कौ सूतगंधकौ ॥१॥
अंकोलकं कुणीबीजं तुल्यांशं तालकश्चतुः।
मुक्ताप्रवालचूर्णं तु प्रतिनिष्काष्टकं क्षिपेत् ॥२॥
मृतलौहस्य निष्कौ द्वौ टंकणस्याष्टनिष्ककं।
द्वौ निष्कौ नीलकुटक्यो वराटानां च विंशतिः ॥३॥
शीसःनिष्कत्रयं योज्यं सर्वं खल्वे विमर्दयेत्।
चांगेयम्लेन यामैकं जंबीराम्लैः दिनद्वयम् ॥४॥
रुद्ध्वा पुटाष्टकं देयं हस्तमात्रं तुषाग्निना।
जंबीरोत्थद्रवैरेव पिष्ट्वा पिष्ट्वा पुटे पचेत् ॥५॥
ततो वनोत्पलैरेव देयं गजपुटं महत्।
आदाय चूर्णयेत् श्लक्ष्णं चूर्णार्धं शुद्धगंधकं ॥६॥

गंधार्धं मरिचं चूर्णमेकीकृत्य द्विमाषकं ।
लेहयेन्मधुना सार्धं नागवल्लीरसेन सह ॥७॥
पथ्यं तु प्रतियामं स्यादभुक्ते विषवद्भवेत् ।
रसो वज्रेश्वरः ख्यातः क्षयपर्वतभेदकः ॥८॥
उत्तमो राजयोगोऽयं पूज्यपादेन भाषितः ।

टीका—एक तोला खपरिया का सत्व लेकर छह माशे शुद्ध सोने को गला कर उसमें डाल दे; फिर दोनों को चूर्ण कर छः निष्क (१॥ तोला) पारा गंधक तथा अंकोलक १॥ तोला मालकांगनी, १॥ तोला शुद्ध तवकिया हरताल तथा अभ्रकभस्म, कांत लौहभस्म, ताम्र-भस्म चार-चार निष्क (१ तोला) तथा शुद्ध मोती और शुद्ध प्रवाल आठ-आठ निष्क (२ तोला) लेकर तथा लौहभस्म २ निष्क एवं सुहागा शुद्ध आठ निष्क (२ तोला) नील और कुटकी २ तोला, शुद्ध पीली गठीली कौड़ी २० तोला, शुद्ध शीशा भस्म तीन निष्क लेकर सबको एकत्र कर चांगेरी के रस में एक प्रहर तक घोंटे, फिर सबको टिकिया बनाकर संपुट में बंदकर एक हाथ का गड्ढा करके तुष की अग्नि के द्वारा पुट देवे और फिर जंबीरी नींबू के रस की भावना देवे। इस प्रकार आठ पुट देवे फिर आठ पुट के बाद जंबीरी नींबू के रस की भावना देकर जंगली कंडों से १ गजपुट देवे। फिर सब को चूर्ण करके चूर्ण से आधा शुद्ध आँवलासार गंधक लेवे, तथा गंधक से आधी काली मिर्च लेकर सबको एकत्र कर तीन तीन माशे शहद और पान के रस के साथ प्रातःकाल एक बार सेवन करें एवं इस दवाई के सेवन करने पर प्रत्येक पहर के बाद पथ्यपूर्वक भोजन करे। यदि इस औषध के सेवन करने पर पथ्य सेवन न किया जायगा तो यह औषध विष के समान काम करेगी। यह वज्रेश्वर रस क्षय अर्थात् राजयक्ष्मा-रूप पर्वत का नाश करने के लिये वज्र के समान है। यह उत्तम राजयोग पूज्यपाद स्वामी का कहा हुआ है।

५—शीतज्वरे शीतांकुशरसः

तुत्थमेकं त्रयं तालं शिलाचैव चतुर्गुणं ।
धत्तूरस्य रसैर्मर्द्यः कुक्कुटीपुटपाचितः ॥१॥
शीतांकुशरसो नाम शीतज्वरनिवारणः ।
शीतज्वरविषघ्नोऽयं पूज्यपादेन भाषितः ॥२॥

टीका—१ भाग शुद्ध तूतिया, ३ भाग शुद्ध तवकिया हरताल, ४ भाग शुद्ध मैनशिला, ४ भाग जवाखार सबको एकत्र कर धतूरे के रस से मर्दन कर कुक्कुट पुट में पका कर रत्तियों के प्रमाण में सेवन करे, तो इससे शीतज्वर दूर होता है। यह शीतज्वररूपी विष को नाश करनेवाला पूज्यपाद स्वामी ने कहा है।

६—मूत्रकृच्छ्रे कृच्छ्रांतकरसः

पारदाभ्रकवैक्रान्तहेमकांतनिगंधकम्।
मौक्तिकं विद्रुमं चैव प्रत्येकं स्यात् पृथक् पृथक् ॥१॥
समं निंबूरसैर्मर्द्यं मूषायां संनिरोधयेत्।
पंचविंशतिपुटान् दद्यात् ततः सर्वं विचूर्णयेत् ॥२॥
माषमात्ररसं दद्यान्नवनीतसितायुतं।
विदारी तुलसी रंभा जाती बिल्वं शतावरी ॥३॥
मुस्ता निदिग्धिका वासा धात्री छिन्नोद्भवा कुशा।
पाषाणभेदो सर्पाक्षी चेक्षुकृष्णा त्रिकंटकं ॥४॥
एर्वारुबीजयष्ट्यमिधामैला चंदनवालुकं।
सर्वं संचूर्णय यत्नेन क्वाथयित्वा पिबेदनु ॥५॥
मूत्रकृच्छ्राश्मरीमेहवातपित्तकफामयान्।
क्षयाद्यखिलरोगांश्च नाशयेन्नात्र संशयः ॥६॥
रसः कृच्छ्रांतको नाम पिटिकादिव्रणान् जयेत् ॥

टीका—शुद्ध पारा, अभ्रक भस्म, वैक्रांतमणि भस्म, सुवर्ण भस्म, कान्तलौह भस्म, शुद्ध गंधक, शुद्ध मोती, शुद्ध मूंगा, ये सब चीजें अलग-अलग बराबर-बराबर लेकर नींबू के स्वरस में मर्दन कर मूषा में बंद कर पचीस पुट देवे। प्रत्येक पुट में नींबू के रस की भावना देवे; इस प्रकार सब का भस्म बन जाने पर सबको चूर्ण कर एक माशा प्रतिदिन मक्खन और मिसरी के साथ खावे तथा औषध के खाने के बाद ही नीचे लिखा काढ़ा पीये। बिदारीकंद, तुलसी, केला कंद, चमेली की पत्ती, बेल की छाल, शतावर, नागरमोथा, छोटी कटहली, अडूसा, आँवला, गुरबेल, कुश की जड़, पाषाणभेद, सर्पाक्षी, गन्ना, पीपल, गोखरू, ककड़ी के बीज, मुलहटी, छोटी इलायची, सुगन्धवाला, सफेद चन्दन, इन सब इक्कीस चीजों को कूट कर काढ़ा बना कर पीये। यह ऊपर की दवा का अनुपान है। इसके सेवन करने से मूत्र-कृच्छ्र, पथरी, प्रमेह, वात-पित्त, कफ के रोग तथा क्षय वगैरह संपूर्ण रोगों का नाश होता है। यह मूत्रकृच्छ्रांतक रस उत्तम है।

७—विबन्धे विरेचकतैलम्

रसगंधकनैपालदंतिबीजानि टंकणं ।
एरंडं तुंबिबीजानि राजवृक्षाभयात्रिवृत् ॥१॥
पलाशबीजमेकैकं वृद्धिभागोत्तरेण च ।
स्नुहीक्षीरेण संयुक्तं मर्दयेत्त्रिदिनान्तरम् ॥२॥
नारिकेलफले क्षिप्त्वा महागाढातपे स्थितम् ।
तत्तैलं जायते शीघ्रं लेपोऽयं नाभिमध्यतः ॥३॥
अणुमात्रविलेपेन सप्तवारं विरेचयेत् ।
तद्गन्धाघ्राणमात्रेण पंचवारं विरेचयेत् ॥४॥
गुंजात्रत्पादलेपेन दशवारं विरेचयेत् ।
वैरेचकप्रयोगोऽयं पूज्यपादेन भाषितः ॥५॥

टीका—शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, शुद्ध जमालगोटा, शुद्ध सुहागा, शुद्ध अंडीबीज, शुद्ध कड़ू तोमर के बीज, अमलताश, बड़ी हर्रे का छिलका, निशोथ छिवले (पलाश) के बीज, ये ६ चीजें एक-एक भाग क्रम से बढ़ती लेकर सबको एकत्र कर थूहर के दूध से ३ दिन तक बराबर मर्दन कर नारियल के फल में भर कर खूब तेज घाम में रख दे। सब दवाइयाँ घुलकर तैलरूप हो जायँ, तब जानो यह विरेचक तैल तैयार हो गया। यह तैल थोड़ा-सा नाभि पर लगाने से ७ बार दस्त होता है तथा १ रत्ती पाँव के तल भाग में लेप करने से दस बार दस्त होता है। और इस तैलको सूंघने से ५ बार दस्त होता है। विरेचन का यह प्रयोग पूज्यपाद स्वामी ने कहा है।

८—प्रमेहे राजमृगांकरसः

सुवर्णं रजतं कांतं त्रपुषं चैव शीसकं ।
भस्मीकृत्य च तत्सर्वं क्रमवृद्ध्या क्रमांशकं ॥१॥
व्योमसत्त्वभवं भस्म सर्वैस्तुल्यं प्रकल्पयेत् ।
कज्जलीं सूतराजस्य सर्वैरेतैः समांशकम् ॥२॥
प्रक्षाय लौहभस्मानि पूर्वभस्मनि निक्षिपेत् ।
काष्ठेनालोड्य तत्सर्वं दिनमेकं समाचरेत् ॥३॥
ततो विचूर्ण्य तत्सर्वं सप्तधा परिभावयेत् ।
आकुलबीजसंजातक्वाथेनैवं हि यत्नतः ॥४॥

छद्ध्वान्तं बल्लभूषायां सर्वं संस्वेदयेच्छनैः।
इति सिद्धो रसेन्द्रोऽयं चूर्णितः पटगालितः ॥५॥
कांतपत्रस्थितैः रात्रौ जलैस्त्रिफलसंयुतैः।
तद्बल्लद्वयं सूतो दातव्यो मेहरोगिणां ॥६॥
नाम्ना राजमृगांकोऽयं मेहव्यूहविनाशनः।
निर्दिष्टोऽयं रसो राजमृगांको नाम कीर्तितः ॥७॥
दीपनः पाचनो वृंहो ग्रहणीपाण्डुनाशनः।
आमघ्नो रुचिकरः सर्वरोगघ्नो योगसंयुतः ॥८॥

टीका—सोने का भस्म १ भाग, चांदी का भस्म २ भाग, कांत लौह भस्म ३ भाग, बंग (रांगा का) भस्म ४ भाग, सीसे का भस्म ५ भाग. ये पाँचों क्रम से एक २ भाग बढ़ती लेकर एकत्रित करे तथा पारागंधक की कज्जली ४२ भाग ले एकत्रित करे एवं लौह भस्म ८४ भाग लेकर सबको काष्ठ की मूसली से १ दिन भर तक घोंटे। बाद सबको अकरकरा के काढ़े की सात भावना देवे तथा बल्लभूषा में बंद कर स्वेदन विधि से स्वेदन करे फिर वह चूर्ण कपड़े से छानकर २ बल्ल अर्थात् ६ रत्ती औषधि रात में कांत लौह के पत्रों में त्रिफला रखकर उस में जल डालकर उसके काढ़े से सेवन करे। यह औषधि प्रमेह रोगवालों को देवे। यह राजमृगांक रस सम्पूर्ण प्रमेहों को नाश करनेवाला तथा दीपन और पाचन है। ग्रहणी, पांडु, आमदोषं को नाश करनेवाला, रुचि को बढ़ानेवाला और संपूर्ण रोगों का विनाशक है।

६—शूलरोगे ज्वालामुखो रसः

रसगंधकगोदंती कुनटी तीव्रताम्रके।
वज्राभ्रकस्तु सर्वेषां श्लक्ष्णां कज्जलीं चरेत् ॥१॥
षट्कोलं च चतुर्जातं वत्सनाभस्तु कट्फलं।
वंध्या कर्कोटकी कन्दधन्याकं कटुरोहिणी ॥२॥
विषतिन्दुकबीजानि सामुद्रं मरिचानि च।
एतेषां समभागानां पटगालितचूर्णितम् ॥३॥
कज्जलीं तत्समां दत्वा विमृश्य परिमर्द्य च।
शिग्रूमूलस्य निर्गुण्ड्याः जयंत्याश्चित्रकस्य च ॥४॥
द्रवैश्चैवमेकं दिवसं (?) मर्दयेच्चातियत्नतः।
पश्चाद्धिगुजलं दत्वा कुर्याद्गुञ्जामिता वटी ॥५॥

अयं ज्वालामुखो नाम पूज्यपादेन भाषितः।
उष्णोदकानुपानेन सेविता च वटी नृणां ॥६॥
शूलं च गुल्मरोगं च दुःसाध्यं श्लेष्मगुल्मकं।
ज्वरान् कफकृतान् हंति कफरोगान्विशेषतः ॥७॥
गलामयान् स्वरभ्रंशं पांडुं शोफं कफं तथा।
ग्रहणीं चातिमंदाग्निं चामकोष्ठं विशेषतः ॥८॥
दुस्तरं चामवातं च जीर्णवातगदं तथा।
सर्वव्याधिहरः शीघ्रं नाम्ना ज्वालामुखो रसः ॥९॥

टीका—शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, गोदंती हरताल, ताम्र भस्म तथा शुद्ध मैनसिल, वज्रअभ्रक का भस्म, सब समान लेकर सब की कज्जली करे, फिर ३ तोला चतुर्जात (दालचीनी, इलायची, तेज पत्र, नागकेशर लेवे एवं शुद्ध विष नाग, कायफल, बांझ-ककोड़ा, विदारीकंद, धनियाँ, कुटकी, शुद्ध कुचला, समुद्र नमक, काली मिरच, इन सबका एक एक तोला लेकर कूट कपड़छान कर इन सब के चूर्ण बराबर ऊपर की कज्जली लेकर मर्दन कर मीठे सोजना की जड़ और निर्गुंडी जयंती (अग्नो) चित्रक इन सबके स्वरस में या काढ़े में अलग अलग एक एक दिन भावना देकर सुखावे। पश्चात् हींग का पानी देकर चना बराबर गोली बांधे तब यह ज्वाला मुख नामक रस तैयार हो जाता है। यह पूज्यपाद स्वामी का बताया हुआ रस है। इसको गर्म पानी से सेवन करने से शूल रोग तथा दुःसाध्य कफजन्य गुल्म रोग, कफजन्य ज्वर, गले के रोग, स्वरभंग, पांडु रोग, शोथ रोग, कफजन्य कोई भी रोग, ग्रहणी, अत्यन्त मंदाग्नि, विशेष कर आम कोष्ठ को तथा कठिन आमवात, जीर्ण वात आदि सम्पूर्ण रोगों को अनुपानयोग से यह नाश करता है।

१०—सन्निपाते—सन्निपातान्तको रसः

रसं विषं रविं कृष्णां गंधकं चोषणं क्रमात्।
द्विचतुःपंचविदशवसुसंख्यकं (?) चाष्टकं ॥१॥
अर्कपत्ररसेनैव याममात्रं तु मर्दयेत्।
गुंजाप्रमाणवटिकां छायाशुष्कां तु कारयेत् ॥२॥
आर्द्रकद्रवसंयुक्ता सन्निपातकुलांतिका।
सर्वदोषविनाशघ्नी पूज्यपादेन भाषिता ॥३॥

टीका—शुद्ध पारा २ भाग, शुद्ध विषनाग चार भाग, ताम्रभस्म पाँच भाग, पीपल १३ भाग, शुद्ध गंधक ८ भाग, काली मिर्च ८ भाग इन सबको लेकर अकोना के पत्ते के

स्वरस में एक प्रहर तक मर्दन करके एक एक रत्ती प्रमाण गोली बांध लेवे और छाया में सुखावे। इस गोली को अदरख के रस के साथ देने से सन्निपात शान्त होता है तथा यह सब दोषों का नाश करनेवाला है, ऐसा पूज्यपाद स्वामी ने कहा है।

१३—जलोदरादो पंचाग्नि-गुटिका

पंचाग्निः पंचलवणं क्षिताः रामठं बचा।
कटुत्रयाजमोदा च सर्षपं जीरकद्वयं ॥१॥
लशुनं त्रिवृताग्रन्थिं समभागानि कारयेत्।
सुधाक्षीरेण संपिष्य सूरणस्योदरे क्षिपेत् ॥२॥
घृतालिप्तं च कर्तव्यं पचेद् गोमयवह्निना।
स्वांगशीतलमादाय सर्वं पिष्ट्वा सुधारसैः ॥३॥
कोलबीजार्धमात्रेण वटकान् कारयेद्भिषक्।
लेहयेद्दधिसारेण जलकुंभं च कुम्भजं ॥४॥
पथ्यं दध्योदनं तत्र हिता सर्वोदरापहा।
पूज्यपादप्रयुक्तेयं सर्वोदरकुलान्तनी ॥५॥

टीका—पाँच भाग चित्रक, पाँचो नमक (समुद्र नमक, काला नमक, सेधा नमक, विड नमक, सांभर नमक) सज्जीखार, जवाखार, हींग दूधिया, बच, सोंठ, मीर्च, पीपल अजमोदा, सफेद सरसों, दोनों जीरा, लहसुन, निशोथ, पीपरामूल ये सब एक एक भाग लेकर सबको कूट कपड़छान कर थूहर के दूध से पीस कर सूरण का कुछ दल निकाल कर उसके भीतर सब दवाइयों को भर दे और उसको घी मे लिप्त कर ऊपर से कपड़मट्टी कर सुखावे, इसके उपरांत जंगली कंडों की अग्नि में पकावे, जब स्वांग शीतल हो जाय तब सबको फिर से थूहर के दूध से पीस कर बेर की गुठली के आधे परिमाण के बराबर गोली बांधे और उस गोली को दही के ताड़ से एक एक या दो दो गोली खावे। इसके खाने से जलोदर, कुम्भोदर शांत होते हैं। इसके ऊपर दही भात पथ्य है। यह पूज्यपाद स्वामी की कही हुई सब प्रकार के उदर रोगों को नाश करनेवाली है।

१२—उपदंशादौ कंदर्पो रसः

सुरसं दशभागं च गंधकस्य तथैव च।
नवसारार्धभागं तु सर्वमेवं प्रमर्दयेत् ॥१॥
हंसपादी जयंती च स्वरसैः कृष्णधूर्तकैः।
कोचकूप्यां विनिक्षिप्य चावरुध्य प्रयत्नतः ॥२॥
ज्वालयेदग्निं यत्नेन दिनत्रयविनिर्मितम्।
स्वांगशीतलमुद्धृत्य ग्राह्यं यत्नेन भस्मकं ॥३॥
देवकुसुमं च कर्पूरं दापयेत् समभागकम्।
गुंजाद्वयं त्रयं चैव मधुना लेहयेन्नरः ॥४॥
उपदंशहरप्रयोगोऽयं धातुवर्धनतत्परः।
कंदर्पसमतनुं कृत्वा पूज्यपादेनभाषितः ॥५॥

टीका—शुद्ध पारा १० भाग, शुद्ध गंधक १० भाग और नौसादर ५ भाग, सबको एकत्रित कर कज्जली बनावे तथा हंसराज, गनयारी, (अरनी) काला धतूरा इसके स्वरस में मर्दन करके सुखावे तत्पश्चात् काँच की शीशी में भरकर बालुकायंत्र में तीन दिन तक पकावे जब ठीक पाक हो जाय तब ठंडा होने पर यत्नपूर्वक निकाल ले तथा उसमें लवंग और कपूर समान भाग मिलाकर २ रत्ती अथवा तीन रत्ती मधु के साथ दे, तो यह अनेक कठिन से कठिन उपदंश को नाशकर मनुष्य के शरीर को कामदेव के सदृश बनाकर धातु को बढ़ाने में समर्थ होता है यह पूज्यपाद स्वामी ने कहा है।

१३—विषमज्वरे चतुर्थज्वरहरवटिका

टंकणं दरदं सूतं कणावोलं तु तुत्थकं।
कांतं गंधं शिलातालं नवसारं तथा विषं ॥१॥
कारवल्लीरसैर्मर्द्य वटी गुंजाप्रमाणिका।
गुडेन सह मिश्रं तु चातुर्थिकहरीपरम् ॥२॥

टीका—शुद्ध चौकिया सुहागा, शुद्ध सिंगरफ, शुद्ध पारा, पीपल, शुद्ध बोल, शुद्ध तूतिया, कान्तिसार, शुद्ध आँवलासार गंधक, शुद्ध मेनशिल, शुद्ध तबकिया हरताल, शुद्ध नौसादर, शुद्ध सिंगिया, इन सबको घोंट, कर कूट, पीस और कपड़छन कर, करेले के स्वरस में १ रत्ती प्रमाण गोली बनावे तथा पुराने गुड़ के साथ चौथिया ज्वर आने के पहले, एक एक गोली खाने से लाभ होता है।

१४—अग्निमांद्ये अग्निकुमाररसः

रसगंधकयोः कृत्वा कज्जलीं तुल्यभागयोः।
पादांशममृतं दत्त्वा शुक्तिभस्मसमांशकम् ॥१॥
हंसपादीरसैः सम्यङ् मर्दयित्वा दिनत्रयम्।
स्थूलगोलांस्ततः कृत्वा परिशोष्य खरातपे ॥२॥
निरुध्य बालुकायंत्रे क्रमवृद्धेन वन्हिना।
पचेदेकमहोरात्रं ततः शीतं विचूर्णयेत् ॥३॥
पादांशममृतं दत्त्वा मर्दयेदार्द्रकद्रवैः।
नियुज्यस्थालिकामध्ये ततोऽन्यस्थालिकोदरे ॥४॥
पलार्धममृतं दत्त्वा रसस्थालीं च तन्मुखे।
न्युब्जां दत्त्वा दृढं रुद्ध्वा चुल्यामारोप्य यत्नतः ॥५॥
यामं प्रज्वालयेदग्निं विचूर्ण्य तदनंतरम्।
करंडके विनिक्षिप्य स्थापयेदति यत्नतः ॥६॥
रसोह्यग्निकुमाराख्यो पूज्यपादेन भाषितः।
हन्यादेषोऽग्निमांद्यं ज्वरगदमखिलं वातजातां त्वयार्तिं॥
शोफाढ्यं पांडुरोगं कफजनितगदान् प्लीहगुल्मौ गदार्तिं।
सर्वाङ्गीणं च शूलं जठरभवरुजं खंजतां पङ्गुलत्वम्।
सर्वांश्चासाध्यरोगान् जिन इव दुरितं रक्तगुल्मं वधूनाम् ॥७॥

टीका—शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक ये दोनों बराबर बराबर लेकर उनकी कज्जली बनावे तथा पारे से चौथाई भाग शुद्ध विष लेवे और विष के बराबर शुक्तिका भस्म लेकर सबको तीन दिन तक हंसराज के रस से घोंटे, तत्पश्चात् उसका गोला बना कर तेज घाम में सुखावे, सूख जाने पर बालुकायन्त्र में रख कर क्रम से मृदु, मध्यम और तीव्र अग्नि से एक दिन-रात पकावे फिर ठंढा होनेपर सबका चूर्ण कर उसमे चौथाई शुद्ध विषनाग मिलाकर अदरख के रस के साथ घोंटे तथा उसको एक कोरी हंडी के अंदर रख देवे या लेप कर देवे। बाद दूसरी हंडी में २ तोला विषनाग के चूर्ण को पानी से गीला कर सब में छिड़क देवे। पहली हंडी पर दूसरी हंडी को उल्टी कर (मुख से मुख मिलाकर) रख दे। दोनों के मुख को कपड़मिट्टी से बंद कर और सुखाकर चूल्हे पर रख एक प्रहर तक आँच देवे और ठंढा होने पर चूर्ण करके शीशी में रख लेवे, बस ऐसे ही अग्निकुमार रस तैयार हो जाता है। यह पूज्यपाद स्वामी का कहा हुआ रस है। यह अग्नि की मन्दता, सर्व प्रकार के ज्वर,

वातरोग, क्षय, शोथरोग, पांडुरोग, कफजन्य रोग, प्लीहा, गुल्मरोग, सर्वांग का शूल, उदरशूल, खंजपना, लंगड़ापन, स्त्रियों के रक्त गुल्म तथा और भी असाध्य रोगों को यह रस नाश करता है जैसे जिन भगवान पापों को नाश करते हैं।

५५—उदर-रोगे राजचंडेश्वररसः

रसं गंधं विषं ताम्रं सप्ताहं मर्दयेत् दृढं।
निर्गुण्ड्यार्द्रकनिर्यासैः पृथक् सिद्धो भवेद्रसः ॥१॥
राजचण्डेश्वरो नाम गुंजैकं चार्द्र-वारिणा।
उदररोगनिवृत्यर्थं पूज्यपादेन भाषितः ॥२॥

टीका—शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, शुद्ध विष, ताम्रभस्म इन चारों को सात दिन तक निर्गुन्डी के स्वरस में तथा अदरख के स्वरस में अलग अलग घोंटकर एक एक रत्ती की गोली बनावे और उस एक एक गोली को सुबह शाम अदरख के स्वरस के साथ सेवन करे तो सर्व प्रकार के उदर रोग शांत हो जाते हैं ऐसा पूज्यपाद स्वामी ने कहा है।

५६—ज्वरादौ ज्वरांकुशरसः

सूतभस्म दरदं समं सूतं शंखनाभिवरशुद्धगंधकं।
नागरक्वथितमर्दितं च तद्वल्लमात्रमिव नूतनज्वरं ॥१॥
आर्द्रकद्रवविमिश्रितं ददेत् त्र्यूषणस्य त्रिफलारजःसमैः।
पूज्यपादकथितो महागुणः सर्वदोषप्रशमः ज्वरांकुशः ॥

टीका—पारे का भस्म, शुद्ध सिंगरफ, ताम्रभस्म, शुद्ध शंखनाभि, शुद्ध गंधक इन सबको बराबर लेकर सोंठ के काढ़े में मर्दन करके गोली बनावे और इसको एक बल्ल अथवा रोगानुसार मात्रा कल्पना करके नवीन ज्वर में अदरख के रस के साथ तथा सोंठ, कालीमिर्च, पीपल के काढ़े के साथ और त्रिफला के काढ़े अथवा चूर्ण के साथ देवे, तो सर्व प्रकार का ज्वर शांत होवे।

५७—सन्निपातादौ मृतादिभैरवरसः

सूतं च गंधकं चेति ग्राह्यं चैव समांशकम्।
समांशव्योषसंमिश्रं मर्दयेन्निम्ब—वारिणा ॥१॥

दिनेनैकेन सततं सूर्यतापेन शोषितं ।
चतुर्थांशविषं ग्राह्यं रसासिद्धिर्भविष्यति ॥२॥
भक्षयेद्गुञ्जमात्रेण चार्द्रकस्य रसेन तु ।
सर्वाणि संनिपातानि-त्रिदोषद्वन्द्वजं हरेत् ॥३॥
सर्वशैत्यं च मूकत्वं प्रलापं तन्द्रिकं हरेत् ।
भूतादिभैरवो नाम पूज्यपादेन भाषितः ॥४॥

टीका—शुद्ध पारा तथा शुद्ध गंधक दोनों समान भाग लेकर कज्जली बनावे फिर दोनों के बराबर सोंठ, मिर्च, पीपल लेकर मिलावे और नीम की पत्ती के स्वरस में दिन भर घोंटता रहे और धूप में सुखावे तत्पश्चात् इस सम्पूर्ण औषधि से चौथाई शुद्ध विष लेकर मिलावे और खूब घोंटे बस रस तैयार होगया। इसको १ रत्ती प्रमाण अदरख के रस के साथ सेवन करने से सर्व प्रकार के सन्निपात, त्रिदोषज ज्वर, द्वंद्वज ज्वरों को नाश करता है तथा सर्व प्रकार के शीत रोग, मूकता, प्रलाप, तंद्रा इत्यादि रोगों का भी नाश करता है। यह भूतादिभैरव नाम का रस पूज्यपाद स्वामी का बताया हुआ बहुत उत्तम है।

१८—सर्वज्वरे चन्द्रोदयरसः

रसगंधं तथा वंगं चाभ्रकं समभागतः।
मेलयित्वा तु वंगेन सार्धं सूतं विमर्दयेत् ॥१॥
ततं कीकृत्य वंगाभ्रं जंबीराम्लेन मर्दयेत् ।
सामान्यपुटमाद्द्यात् सप्तधा भावितो रसः ॥२॥
कुमार्या चित्रकेणापि भावयित्वा तु सप्तधा ।
गुडेन जीरकेणापि ज्वराजीर्णे प्रयोजयेत ॥३॥
इत्येवं रोगतापघ्नचन्द्रोदयरसः स्मृतः ।
सर्वदोषविनिर्मुक्तः पूज्यपादेन भाषितः ॥४॥

टीका—शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, वंग भस्म और अभ्रकभस्म ये चारों बराबर लेवे, यहां पर पहले बंग को गलावे जब बंग गल जाय तब उसमें पारा डालकर मिलावे पश्चात् दूसरी औषधि मिलावे और जंबीरी नींबू के रस से मर्दन करे और पुट देवे. इस प्रकार सात बार भावना देकर पुट लगावे. कुमारी के स्वरस से तथा चित्रक के स्वरस से सात सात भावना देकर पुट लगावे इस प्रकार जब इक्कीस पुट हो जाय तब तैयार हुआ समझे। यह पुराना गुड तथा सफेद जीरा के साथ सेवन करने से सब प्रकार का ज्वर एवं अजीर्ण रोग को नाश करनेवाला है। यह सब दोषों से रहित चन्द्रोदय रस पूज्यपाद स्वामी का कहा हुआ है।

१९—नवज्वरे नवज्वरहरवटिका

वचामृता रसं गंधं मरिचं ताम्रभस्मकं।
टंकणं च समं कृत्वा अंकोलरसमर्दितां ॥१॥
द्विदिनं गुंजमात्रां तु वटिकां कारयेद्भिषक्।
आर्द्रकस्य रसैर्देया नवज्वरहरी च सा ॥२॥
पथ्यं दध्योदनं कुर्यात् पूज्यपादेन भाषिता।

टीका—दूधिया बच, गिलोय, शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, काली मीर्च, ताम्र भस्म, सुहागे का भस्म इन सबको एकत्रित कर अंकोल के स्वरस में दो दिन तक मर्दन करके एक एक रत्ती की गोलियां बांध लेवे तथा अदरख के रस के साथ सेवन करे तो नवीन ज्वर शांत हो जाता है। इसके ऊपर दही-भात का पथ्य सेवन करे। यह पूज्यपाद स्वामी की कही हुई नवज्वरहरवटिका उत्तम है।

२०—नवज्वरे करुणाकररसः

रसगंधकं भार्गकं तथा च लोहटंकणं।
मनःशिला मयस्कांतं नागं गगनमेव च ॥१॥
सवंगशुल्वसंयुक्तं कृत्वा कज्जलिकां बुधैः।
लोहपात्रे पचेत् सम्यक् यावदारुणवर्णता ॥२॥
करुणाकररसो नाम नवज्वरनिवारणः।
निमित्तदोषदोषेभ्यश्चानुपानं प्रयोजयेत् ॥३॥
पूज्यपादकृतो योगः नराणां हितकारकः।
सर्वरोगसमूहघ्नो कथितो विज्ञसंमतः ॥४॥

टीका—शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, लोहभस्म कच्चा सुहागा, शुद्ध मैनशील, कान्त, लोहभस्म, शीसाभस्म, अभ्रकभस्म, वंगभस्म और ताम्रभस्म ये सब बराबर बराबर लेकर कज्जली बनावे और लोहे की कड़ाही में डालकर पकावे, जब पकते पकते लाल वर्ण हो जाय तब तैयार समझे। यह करुणाकर नाम का रस नवीन ज्वर को नाश करनेवाला है। इसको ज्वर तथा वात, पित्त, कफ दोषों के अनुसार अनुपान भेद से सेवन करना चाहिये। यह पूज्यपाद स्वामी का कहा हुआ योग मनुष्यों का हित करनेवाला, संपूर्ण रोगों को नाश करनेवाला विद्वानों द्वारा मान्य कहा गया है।

२१—आमादौ मेघनादरसः

हिंगुलं टंकणं व्योष सैंधवं त्रिवृतानि च ।
दन्ती हिंगुविडंगं च दीप्ययुग्मं समांशकम् ॥१॥
तच्चूर्णसमभागं च जैपालफलमिश्रितः ।
मर्दयेत्खल्वमध्ये तु जंबीररसभावितः ॥२॥
वटिकां गुंजमात्रं पु उष्णांबुना पिबेन्नरः ।
आमं विरेचनं कुर्यात् मेघनादस्त्रिदोषजित् ॥३॥
पंचगुल्मं क्षयं पांडुकामलाजीर्णदुर्वलं ।
मूत्ररोगं हरेच्छ्वासं कासप्लीहमहोदरान ॥४॥
आर्द्रकरसेन नाशयति अम्लप्लीहजलोदरान् ।
शूलहृद्रोगदुर्नामक्रिमिकुष्ठहलीमकं ॥५॥
मंडलं गजचर्माणि योगेन तिमिरापहः ।
मांसोदरं च मंदाग्नौ मधुना सर्वरोचके ॥६॥
मेघनादरसः प्रोक्तः त्रिदोषमलनाशनः ।
अनुपानविशेषेण रोगान् मुंचति कार्मुकान ॥७॥
पूज्यपादकृतो योगो नराणां हितकारकः ।

टीका—शुद्ध सिंगरफ, शुद्ध सुहागा, सोंठ, काली मिर्च, पीपल, सेंधा नमक, निशोथ, दन्ती, हींग, वायविडंग, अजमोद, अजवायन ये सब बराबर बराबर लेवे तथा इन सबके बराबर शुद्ध जमालगोटा मिलावे और खल में जंबीरी नींबू के रस में भावना देकर एक एक रत्ती की गोली बनाकर प्रातःकाल एक एक गोली गर्म जल के साथ सेवन करे तो इससे आमदोष का विरेचन होता है, तथा यह मेघनाद रस तीनों दोषों को जीतनेवाला पांचों प्रकार के गुल्मरोग, क्षय, पांडु, कामला, अजीर्ण, दुर्बलता, मूत्ररोग, श्वास, खाँसी, तिल्ली, महान उदर रोग, अदरख के रस के साथ सेवन करने से अम्लरोग प्लीहा, जलोदर, शूल, हृदयरोग, बवासीर, कृमिरोग, कुष्ठरोग, हलीमक, मंडल (चकत्ते पड़ना) गजचर्म (गजकर्ण रोग) विशेष अनुपान से तिमिर रोग को भी, मांसोदर, मंदाग्नि अथवा मधु के साथ सेवन करने से सर्व प्रकार के अरोचक को और त्रिदोष को नाश करनेवाला है यह मेघनाद रस अनुपान-विशेष से अनेक प्रकार के रोगों को नाश करता है। यह पूज्यपाद स्वामी का बनाया हुआ योग मनुष्यों का हित करनेवाला है।

२२—जीर्णज्वरादौ घोड़ाचोलीरसः

पारदं टंकणं गंधं विषं व्योषं फलत्रयम् ।
तालकं च समोपेतं जैपालं समभागकम् ॥१॥
किंशुकस्य रसे दत्त्वा याममात्रं तु पेषयेत् ।
गुंजाप्रमाणवटिकां छायाशुष्कां तु कारयेत् ॥२॥
मरिचैः शोधितैः स्वरसैश्चार्द्रकस्य च पाययेत् ।
जीर्णज्वरं शूलमेहं कठिनं तु महोदरं ॥३॥
प्लीहां च कृमिदोषं च हरेत् कुंभाह्वयं गदं ।
घोड़ाचूलिरितिख्यातो पूज्यपादेन भाषितः ॥४॥

टीका—शुद्ध पारा, शुद्ध सुहागा, शुद्ध गंधक, शुद्ध विष, सोंठ, मिरच, पीपल, त्रिफला, शुद्ध तबकिया हरताल का भस्म और शुद्ध जमालगोटा ये सब चीजें बराबर बराबर लेकर पलास के फूल के स्वरस में एक प्रहर तक घोंट कर एक एक रत्ती की गोली बांधकर छाया में सुखावे। इस गोली का एक रत्ती पीसी हुई काली मिर्च तथा अदरख के रस के साथ पिलावे। यह जीर्णज्वर, शूल, प्रमेह, कठिन उदर रोग, प्लीहा, कृमि और कुंभकामला का नाश करता है। यह घोड़ाचोली रस पूज्यपाद स्वामी का बतलाया हुआ योग बहुत उत्तम है।

२३—विबंधे इच्छाभेदिरसः

सूतं गंधं च मरिचं टंकणं नागराभये ।
जैपालबीजसंयुक्तो क्रमेण वर्धनं करेत् ॥१॥
सर्वतुल्यैर्गुडैर्मर्द्य इच्छाभेदिरसः स्मृतः ।
चतुर्गुंजावटी योग्या ततः तोयं पिबेन्मुहुः ॥२॥
विबंधज्वरगुल्मं च शोफशूलोदरभ्रमम् ।
पांडुकुष्ठाग्निमान्द्यं च श्लेष्मपित्तानिलं हरेत् ॥३॥

टीका—शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, काली मिर्च, सुहागे का फूल, सोंठ, बड़ी हर्र का बकला, शुद्ध जमाल गोटा, ये क्रम से एक एक भाग बढ़ा कर लेवे अर्थात् पारा १ भाग गंधक २ भाग, मिर्च ३ भाग, सुहागा ४ भाग, सोंठ ५ भाग, हर्र ६ भाग, जमालगोटा ७ भाग लेवे और इन सबको पीसे तथा सबके बराबर पुराना गुड़ मिला कर चार चार रत्ती की गोली बनावे, सुबह शाम एक एक गोली सेवन करे और ऊपर से २ तोला पानी पीवे

तथा प्यास लगने पर कई बार पानी पीवे इससे रेचन होता है। यह दवा ज्वर, गुल्म, सूजन, शूल, उदर रोग, भ्रम रोग, पांडु, कुष्ट, अग्निमांद्य कफ, पित्त और बात इन सब रोगों का नाश करनेवाला है।

२४—विबंधे विरेचकतिक्तकोशातकीयोग:

तिक्तकोशातकीबीजं तिन्तड़ीबीजसंयुतम्।
पातालयंत्रमार्गेण तैलं तत्तिक्ततुंबके ॥१॥
सार्धे सर्षाजे मासार्धं क्षिपेत् सिद्धं भवेत्ततः।
तेन पादप्रलेपेन नाभिलेपेन वा भवेत् ॥२॥
आमं विरेचयन्त्याशु वान्तौ तु हृदयं पुनः।
लेपयेत् क्षालयेन्निम्बवारिणा स्तंभनं भवेत् ॥३॥

टीका—कड़वी तुरई के बीज, तिन्तड़ीक के बीज, इन दोनों को बराबर बराबर लेकर पाताल यंत्र के द्वारा उनका तैल निकाले और उस तैल को कड़वी तुमरियाबीजसहित आधी काट कर उसमें भर कर १५ दिन तक रक्खे तो यह तैलसिद्धि हो एवं फिर उसको निकाल कर काम में लावे। उस तैल को पैरों में लगाने से तथा नाभी पर लेप करने से आम दोष का विरेचन होता है, यदि वमन हो जाय तो हृदय पर लेप करे और नीम की पत्ती के ठंढे पानी से प्रक्षालन करे तो वमन शान्त हो जाता है।

२५—विबंधे प्रथम इच्छाभेदिरस:

जैपालरसगंधांश्च स्नुहीक्षीरेण मर्दयेत्।
विश्वाहरीतकी शृङ्गवेरद्रावेण संयुतः ॥१॥
माषमात्रं ददेच्चैव इच्छाभेदि विरेचनम्।
यथेष्टं रेचनं भूयात् पूज्यपादेन भाषितः ॥२॥

टीका—शुद्ध जमालगोटा, शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, इन तीनों को लेकर थूहर के दूध से घोंटे और उसमें सोंठ, बड़ी हर्र का बकला अदरख के रस के साथ मर्दन करके रख लेवे उसको एक मासे की मात्रा से देवे तो यथेष्ट इच्छानुकूल विरेचन होवे।

२६—द्वितीय इच्छाभेदिरसः

व्योषं गंधं सूतकं टंकणं च तेषां तुल्यं तिन्तड़ीबीजमेतत् ।
खल्वे यामं मर्दयेन्नागवल्लीपर्णैरेवंवल्लमात्रप्रवृत्तिः ॥
इच्छाभेदिं दापयेच्चाथ सेव्यं तांबूलांते तोयपानं यथेच्छं ।
यावत्कुर्याद् रेचनं तावदेव शूलेपदावर्तपांडूदरेषु ॥१॥

टीका—सोंठ, मिर्च, पीपल, शुद्ध पारा, सुहागा इन सबको बराबर बराबर और सबके बराबर तिन्तड़ीक के बीज ले। खरल में एक प्रहर तक पान के स्वरस में घोंट कर तीन तीन रत्ती के प्रमाण से देवे तथा ऊपर से एक पान का बीड़ा खावे। पश्चात् जितना पानी पीना होय पीवे इससे उत्तम विरेचन हो जाता है तथा सब प्रकार के शूल उदावर्त, पांडु-उदर रोग शान्त हो जाते हैं।

नोट—जितने बार दस्त लेना होय उतने बार पान का बीड़ा खाकर पानी पीवे।

२७—श्वासकासादौ गजसिंहरसः

रसलोहं शुल्वभस्म वत्सनाभं च गंधकं ।
तालीसं चित्रमूलं च एला मुस्ता च ग्रन्थिकं ॥१॥
त्रिकटु त्रिफलायुक्तं जैपालं तु विडंगकम् ।
सर्वसाम्यं विचूर्ण्यैव शृंगवेरद्रवैर्युतम् ॥२॥
चणप्रमाणवटिकां भक्षयेद्गुडमिश्रिताम् ।
श्वासकासक्षयं गुल्मप्रमेहं तृड्ग्रहणगदम् ॥३॥
वातशूलादिरोगाणि हंति सत्यं न संशयः ।
ग्रहणीं पांडु शूलं च गुदकीलं मूढ़गर्भकम् ॥४॥
गजसिंहरसो नाम पूज्यपादेन भाषितः ।

टीका—शुद्ध पारा, लोह भस्म, ताम्रभस्म, शुद्ध विष, शुद्ध गंधक, तालीस पत्र, चित्रक, छोटी इलायची, नागरमोथा, पीपरामूल, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर, बहेरा, आंवला, शुद्ध जमालगोटा, वायविडंग ये सब औषधियां बराबर २ लेकर अदरख के रस के साथ घोंट कर चना के बराबर गोली बनावे तथा पुराने गुड़ के साथ एक एक गोली प्रातःकाल और सायंकाल सेवन करे तो श्वांस, खाँसी, क्षय, गुल्म, प्रमेह, तृषा, ग्रहणी, शूल, पांडु, गुदकील (बवासीर का भेद) मूढ़ गर्भ तथा अनेक प्रकार के बातरोग नाश हो जाते हैं इसमें कोई संशय नहीं है, ऐसा पूज्यपाद स्वामी ने कहा है।

२८—श्वासकासादौ सूतकादियोगः

सूतकं गंधकं भार्ङ्गी चामृतं चित्रपत्रकं ।
विडंगरेणुका मुस्ता चैलाकेशरग्रंथिका ॥१॥
फलत्रयं कटुत्रयं शुल्वभस्म तथैव च ।
एतानि समभागानि गुडं द्विगुणमुच्यते ॥२॥
सर्वेषां गुटिकां कृत्वा मात्रां चणकमात्रिकां ।
एकैकां भक्षयेन्नित्यं तेषां चैव विचक्षणः ॥३॥
श्वासकासक्षये गुल्मे प्रमेहे विषमज्वरे ।
तृष्णायां ग्रहणीदोषे शूले पांड्वामये तथा ॥४॥
मूढगर्भे वातरोगे कृच्छ्ररोगे च दारुणे ।
कृमिरोगेषु मन्दाग्नौ मांसोदररुजासु च ॥५॥
कंठग्रहे हृद्ग्रहे हिक्कामूर्धरुजासु च ।
अपस्मारे तथोन्मादे रक्तवृद्धौ च दारुणे ॥६॥
सर्वांगेषु च कुष्ठेषु सर्वास्मिन्नश्मरीगदे ।
लूतायां सन्निपाते च दुष्टसर्पे च वृश्चिके ॥७॥
हस्तपादादि रोगेषु सर्वेषु गुटिका मता ।
सूतकादिरयं योगः पूज्यपादेन भाषितः ॥८॥

टीका—शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, भारंगी, गुर्च, ... चित्रक, तेजपत्र, वायविडंग, रेणुका-बीज, नागरमोथा, छोटी इलायची, नागकेशर, पीपरामूल, त्रिफला, सोंठ, मिर्च, पीपल, ताम्रभस्म, इन सबको समान भाग लेकर कूट कपड़छन करके सब चूर्ण से दूना गुड़ लेकर एक चना के बराबर गोली बनावे और एक एक गोली प्रतिदिन प्रातःकाल सेवन करे, तो इससे श्वास, खांसी, क्षय, गुल्म, प्रमेह, विषमज्वर, तृष्णा, संग्रहणी दोष, शूल, पांडु रोग, मूढ गर्भ, वातरोग, कठिन मूत्रकृच्छ्र, कृमिरोग, मंदाग्नि, मांसोदर रोग, कंठरोग, हृद्रोग, हिचकी शिरारोग, अपस्मार, उन्माद, रक्तवृद्धि, सर्वाङ्ग में होनेवाला कुष्ठ रोग, पथरी रोग, मकड़ी के विष में, सन्निपात में, सर्प के काटने पर, बिच्छू के काटने पर, हाथ-पैर के किसी भी रोग में यह सूतकादि योग बहुत उत्तम है ऐसा पूज्यपाद स्वामी ने कहा है।

२९—क्षयकासादौ अग्निरसः

सूतं द्विगुणगंधेन मर्दयेत् कज्जलीं यथा ।
तयोः सम तीक्ष्णचूर्णं कुमारीवारिणाद्रुतम् ॥१॥

सर्वस्य गोलकं कृत्वा ताम्रपात्रे विनिक्षिपेत् ।
आच्छाद्यैरण्डपत्रेण यामार्द्धं चोष्णतां नयेत् ॥२॥
धान्यराशौ विनिक्षिप्य द्विदिनं चूर्णयेत्ततः ।
त्रिकटुस्त्रिफला चैलाजातीफललवंगकम् ॥३॥
चूर्णमेषां समं पूर्वरसस्यैतन्मधुयुतम् ।
द्विनिष्कं भक्षयेन्नित्यं स्वयमग्निरसोह्ययं ॥४॥
क्षयकासक्षयश्वासहिक्कारोगस्य नाशकः ।
ज्वरादिनरुणे प्रोक्तान् चानुपानान् प्रयोजयेत् ॥५॥
सर्वकासेषु मतिमान् कासोक्तैरनुपानकैः ।
क्षयादिनाशको योगः पूज्यपादेन भाषितः ॥६॥

टीका—शुद्ध पारा तथा दूना गंधक लेकर कज्जली बनावे और दोनों के बराबर तीक्ष्ण लोहभस्म लेकर घीकुआरि के स्वरस में गोली बनाकर ताम्बे के पात्र में रख कर बंद करके डेढ़ घंटे तक आँच देकर गर्म करे और फिर उसी संपुट को धान्य की राशि में दो दिन तक रख देवे, पश्चात् निकाल कर सबको पीसकर चूर्ण बनाले तथा सोंठ मिरच, पीपल, त्रिफला, छोटी इलायची, जायफल, लवंग इनका चूर्ण पहले के रस के बराबर ही ले एवं घोंट कर तैयार करले। यह स्वयं अग्निरस तैयार हो गया समझो। इस चूर्ण को मधु के साथ सेवन करना चाहिये तथा ज्वर इत्यादि में जो अनुपान कह चुके हैं, खाँसी और श्वास में जो अनुपान कह चुके हैं उन्हीं अनुपानों से इसको भी देना चाहिये। यह क्षय आदि को नाश करनेवाला पुज्यपाद स्वामी का कहा हुआ उत्तम योग है।

३०—वाजीकरणो रतिविलासरसः

हरजभुजगकांताश्चाभ्रकं च त्रिभागं
कनकविजययष्टी शाल्मली नागवल्ली ।
सितमधुघृतयुक्तं सेवितं वल्लयुग्मम् ।
मदयति बहुकांतं पुष्पधन्वा बलायुः ॥१॥

टीका—शुद्ध पारा, शुद्ध सीसा, कांतलोह भस्म ये तीनों बराबर बराबर लेवे तथा अभ्रक भस्म, तीसरा भाग ले और सबको घोंट कर तयार कर लेवे, फिर शुद्ध धतूरा के बीज, बिजया की पत्ती, मुलहटी, सेमल का मूसला एवं पान इनके साथ मिश्री तथा शहद के साथ साथ रत्ती प्रमाण सेवन करने से बहुत स्त्री वाले पुरुष को कामदेव तथा बल और आयु मदमत्त कर देते हैं अर्थात् वह क्षीण-शक्ति नहीं होता।

३१—वाजीकरणादौ लीलाविलासरसः

अहिफेनं वार्धिशोकं च त्रिसुगंधं च तत्समम् ।
धूर्तबीजसमायुक्तं विजयाबीजतत्समम् ॥१॥
तद्रसैः भावनां कुर्याद्रसो लीलाविलासकः ।
चणकप्रमाणवटिका दीयते सितखंडया ॥२॥
बहुमूत्रविनाशश्च शुक्रस्तंभं करोति च ।
यामिनीमान-भंगं च कामिनीमदभंजनम् ॥३॥

टीका—शुद्ध अफीम, समुद्रशोष, छोटी इलायची, दालचीनी, तेजपात, ये तीनों बराबर तथा शुद्ध धतूरे के बीज और उसी के बराबर भांग के बीज लेकर धतूरा और भांग के स्वरस की भावना देकर चना के बराबर गोली बांधे। इस गोली को मिश्री के साथ देने से बहुमूत्र रोग शांत हो जाता है तथा वीर्य्य का स्तम्भ होता है और रात्रि का मान-भंग और कामिनी के मद का नाश होता है।

३२—आमदोषादौ उदयभास्कररसः

हिंगुलं च चतुर्निष्कं जैपालं च त्रिनिष्ककं ।
वत्सनाभं चैकनिष्कं त्रिकटु चैकनिष्ककं ॥१॥
हरीतकी चैकनिष्कं निष्कमेरंडमूलकं ।
करंजबीजं निष्कं च नीलांजनमन शिला ॥२॥
रसतुत्थं पिप्पली च वराटं शंखभस्मकं ।
कनकं निम्बबीजं च प्रत्येकं च निशाद्वयम् ॥३॥
सर्वं च प्रतिनिष्कं च दिनं खल्वे विमर्दयेत् ।
अजक्षीरेण संमिश्रगुंजामात्रवटीकृतम् ॥४॥
वटकं गुडमिश्रेण ऋतयोग समन्वितम् ।
सेव्यश्चोष्णकोष्ठाले चामदोषविरेचकः ॥५॥
पंचगुल्महरः शूलहरो वातविशोषनः ।
रसोऽयं पूज्यपादोक्तः सर्वशीतज्वरापहः ॥६॥

टीका—शुद्ध सिंगरफ, १ तोला, शुद्ध जमालगोटा ६ माशा, शुद्ध सिंगिया ३ माशा, सोंठ, मिर्च, पीपल तीन तीन माशा, बड़ी हर्र का छिलका ३ माशा अरण्ड की जड़ की छाल

३ माशा, पूतकरंज की मींगी ३ माशा, नीला सुरमा तथा शुद्ध मैनशिल, शुद्ध पारा, तूतिया भस्म, पीपल, कौड़ी भस्म, शंख भस्म, शुद्ध धतूरे के बीज, नीम की निबोड़ी की गिरी, हलदी, दारुहलदी ये सब तीन तीन माशा लेकर सब औषधियों को बकरी के दूध में एक दिन भर खरल में मर्दन करे तथा चना के बराबर गोली बनावे, इस गोली को गुड़ और काली मिर्च के साथ सेवन करे और ऊपर से उष्ण जल का पान करे तो इससे आमदोष का रेचन होता है, पांचों प्रकार के गुल्म रोग दूर होते हैं, शूल को नाश करता, वायु का शोधन करता तथा शीत ज्वर का नाश करनेवाला है। यह पूज्यपाद स्वामी का बनाया हुआ उत्तम योग है।

३३—प्रमेहे प्रमेहगजकेसरी रसः

सूतं च वंगभस्मानि नाकुलीबीजमभ्रकम्।
अयस्कांतं शिलाधातु कनकस्य च बीजकम् ॥१॥
गुडूची सत्वमित्येषां त्रिफलाक्वाथमर्दिताम्।
गुंजामात्रवटीं कृत्वा छायाशुष्कां तु कारयेत् ॥२॥
शर्करामधुसंयुक्तो प्रमेहान् हंति विंशतिं।
नष्टेन्द्रियं च दाहं च मन्दाग्निं मद्यदोषकं ॥३॥
सोमरोगं मूत्रकृच्छ्रं बस्तिशूलं विनश्यति।
पूज्यपादप्रयोगोऽयं प्रमेहगजकेसरी ॥४॥

टीका—शुद्ध पारा, वंगभस्म, शुद्ध रासना के बीज, अभ्रक भस्म, कांत लौहभस्म, शुद्ध शिलाजीत, शुद्ध धतूरे के बीज, शुद्ध गुरुच का सत्व इन सब औषधियों को त्रिफला के काढ़े में घोंट एवं एक एक रत्ती के बराबर गोली बनाकर छाया में सुखावे। मिश्री या शहद के साथ इसका सेवन करने से बीस प्रकार के प्रमेह को नाश करता है नपुंसकता, दाह, मंदाग्नि तथा मद्य के दोष को जीतनेवाला एवं सोमरोग मूत्रकृच्छ्र बस्ति के शूल को भी नाश करता है। यह सब प्रकार के शूलों को नाश करनेवाला पूज्यपाद स्वामी का बनाया हुआ प्रमेहगज केशरी उत्तम प्रयोग है।

३४---मन्दाग्नौ बड़वाग्निरसः

शुद्धं सूतं ताम्रभस्म तालबोलं समं समं ।
अर्कक्षीरेण संमर्द्य दिनमेकं द्विगुंजकम् ॥१॥
बड़वाग्निरसं खादेन्मधुना स्थौल्यशांतये ।
पूज्यपादप्रयुक्तोऽयं खलु मंदाग्निनाशकः ॥२॥

टीका—शुद्ध पारा, ताम्रभस्म, तबकिया हरताल भस्म, शुद्ध बोल बराबर बराबर लेकर इन सबों को अकौवा के दूध में दिन भर घोंटे तथा दो दो रत्ती की गोली बनावे। इसी का नाम बड़वाग्नि रस है—इसको शहद के साथ सेवन करने से स्थूलता दूर होती है। यह पूज्यपाद स्वामी का प्रयोग मंदाग्नि का नाश करनेवाला है।

३५---रक्तदोषे तालकेश्वररसः

तालकं मृतताम्रं च समं खल्वे विमर्दयेत् ।
बंध्याकर्कोटिकीकंदस्वरसेन दिनत्रयम् ॥१॥
द्विगुंजं मधुना दद्यात् पश्चात् क्षौद्रोदकं पिबेत् ।
रक्तदोषप्रशांत्यर्थं पूज्यपादेन भाषितः ॥२॥

टीका—तबकिया हरताल का भस्म तथा ताम्रभस्म ये दोनों खरल में बांझककोड़ा के कंद के स्वरस में तीन दिन तक घोंट कर दो दो रत्ती की गोली बांधे। उस गोली को सुबह शाम मधु के साथ सेवन करे और ऊपर से मधु का पानी पिये। यह रक्तदोष की शांति के लिये पूज्यपाद स्वामी ने कहा है।

३६---बहुमूत्रे तारकेश्वररसः

मृतं तारं मृतं वंगं मृतं कांताभ्रकं समम् ।
मर्दयेन्मधुना दिवसं रसोऽयं तारकेश्वरः ॥१॥
माषैकं लेहयेत् क्षौद्रैः बहुमूत्रनिवारणः ।
मूत्रदोषप्रशांत्यर्थं पूज्यपादेन भाषितः ॥२॥

टीका—चांदी का भस्म, वंग का भस्म, कांत लोह भस्म तथा अभ्रक भस्म ये चारों बराबर बराबर लेकर मधु के साथ एक दिन भर बराबर घोंटे और एक माशे की मात्रा से प्रातःकाल मधु के साथ सेवन करे। इसको बहुमूत्र रोग की शांति के लिये पूज्यपाद स्वामी ने कहा है।

३७—भेदिज्वरांकुशरसः

रसस्य द्विगुणं गंधं गंधसाम्यं च टंकणम् ।
रससाम्यं विषं योज्यं मरिचं पंचभागकं ॥१॥
कट्फलं दंतिबीजं च प्रत्येकं मरिचान्वितम् ।
गुडूचीसुरसास्वरसैः मर्दयेद्याममात्रकम् ॥२॥
माषैकेन निहंत्याशु ज्वराजीर्णं त्रिदोषजं ।
क्षणे चोष्णं क्षणे शीतं क्षणेऽपि ज्वरमुत्कटं ॥३॥
क्वचिद्रात्रौ दिवा क्वापि द्वितीयं त्र्याहिकं च तत् ।
ज्वरचातुर्थिकं चापि विषमज्वरनाशनः ॥४॥

टीका—शुद्ध पारा १ भाग, शुद्ध गंधक २ भाग, सुहागे का फूल २ भाग, शुद्ध विष १ भाग, काली मिर्च ५ भाग, कायफल ५ भाग तथा शुद्ध जमालगोटा ५ भाग इन सबको गुर्च तथा तुलसी के रस से घोंट कर रख लेवे। एक माशा की मात्रा से अनुपानविशेष के द्वारा देने से सब प्रकार के ज्वर, अजीर्ण, पित्तरोग, शीतजन्य रोग तथा उत्कट ज्वर सर्व प्रकार के विषम एवं द्वयाहिक, त्र्याहिक, चातुर्थिक ज्वर आदि को शान्त करता है।

३८—क्षयकासादौ अग्निरसः

शुद्धसूतं द्विधा गंधं खल्वेन कृतकज्जली ।
तत्समं तीक्ष्णचूर्णं च मर्दयेत् कन्यकाद्रवैः ॥१॥
यामद्वयात् समुद्धृत्य तद्गोलं ताम्रपात्रके ।
आच्छाद्यैरंडपत्रैश्च यामार्धेनोष्णतां व्रजेत् ॥२॥
धान्यराशौ न्यसेत् पश्चात् पंचाहात् समुद्धरेत् ।
सुपेष्य गालयेद्वस्त्रे सत्यं वारितरं भवेत् ॥३॥
कन्याभृङ्गीकाकमाचीमुंडीनिर्गुंडिकानलम् ।
कोरटं वाकुची ब्राह्मी सहदेवी पुनर्नवा ॥४॥
शाल्मली बिजया धूर्तद्रवैरेषां पृथक् पृथक् ।
सप्तधा सप्तधा भाव्यं सप्तधा त्रिफलोद्भवैः ॥५॥
कषाये घृतसंयुक्तं ताम्रपात्रे क्वचित् क्षणे ।
त्रिकुटस्त्रिफला चैला जातीफललवंगकम् ॥६॥

एतेषां नव भागानि समं पूर्वं रसं क्षिपेत् ।
लिह्यान्माक्षिकसर्पिर्भ्यां पांडुरोगमनुत्तमम् ॥७॥
स्वयमग्निरसो नाम क्षयकासनिकृन्तनः ।
अभ्यर्थपादप्रकथनः सर्वरोगनिकृन्तकः ॥८॥

टीका—शुद्ध पारा १ भाग, शुद्ध गंधक २ भाग इन दोनों की कज्जली करे तथा कज्जली के बराबर शुद्ध तीक्ष्ण लोह का चूर्ण लेवे फिर सबको घीकुवांरी के स्वरस से २ पहर तक घोंटे और गोला बनाकर तांबे के संपुट में बंद करके ऊपर से एरंड के पत्ते से आच्छादन करके १॥ घंटे तक आँच देवे जिससे यह औषधि गर्म हो जाय फिर वह संपुट धान्य की राशि में रख देवे तथा ५ दिन तक धान्य राशि में रहने के बाद निकाले और अच्छी तरह पीस कर कपड़ा से छान ले। पश्चात् जल में डालकर देखे, यदि जल के ऊपर तैर जाय तो सिद्ध हुआ समझे। तदुपरांत घीकुवांरि (ग्वारपाठा) मैगरा, मकोय, मुंडी, नेगड, (सम्हालू) चित्रक, कुरंट, बाकची, ब्राह्मी, सहदेवी, पुनर्नवा मेसल, भांग, धतूरा इन सबके काढ़े से या स्वरस से अलग अलग सात सात भावना देवे तथा उसमें थोड़ा घी मिलाकर तामे के वर्तन में क्षण भर के लिये रक्खे फिर सोंठ, मिर्च, पीपल, त्रिफला छोटी इलायची जायफल, लोंग इन सबका चूर्ण और सब के बराबर ऊपर कहा हुआ अग्निरस लेकर घी तथा मधु के साथ सेवन करे तो पांडुरोग शांत होता है एवं क्षय खाँसी को भी इससे लाभ होता है। यह सब रोगों को नाश करनेवाला पूज्यपाद स्वामी का कहा हुआ उत्तम योग है।

नोट—यह ऐसा योग है कि इस योग में इसी प्रकार से लोह भस्म हो जाता है—वैद्य महानुभाव संदेह न करें।

३९—ज्वरादौ महाज्वरांकुशरसः

शुद्धसूतं विषं गंधं धूर्तबीजं त्रिभिः समम ।
सर्वचूर्णाद्द्विगुणव्योषं चूर्णं गुंजप्रमाणकम् ॥१॥
वटकं भृंगनीरेण कार्यश्च विचक्षणः ।
महाज्वरांकुशो नाम ज्वरान्सर्वान् निकृन्तति ॥२॥
एकाहिकं द्व्याहिकं वा त्र्याहिकं च चतुर्थकम् ।
विषमं वा त्रिदोषं वा हंति सत्यं न संशयः ॥३॥

टीका—शुद्ध पारा, शुद्ध विष, शुद्धगंधक, एक एक भाग, बराबर बराबर तथा शुद्ध धतूरे के बीज तीन भाग, सब के चूर्ण से दूना सोंठ, मिर्च, पीपल का चूर्ण मिलाकर घोंट

लेवे। फिर इस रस की एक एक रत्ती के बराबर भंगरा के स्वरस में गोली बनावे। यह महाज्वरांकुश रस अनुपान भेद से सब प्रकार के ज्वरों को तथा एकाहिक, द्व्याहिक त्र्याहिक और चतुराहिक त्रिदोषज आदि सब ज्वर को नाश करता है।

४०—उदररोगे शंखद्रावः

स्फटिक्यं नवसारकं च लवणं तुल्यं च भागत्रयम्।
सार्धे भूलवणं हित द्रावमिदंतद् भैरवीयंत्रके ॥१॥
मर्त्यापीतमिदं भगंदरमजीर्णमुदरादिशूलादिकम्।
शंखद्रावकराभिधानमुदरं भूतान् रोगान् हरेत् ॥२॥

टीका—फिटकरी, नौसादर, सेंधा नमक ये बराबर बराबर लेकर १॥ भाग कलमी शोरा सम्मिश्रण कर भैरवयंत्र के द्वारा शंखद्राव निकाले। इसके पीने से भगंदर, अजीर्ण, उदरशूल आदि अनेक उदर रोगों का नाश होता है।

४१—विबंधे जयपालयोगः

जयपालस्य च बीजानि पिप्पली च हरीतकी।
तत्समं शुल्वचूर्णं तु वज्रीक्षीरेण भावनम् ॥१॥
मरिचप्रमाणगुटिकां तांबूलेन च मर्दयेत्।
उष्णोदकेन वमनं शीतलेन विरेचनम् ॥२॥

टीका—शुद्ध जमालगोटा के बीज, पीपल, बड़ी हर्र का छिलका, बड़ी हर्र के बराबर ताम्रभस्म इन सबको थूहर के दूध की भावना देवे तथा पान के रस के साथ काली मिर्च के बराबर गोली बांध लेवे। इसको गर्म पानी से सेवन करने से वमन होता है तथा शीतल जल के साथ खाने से विरेचन होता है।

४२—शीतज्वरे शीतकेशरीरसः

हिंगुलं टंकणं गंधं सूतं पुनस्तु गंधकं।
विषं तुत्थं कांतशिलाबोलतालनवसागरं ॥१॥
कारवल्लीरसे पिष्ट्वा मर्दयेद्याममात्रकम्।
चणमात्रवटीं कुर्यात् गुडामिश्रं तु सेवयेत् ॥२॥
चातुर्थिकज्वरं हंति पथ्यं दध्योदनं हितम्।
सितेभकेशरी नाम पूज्यपादेन निर्मितः ॥३॥

टीका—शुद्ध सिंगरफ, सुहागा, शुद्ध गंधक, शुद्ध पारा, शुद्ध विष, तुत्थ भस्म, कांतलौह भस्म, शुद्ध शिला, शुद्ध ताल, शुद्ध तबकिया हरताल और शुद्ध नौसादर ये सब चीजें बराबर बराबर तथा गंधक दो भाग लेकर करेले के रस में एक प्रहर घोंट कर चना के बराबर गोली बनावे। इसको पुराने गुड़ के साथ सेवन करने से सब प्रकार का ज्वर नाश होता है। इसका पथ्य दही-भात है।

४३—शीतज्वरे शीतांकुशरसः

तुत्थं पारदटंकणौ विषबली स्यात् खर्परं तालकं।
सर्वं खल्वतले विमर्द्य गुटिकां स्यात्कारवेल्ल्याः द्रवैः॥
गुंजैकप्रमितः सुशर्करयुतः स्याज्जीरकैर्वा युतः।
एकाहित्रिचतुर्थकज्वरहरः शीतांकुशो नामतः॥१॥

टीका—शुद्ध तूतिया भस्म, शुद्ध पारद, शुद्ध सुहागा, शुद्ध विष नाग, शुद्ध गंधक, शुद्ध खपरिया, शुद्ध तबकिया हरताल इन सबों को लेकर खल्ल में करेले के रस से मर्दन करके एक एक रत्ती प्रमाण गोली बनावे। मिश्री और जीरे के साथ एक एक गोली देने से सब प्रकार के विषमज्वर दूर होते हैं।

४४—हृद्रोगादौ सिद्धरसः

जातीफलं सैंधवहिंगुलं च सुवर्णमित्रं विषपिप्पलीनाम्।
महौषधी वायुविडंगहेमबीजं समं खल्वमस्त जंबुनीरैः॥१॥
तद्राद्र नीरैः पृथुयाममात्रं निरंतरं कल्कं खल्वमध्ये।
सुमर्दनार्थं वटकं च कुर्यात् गुंजाप्रमाणं सितया समेतम्॥२॥
निहंति हृद्रोगप्रमेहवातं वातातिसारं ग्रहणीशिरोरुक्।
करोति निद्रां कफशूलसिद्धरसोऽयमानंदयति प्रसिद्धम्॥३॥

टीका—जायफल, सेंधा नमक, सिंगरफ, शुद्ध सुहागा, शुद्ध विष, पीपल, सोंठ, वायविडंग, और सत्यानाशी के बीज ये सब बराबर भाग लेकर जंबीरी नींबू के स्वरस में दो प्रहर घोंट कर एक एक रत्ती के प्रमाण गोली बनावे। यह गोली मिश्री की चासनी के साथ सेवन करे तो हृदयरोग, प्रमेह, वातरोग, वातातीसार, ग्रहणी तथा शिरोरोग शान्त होता है, बल्कि इससे निद्रा भी आती है और कफजन्य शूल इससे शान्त होता है।

४५—शूलादौ शूलकुठाररसः

त्रिकुटः　त्रिफलासूतं गंधटंकणतालकं ।
ताम्रविषविषमुष्टिं च समभागं समाहरेत् ॥१॥
भागस्य विंशतियुतं जयपालं च पृथक् ददेत् ।
सर्वं भृङ्गरसे पिष्ट्वा गुलिकां कारयेत् भिषक् ॥२॥
आद्यः शूलकुठारोऽयं विष्णुचक्रमिवासुरान् ।
सर्वशूले　प्रयुक्तोऽयं　पूज्यपादमहर्षिणा ॥३॥

टीका—त्रिकटु, त्रिफला, शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, शुद्ध सुहागा, हरतालभस्म, ताम्रभस्म विषनाग और शुद्ध कुचला ये सब एक एक भाग तथा बीस भाग शुद्ध जमालगोटा लेवे। सबको भंगरा के रस में घोंट कर एक रत्ती प्रमाण गोली बनावे और एक एक गोली गर्म जल से देवे तो कैसा ही शूल हो अवश्य ही लाभ होगा। जिस प्रकार विष्णु के सुदर्शनचक्र से असुरों का नाश हुआ उसी प्रकार इससे शूल का नाश होता है।

४६—अजीर्णादौ अर्धनारीश्वररसः

विषं सगंधं हरितालकं च मनःशिला निस्तुषदंतिबीजं ।
सूतं सताम्रं दरदैः समेतं प्रत्येकमेतत् समभागकं स्यात् ॥१॥
निर्गुंडिपत्रस्य रसेन पेष्यं धत्तूरपत्रं सहमंजरी च ।
दिनत्रयं मर्दित एव सम्यक् गुंजाप्रमाणां गुटिकां प्रकुर्यात् ॥२॥
छायाविशुष्कं सगुडं च भक्ष्यं अपक्वदुग्धमनुपानमेव ।
सकोष्णवारिस्सदनानुपानं रसोऽर्धनारीश्वरनामधेयः ॥३॥

टीका—शुद्ध विष, शुद्ध गंधक, हरिताल भस्म, शुद्ध मैनशिल, शुद्ध जमालगोटा, शुद्ध पारा, ताम्रभस्म तथा शुद्ध सिंगरफ ये सब समान भाग लेकर सम्हालू की पत्ती के रस की भावना देवे फिर धतूरे के पत्तों के रस की बाद में तुलसी के पत्तों की रस की भावना देवे। इन तीनों के रस की तीन दिन तक लगातार भावना देने के पश्चात् एक एक रत्ती प्रमाण गोली बांधे और छाया में सुखावे। पुराने गुड़ के साथ सेवन करने के बाद एक पाव कच्चा दूध पिये और यदि अजीर्ण हो तो यह गोली गर्म जल के अनुपान से देवे। यह अर्धनारीश्वर रस उत्तम है।

४७—प्रमेहचन्द्रकलारस:

एला तु कर्पूरशिलासुधात्रीजातीफलं गोक्षुरशाल्मलीत्वक् ।
सूतं च बंगायसभस्म एतत्समं समं तत्परिभावयेच्च ॥१॥
गुडूचिकाशाल्मलिकारसेन निष्कार्धमानं मधुना च दद्यात् ।
बद्ध्वा गुटी चन्द्रकलेतिसंज्ञा मेहेषु सर्वेषु नियोजयेच्च ॥२॥

टीका—छोटी इलायची, शुद्ध कपूर, शुद्ध शिलाजीत, आँवला, जायफल, गोखरू, सेमल की छाल, शुद्ध पारा, बंगभस्म और लौहभस्म ये सब बराबर बराबर लेकर खरल में गुर्च तथा सेमर के कंद के स्वरस में घोंट कर गोली बनावे और सुबह शाम १॥ माशे की मात्रा से शहद में सेवन करने से सम्पूर्ण प्रकार के प्रमेह शान्त होते हैं।

४८—वाजीकरणो रतिलीलारस:

स्वर्णभस्म वत्सनाभं व्योमसिन्दूरकंगुनम् ।
दरदं धूर्त्तबीजं च जातीपत्रं त्रिजातकम् ॥१॥
अहिफेनं वराटं च वाधिशोकं समांशकम् ।
मर्दयेत्तप्तखल्वे तु त्रिदिनं विजयाद्रवैः ॥२॥
धूर्त्तबीजस्य तैलेन त्रिदिनं मर्दयेद्दृढम् ।
कुक्कुटांडरसेनेव सप्ताहं भावयेत् पुनः ॥३॥
रतिलीलारसः सोऽयं गुंजात्रयमधुप्लुतम् ।
भक्षयेद्वीजरोधं स्यान्मधुराहारभुक् भवेत् ॥४॥
क्षीरशर्करया धातुवीर्यवृद्धिं करोति सः ।
रमयेत् त्रिशतं नित्यं द्रावयेद्बलाकुलम् ॥५॥
जगत्संमोहकारी स्यात् पूज्यपादेन भाषितः ।
रतिलीलारसो नाम सर्वरोगविनाशकः ॥६॥

टीका—सोने का भस्म, शुद्ध सिंगिया, अभ्रकभस्म, रससिन्दूर, शुद्ध सिंगरफ, शुद्ध धतूरा के बीज, जायपत्री, दालचीनी, इलायची, तेजपत्ता, शुद्ध अफीम, कौड़ी का भस्म तथा समुद्रशोष ये सब बराबर लेकर तपे हुए खरल में तीन दिन तक भांग के रस से घोंट कर धतूरा के बीज के तैल से तीन दिन तक घोंटे, फिर लौंची की पत्ती के स्वरस से सात दिन तक घोंटे और गोली बांध कर रख लेवे। तीन तीन रत्ती के प्रमाण से मधु के

साथ सेवन करे तो इससे वीर्य का स्तम्भन होता है, इसको सेवन करने के समय मधुर भोजन करे, दूध तथा शक्कर का सेवन करे तो उसके पश्चात् ही वीर्य की वृद्धि करता है तथा इसका सेवन करने से सैकड़ों स्त्रियों को तृप्त कर सकता है जगत को संमोह करनेवाला यह रतिलीलानामक रस सर्वश्रेष्ठ है।

४९—अम्लपित्ताद्यौ सूतशेखररसः

शुद्धसूतं मृतं लौहं टंकणं वत्सनाभकं।
व्योषमुन्मत्तबीजं स्याद्गन्धकं ताम्रभस्मकं ॥१॥
चातुर्जातं शंखभस्म बिल्वमज्जा सुचोरकम्।
एतानि समभागानि खल्वमध्ये विनिक्षिपेत् ॥२॥
भृंगराजरसेनैव मर्दयेद्दिवसत्रयम्।
बिल्वलाजकषायेण चोशीरक्वथनेन वा ॥३॥
चणमात्रवटीं कृत्वा छायाशुष्कं मधुप्लुतम्।
भक्षयेदम्लपित्तघ्नं छर्दिशूलविनाशनं ॥४॥
पूज्यपादेन कथितः सोऽयंतु सूतशेखरः।

टीका—शुद्धपारा, कान्तलोह भस्म, सुहागे का फूला, शुद्ध विषनाग, सोंठ, काली मिर्च, पीपल, धतूरा के बीज, शुद्ध गंधक, तांबे का भस्म, दालचीनी, इलायची, तेजपत्र, नागकेशर, शंख भस्म, बेलगिरी, और नरकचूर इन सबको समान भाग लेकर खरल में डालकर भंगरा के रस से तीन दिन तक लगातार घोंटे तथा बेल के काढ़े एवं लाई के काढ़े से क्रमशः तीन तीन दिन तक पृथक् पृथक् घोंट कर चना के बराबर गोली बना कर छाया में सुखावे और और अम्लपित्त और शूल को नाश करनेवाला सूतशेखर रस पूज्यपाद स्वामी का कहा हुआ है।

५०—ग्रहण्याद्यौ रामबाणरसः

शुद्धपारदसिन्दूरं चाभ्रकं लोहजं विषं।
प्रत्येकं निष्कमात्रं स्याद्द्विनिष्कं चाहिफेनकम् ॥ ॥
कोकिलाक्षस्य बीजानि वराटं टंकणं तथा।
प्रत्येकं निष्कमात्रं स्याद्विशेयम् कज्जलोपमम् ॥२॥

मर्दयेद्विजयानीरैः कृष्णधत्तूरजद्रवैः ।
प्रत्येकं दिनमेकं तु गुंजामात्रवटीकृतम ॥३॥
एकां द्वित्रिवटीं चैव भक्षयेन्नागरैः युताम ।
ग्रहण्यां चामशूले वा चातिसारे विशेषतः ॥४॥
मंदाग्नित्वं ज्वरं मूर्च्छां नाशयेन्नात्र संशयः ।
सर्वरोगसमूहघ्नः रामबाणरसोत्तमः ॥५॥
बाणवद्रामचन्द्रस्य पूज्यपादेन भाषितः ॥

टीका—शुद्ध पारा, रस सिन्दूर, अभ्रक भस्म, लोह भस्म, शुद्ध विषनाग तीन तीन माशा, तथा ६ माशा अफीम, तालमखाने के बीज, कौड़ी की भस्म, सुहागे का फूल तीन तीन माशा, इन सब को एकत्रित कर कज्जल के समान घोंट कर भांग के स्वरस में अथवा काले धतूरा के काढ़े से एक एक दिन घोंट कर रत्ती रत्ती के बराबर गोली बनावे। एक दो या तीन गोली सोंठ के काढ़े के साथ सेवन करे तो ग्रहणी, आमशूल अतिसार, मंदाग्नि, ज्वर, मूर्च्छा इन सब को यह रामबाण रस नाश पहुंचाता है यह पूज्यपाद स्वामी का कहा हुआ उत्तम रामबाण रस है।

५३—वाजीकरणो त्रिलोकमोहनरसः

दरदं वत्सनाभं च धूर्तबीजाहिफेनिकम ।
समुद्रशोषं वज्राभ्रं सिंदूरं च समांशकम ॥१॥
मर्दयेत्तप्तखल्वे तु त्रिदिनं विजयाद्रवैः ।
धूर्ततैलेन समाहं वटीं गुंजाप्रमाणिकाम् ॥२॥
मधुना च समायुक्तां त्रिगुंजां च समालिहेत् ।
सर्करां च क्षीर-घृतं चानुपानं च पाययेत् ॥३॥
मधुराहारं भुंजीत गोधूमांगारपाचितम् ।
परमान्नं घृतं शुभ्रशर्करया सह भोजयेत ॥३॥
त्रिलोकमोहनो नाम रसः सर्वसुखंकरः ।
शुक्रस्तंभं शुक्रवृद्धिं करोति मदमर्दनं ॥४॥
कामिनीतोषणकरो पूज्यपादेन भाषितः ।

टीका—शुद्ध सिंगरफ, शुद्ध विषनाग, शुद्ध धतूरा के बीज, शुद्ध अफीम, समुद्रशोष, वज्राभ्रक की भस्म और रस सिन्दूर सब बराबर बराबर लेकर तपे हुए खल्व में तीन दिन

तक लगातार भांग के स्वरस में घोंटे। बाद, सात दिन तक धतूरा के तैल से घोंट कर एक एक रत्ती प्रमाण की गोली बनावे। शहद के साथ तीन रत्ती के प्रमाण से सेवन करे तथा खीर बनाकर सेवन करे तो यह त्रिलोक मोहन नाम का रस सबको सुखी करनेवाला तथा वीर्य का स्तम्भन एवं वीर्य की वृद्धि करनेवाला है। काम से पीड़ित मनुष्य को तथा कामिनियों को संतोष देनेवाला है। यह पूज्यपाद स्वामी का बनाया हुआ सर्वश्रेष्ठ रस है।

५२—वातरोगे स्वच्छन्द-भैरवरसः

शुद्धसूतं मृतं लोहं ताप्यं गंधं च तालकं।
पथ्याग्नि-मन्थनिर्गुंडी त्र्यूषणं टंकणं विषं ॥१॥
तुल्यांशं मर्दयेत् खल्वे दिनं निर्गुंडिकाद्रवैः।
मुंडीद्रावैः दिनैकन्तु द्विगुंजं वटकं कृतम् ॥२॥
भक्षयेत् सर्ववातार्त्तः नाम्ना स्वच्छन्दभैरवः।
सर्ववातविकारघ्नः पूज्यपादेन भाषितः ॥३॥

टीका—शुद्ध पारा, गंधक, लोहभस्म, सोनामक्खी का भस्म, हरताल भस्म, बड़ी हर्र का छिलका, गनयारी सम्हालू के बीज, सोंठ, मिर्च, पीपल, सुहागा, बिषनाग, इन सब को बराबर बराबर लेकर सम्हालू की पत्तों के स्वरस में तथा गोरखमुंडी के स्वरस में एक एक दिन घोंटकर दो दो रत्ती की गोली बनावे और इसको अनुपान-विशेष से वातपीड़ित मनुष्य सेवन करे तो अवश्य ही लाभ हो। यह सर्व प्रकार के बात-विकारों को नाश करनेवाला स्वच्छन्द भैरव रस पूज्यपाद स्वामी ने कहा है।

५३—सन्निपातादौ वीरभद्ररसः

त्र्यूषणं पंचलवणं शतपुष्पादिजीरकान्।
क्षारत्रयं समांशेन गृह्णीत पलसंमितम् ॥१॥
गंधकं सूतमभ्रं च सर्वं ग्राह्यं पलं पलम्।
आर्द्रकस्य रसेनैव दिनमेकं विमर्दयेत् ॥२॥
वीरभद्र इति ख्यातो रसोऽयं माषमात्रकः।
सन्निपातं हरेत् शीघ्रं चित्रकार्द्रकवारिणा ॥३॥
पथ्यं क्षीरोदनं देयं पूज्यपादेन भाषितः।

टीका—सोंठ, काली मिर्च, पीपल, समुद्र नमक, काला नमक, सेंधा नमक, साम्हर नमक, कच नमक, सौंफ, स्याह जीरा, सफेद जीरा, जवाखार, सज्जी खार, टंकण क्षार, शुद्ध गंधक, शुद्ध पारा, अभ्रक भस्म ये सब बराबर बराबर लेकर अदरख के रस के साथ एक दिन भर मर्दन कर इसकी एक एक रत्ती प्रमाण गोली बनावे। यह वीरभद्र नामक रस एक माशे की मात्रा से चित्रक तथा अदरख के रस के साथ सेवन करने से सब प्रकार के सन्निपातों को दूर करता है। इसका दूध-भात पथ्य है।

५४—सन्निपाते सन्निपातांजनम्

निष्कजैपालबीजानि द्वर्शानिष्कार्णि पिप्पली।
मरिचं पारदं चैव निष्कमेकं विमर्दयेत् ॥१॥
सप्ताहं भावयेत्सम्यक् चूर्णं जंबीरवारिणा।
सन्निपातहरं चैतत अंजनं परमं हितं ॥२॥

टीका—३ माशा जमालगोटा, २॥ तोला पीपल, ३ माशा कालीमिर्च, ३ माशा पारा इन सब को जंबीरी नीबू के रस में घोट कर अञ्जन बनावे। इस अञ्जन को सन्निपात-दोष में आँख में आँजने से सन्निपात दूर होता है।

५५—शीतज्वरे शीतभंजी रसः

पारदं रसकं तालं शिखितुत्थं च टंकणं।
गंधकं च समान्येतान्येकीकृत्य विमर्दयेत् ॥१॥
दिनद्वयं कारवल्लीरसेनाथ विलेपयेत्।
ताम्रपात्रोदरे तच्च भांडमध्येऽप्यधोमुखं ॥२॥
निक्षिप्य रुद्ध्वा संशोष्य वालुकाभिः प्रपूरयेत्।
तत्पृष्ठे निक्षिपेत् व्रीहीन चुल्ल्यां मंदाग्निना पचेत् ॥३॥
स्फुटितं व्रीहिणं यावत् तावत्सिद्धो भवेद्रसः।
स्वांगशीतलमादाय प्रदद्याद्वांतजे ज्वरे ॥४॥
शीतभंजी रसो नाम्ना सर्वज्वरकुलांतकः।

टीका—शुद्ध पारा, शुद्ध खपरिया, शुद्ध तबकिया हरताल, शुद्ध तूतिया, सुहागा, गंधक इन सब को समान भाग लेकर २ दिन तक करेले के रस में घोट कर शुद्ध तामे के किसी

कटोरे के भीतर लपेट देवे और उस वर्तन को एक बड़ी हंडी में जिसमें सात कपड़मिट्टी की गयी हो नीचे को मुख कर देवे और उस हंडी में बालू भर तथा बीच से आंच जलाकर तामे की कटोरी के ऊपर जो रेत है उसपर धान रख देवे। जब आंच लगाते लगाते वे धान्य के कण चिटक कर फट जावें तब जाने कि रस सिद्ध हो गया। जब ठंढा हो जाय तब निकाल और घोंट कर रख लेवें। वह एक रत्ती रस दो रत्ती काली मिर्च के साथ सेवन करे तो इससे वातज्वर तथा सर्व प्रकार के ज्वर शांत होवें।

५६—भगंदरे रसादियोग:

रसगंधकसिन्धूत्थतुत्थनागासजीरकाः।
तिक्तकोशातकी-सारं पिष्ट्वा घ्नन्ति भगंदरं ॥१॥

टीका—शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, सेंधा नमक, तूतिया भस्म, शीशा भस्म, ये सब एकत्रित कर के सफेद जीरा तथा कड़वी तुरई के सार के साथ मलहम बनाकर भगंदर पर लेप करे तो भगंदर शान्त होता है।

५७—सर्वरोगे प्रतापलंकेश्वररसः

टंकणं सितगुंजा च गंधकं शुल्व भस्म च।
अयसं कुष्ठमंजिष्ठं पिप्पली च निशाद्वयम् ॥१॥
संचूर्ण्य सूतकं तुल्यं मातुलुंगेन प्रमर्दितम्।
अष्टादशविधं कुष्ठं भृशं हंति रसोत्तमः ॥२॥
लंकेश्वरो यथा सत्वलोकानां भयकारकः।
प्रतापलंकेश्वरश्चासौ योगोऽयं सर्वरोगहा ॥३॥

टीका—सुहागे का फूला, शुद्ध सफेद गुंजा, शुद्ध गन्धक, ताम्र भस्म, कांत लौह भस्म, कूट मीठा, मंजीठ, पीपल, हल्दी, दारु हल्दी, शुद्ध पारा, इन सब को लेकर पहिले पारे गंधक की कज्जली बनावे, पश्चात् सब चीजों को मिला कर बिजोरा नीबू के रस से मर्दन कर के एक एक रत्ती की गोली बाँध कर इसे सेवन करे तो अट्ठारह प्रकार का कोढ़ दूर होवे। यह प्रताप लंकेश्वर रस प्राणियों का उपकारक है।

जिस प्रकार लंकेश्वर (रावण) बड़ा पराक्रमी बीर था उसी प्रकार यह प्रताप लंकेश्वर सर्व रोगों को जीतने वाला है।

५८—कुष्ठे विजयरसः

शुद्धतालं रसः गन्धं त्रिभिस्तुल्या हरीतकी।
सर्वतुल्ये गुडे पक्त्वा निष्कमात्रं निषेवयेत् ॥१॥
विजयश्च रसो ज्ञेयो रसोऽयं सर्वकुष्ठनुत्।
पूज्यपादप्रयोगोऽयं चर्मरोगकुलांतकः ॥२॥

टीका—हरताल भस्म, शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक एक एक भाग तथा तीनों के बराबर बड़ी हर्र का छिलका और इन सबों के बराबर बराबर पुराना गुड़, सबों को मिला एवं गोली बनाकर एक एक टंक प्रमाण अर्थात् तीन तीन माशा सुबह शाम सेवन करे तो इससे सब प्रकार के कोढ़ दूर होवे। साथ ही साथ सब प्रकार के चर्म रोगों के लिये उत्तम है।

५९—कुष्ठादौ वज्रपाणिरसः

शुद्धं सूतं ताम्रभस्म सिन्दूरं चाभ्रभस्म च।
यामं बाकुचीभिस्तु मर्दयित्वाथ गोलयेत ॥१॥
लोहपात्रे विनिक्षिप्य बाकुचीतैल सम्मिते
द्विगुणं शुद्धगन्धं च पचेत्तैलेऽथ जीर्यति ॥२॥
तत्समं लोहभस्माथ पंचांगं निंबुभूरुहः।
संमिल्य मिथुने सर्वं निष्कं नित्यं निषेवयेत् ॥३॥
निशाकणा नागराग्निबेल्लताप्यानि च क्रमात्।
भागोत्तराणि संचूर्ण्य गोमूत्रेण पिबेदनु ॥४॥
वज्रपाणिरसो नाम्ना कीटिभं हंति दुर्जयं।
दशाष्टविधकुष्ठघ्नो पूज्यपादेन भाषितः ॥५॥

टीका—शुद्ध पारा, ताम्र भस्म, रस सिन्दूर, अभ्रक भस्म, एक एक भाग लेकर इन सब को एक पहर तक बकची के तैल से मर्दन कर के गोला बनावे तथा लोहे के बर्तन में बकची के तैल में आँवलासार गन्धक २ भाग लेकर पकावे। जब पक जावे तब गन्धक को गर्म जल से धो एवं सुखा कर उस चूर्ण में मिला देवे और गन्धक के बराबर लौहभस्म लेवे। नीम का पञ्चांग तथा चिरायते का पञ्चांग मिलाकर सब को मर्दन करे और घोंट कर चूर्ण बनाकर रख लेवे। इसकी तीन माशे की मात्रा है। प्रातः काल सेवन करे। ऊपर से हल्दी, पीपल, सोंठ, चित्रक, काली मिर्च, सोनामक्खी ये क्रम से एक एक भाग बढ़ती लेकर चूर्ण

बना गोमूत्र में घोल कर पिये तो इससे सब प्रकार की कृमिजन्य व्याधि तथा सब प्रकार की कोढ़ वगैरह दूर होवे।

६०—कुष्ठादौ चर्मांतकरसः

शुद्धं सूतं विषं गन्धं माक्षिकं च शिलाजतुः।
मृतानि तीक्ष्णलौहार्कपत्राणि च दिनत्रयम्॥१॥
काकमाची देवदाली कर्कोटी चव्यवारिभिः।
संमर्द्याथ शरावांतर्निक्षिप्य च पिधाय च॥२॥
रोधयित्वा करीषाग्नौ त्रिरात्रं विपचेत्ततः।
बाकुचीतैलतो भाव्यं निष्कार्धं चर्मकुष्ठिने॥३॥
दापयेत् खादिरं सारं बाकुचीबीजचूर्णकम्।
मधुनाज्येन संमिश्र्य लेहयेदनु नित्यतः॥४॥
चर्मान्तकाभिधानोऽयं रसेन्द्रश्चर्मनाशनः।
प्रयोगसर्वश्रेष्ठः स्यात् पूज्यपादेन भाषितः॥५॥

टीका—शुद्ध पारा, विषगंधक, सोनामक्खी, शिलाजीत, लौहभस्म और ताम्रभस्म इन सबको समान भाग लेकर तीन दिन तक मकोय, देवदाली, बांझककोड़ा, चाव इन सबके काढ़े से अलग अलग तीन दिन तक मर्दन करके सुखा कर शरावों के भीतर बंद कर कपड़मिट्टी करके करीष (कंडों के टुकड़े) को अग्नि में संपुट देवे। इस प्रकार तीन रात तक पका कर अन्त में बाकुची के तेल की भावना देकर सुखा लेवे और तीन तीन मासे की मात्रा से सेवन करे। ऊपर से खैर की छाल तथा बकची के बीज का चूर्ण शहद और घी के साथ मिलाकर खावे तो इससे सब प्रकार की कोढ़ दूर होती हैं। ऐसा पूज्यपाद स्वामी ने कहा है।

६१—पांडुकामलादौ उदयभास्कररसः

भागैकं रसगंध पत्रद्विगुणं शुल्वं च भागाष्टकं।
शैलायाः त्रयतालकद्वयमितं शुद्धं च भस्मीकृतम्॥१॥
संमर्द्य जलराशिभिश्च मरिचं भागद्वयं चामृतम्।
निर्गुण्ड्याद्र्कभृंगराजसहितं भाव्यं जयंतीरसैः॥२॥

प्रत्येकं दिनसप्तकं च सुदृढं सूर्यातपे शोषितं।
योज्यं गुंजयुगं रसार्द्र सहितं व्योषेण संमिश्रकं ॥३॥
पांडूं कामलरोगराजमनिलं श्वासं च कासं क्षयं।
वातार्तिं कृमिगुल्मशूलमखिलं सम्यक् त्रिदोषं हरेत् ॥४॥
मेहं प्लीहजलोदरं ग्रहणिकां कुष्टं धनुर्वातकं।
रोगं सर्वमपास्य दुष्टजनितं त्वं सप्तवारेण यत् ॥५॥
पथ्यं पौष्टिकतण्डुलं दधियुतं तक्रं च शाल्योदनं।
नृणां चोदयभास्करोऽतिफलदो रोगांधकारं जयेत् ॥६॥
सर्वं नश्यति ज्यपादरचितो योगस्त्रिलोकोत्तमः।

टीका—शुद्ध पारा १ भाग, शुद्ध गंधक २ भाग, ताम्रभस्म ८ भाग, शुद्ध मैनशिल ३ भाग, और तवकिया हरताल का भस्म दो भाग ले सबको एकत्रित कर पानी से मर्दन करे तथा उसमें १ भाग काली मिर्च और २ भाग शुद्ध विषनाग लेकर सबको नेगड़ की (संभालु) पत्ती तथा भंगरा की पत्ती के स्वरस में सात सात दिन मर्दन करके सुखा कर रख ले। फिर इसको दो दो रत्ती के प्रमाण में अदरख के रस के साथ या त्रिकुटा के रस के साथ देवे तो इसके सेवन से पांडु, कामला, राजयक्ष्मा, बातव्याधि, श्वास, खांसी, कृमिरोग, गुल्मरोग सब प्रकार का शूल तथा त्रिदोषज व्याधि, प्रमेह, प्लीहा जलोदर, ग्रहणी, कुष्ठ, धनुर्वात इत्यादि सब दोषों को दूर करता है। इसको २१ दिन सेवन करना चाहिये इस के ऊपर पौष्टिक भोजन दही, चावल, मही, भात हितकारी है। यह योग मनुष्यों के रोगरूपी अन्धकार को नाश करनेवाला उदय भास्कर रस है तथा सम्पूर्ण रोगों को नाश करनेवाला है। यह पूज्यपाद स्वामी ने कहा है।

६२—सर्वव्याधौ उदयादित्यवर्णारसः

रसस्य द्विगुणं गंधं गंधसाम्यं च टंकणं।
तत्समं मृतलौहेन तत्समं नागभस्मकं ॥१॥
तत्समं हेमभस्मैव रसभस्म पुनः पुनः।
सर्वमेकोत्तरं वृद्धि हंसपाद्या च मर्दयेत् ॥२॥
रससाम्यं विषं योज्यं कांतभस्म पुनः पुनः।
मुक्ताप्रवालभस्म तु विषस्य द्विगुणं भवेत् ॥३॥
तत्समं ताम्र भस्म च कांस्यभस्म पुनः पुनः।
सर्वमेतत्सुसंमिश्र्य काकमाच्या च मर्दयेत् ॥४॥

कन्यानिर्गुंडिकाभिश्च हंसपाद्या रसेन च।
पृथक् पृथक् मर्दयेत् खल्वे सप्तवारं पुनः पुनः ॥५॥
ततोऽक्षमात्रान् वटकान् स्थापयेत् काचकूपिका।
एतल्लवणयंत्रस्थं यंत्रं खेचरकं पृथक् ॥६॥
इष्टिकायंत्रकं प्रोक्तं चूर्णविस्तरं भवेत्।
उदयादित्यवर्णाख्यो नाम्ना चोदयभास्करः ॥७॥
सर्वव्याधिहरं नाम्ना वल्लमात्रं तु सेवयेत्।
चातुर्थिकप्रशमनं पथ्यं दध्योदनं हितम् ॥८॥
सर्वज्वरहरं नाम्ना सर्वरोगनिकृंतनः।
अष्टादशविधं कुष्ठं सन्निपातत्रयोदशं ॥९॥
नाशनं राजयक्ष्माणां चानुपानविशेषतः।
त्रिकटुत्रिफलाचूर्णं निर्गुण्डी चार्द्रवारिणा ॥१०॥
शर्करामिश्रितं देयं तत्तद्योगेन योजयेत्।
महारसमिदं प्रोक्तं नाम्ना चोदयभास्करः ॥११॥
इन्द्रियाणां बलकरो पूज्यपादेन भाषितः।

टीका—शुद्ध पारा १ भाग, शुद्ध गंधक २ भाग, शुद्ध सुहागा २ भाग, लोह भस्म २ भाग, शीशाभस्म २ भाग, सोने की भस्म २ भाग इस प्रकार वृद्धि करके सबको एकत्रित हंसपादी (हंसराज) के स्वरस में घोंटे तथा १ भाग शुद्ध विषनाग, कांतलोह की भस्म १ भाग, मोती की भस्म, मूंगे की भस्म दो दो भाग, तामे की भस्म २ भाग, विष शुद्ध २ भाग, कांसे की भस्म २ भाग इन सबको लेकर मकोय, घीकुवांरी, नेगड़ (सम्हालू) तथा हंसपादी के स्वरस में अलग अलग सात सात बार मर्दन कर इनकी एक एक तोला की गोली बनावे और कांच की कूपी में रख देवे इसको लवण यंत्र, इष्टिका यंत्र एवं खेचर यंत्र में क्रम से पकावे। इन सबका चूर्ण बनाकर यह उदय हुये सूर्य के वर्ण के समान उदयादित्य वर्ण रस तीन तीन रत्ती की मात्रा से सेवन करने से सम्पूर्ण व्याधियों का नाश करनेवाला तथा चौथिया ज्वर को दही भात के पथ्यपूर्वक शांत करनेवाला यह सर्वप्रकार के ज्वरों को दूर करनेवाला है। इसके अतिरिक्त अट्ठारह प्रकार के कोढ़, तेरह प्रकार के सन्निपात तथा अनुपान विशेष से राजयक्ष्मा को नाश करनेवाला है। यह रस सोंठ, मिर्च, पीपल, त्रिफला के चूर्ण के साथ तथा नेगड़ और अदरख के साथ देने से वातादि रोगों को भी नाश करता है। अनुपान भेद से सब रोगों पर चलता है। पूज्यपाद स्वामी का कहा हुआ यह रस अत्यन्त बलकारी है।

६३—कासादौ गगनेश्वररस:

अभ्रकं वत्सनाभं च सूतं गंधकटंकणं।
लोहभस्म ताम्रभस्म व्योषधत्तूरबीजकम् ॥१॥
बिल्वमज्जा वचा ग्राह्या चातुर्जातविडंगकम्।
सर्वं तुल्यं क्षिपेत् खल्वे मर्द्यं भृंगरसैर्दिनम् ॥२॥
विजयारससंयुक्तं याममेकं विमर्दयेत्।
गुंजाद्वयं लिहेत् क्षौद्रैः पंचकासक्षयापहः ॥३॥
गुल्मशूलादिरोगघ्नश्चाम्लपित्तविनाशनः।
सन्निपातं वातरोगं ग्रहण्यामयशोधनम् ॥४॥
गगनेश्वरनामायं रसोऽयं सर्वरोगजित्।
कासादिकविषघ्नोऽयं पूज्यपादेन भाषितः ॥५॥

टीका-अभ्रकभस्म, विषनाग, शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, सुहागा, लोहभस्म, ताम्रभस्म, सोंठ, मिर्च, पीपल, धतूरे के शुद्ध बीज, बेलगिरी, सफेदबच, दालचीनी, इलायची, तेजपात, नागकेशर और विडंग सब बराबर-बराबर लेकर खल में डाल कर भंगरा के रस में मर्दन करे, फिर भांग के रस में घोटे और जब तैयार हो जाय, तो दो-दो रत्ती के प्रमाण से शहद के साथ सेवन करे तो पांच प्रकार की खांसी, क्षय, गुल्मशूल, अम्लपित्त, सन्निपात, वातरोग और संग्रहणी इत्यादि को नाश करनेवाला है। यह गगनेश्वर रस सम्पूर्ण रोगों को जीतनेवाला है तथा खांसी और विष के दोष को नाश करनेवाला उत्तम योग है।

६४—शीतज्वरे कारुण्य-सागररस:

पारदं वत्सनाभं च शुद्धा चैव मनःशिला।
हरितालं शुद्धं गंधं निर्गुंडी कारवल्लिका ॥१॥
द्रवैश्चासां सदा कुर्यात् वटीं सर्षपमात्रिकाम्।
मृद्वीकाजीरकेणापि प्रदद्यात् भिषगुत्तमः ॥२॥
शीतज्वरहरो नाम कारुण्यरससागरः।
सर्वशीतज्वरध्वंसी पूज्यपादेन भाषितः ॥३॥

टीका—पारा, विषनाग, मैनशिल, हरिताल भस्म और गन्धक इन पांचों को शुद्ध कर कजली बना कर नेगड़ तथा करेले के रस में इनकी सरसों बराबर गोली बनावे और यह गोली सुबह शाम मुनक्का तथा जीरे के साथ देवे तो सब प्रकार का शीतज्वर दूर होवे।

६५—सन्निपाते सन्निपात-विध्वंसकरसः

सूतं गंधं समं शुद्धं तालकं माक्षिकं तथा।
मृतताम्राभ्रकं बोलं विषं धत्तूरबीजकं ॥१॥
क्षारत्रयं वचाहिंगुपाठाशृंगिपटोलकम्।
वंध्यानिंबत्रयं शुण्ठीकंदलांगुलिजं समम् ॥२॥
सिन्दुवारद्रवैः सर्वं मर्द्यं जंबीरजैर्द्रवैः।
चणकप्रमितां कुर्यात् सिन्दुवारद्रवैः वटीम् ॥३॥
अत्युग्रसन्निपातोत्थं सर्वोपद्रवसंयुतम्।
निहन्यादनुपानेन दशमूलार्द्रकेण वै ॥ ४ ॥
कषायेण न संदेहः पथ्यं दध्योदनं हितम्।
रसो विध्वंसको नाम सन्निपातनिकृन्तनः ॥५॥

टीका—शुद्ध पारा, शुद्धगन्धक, हरताल-भस्म, सोनामक्खीभस्म, ताम्रभस्म, अभ्रक भस्म, शुद्ध बोल, शुद्ध विषनाग, शुद्ध धतूराके बीज, सज्जीखार, जवाखार, सुहागा, बचदूधिया, हींग, सोनापाठा, कांकड़ासिंगी, परवल के पत्ता, बांझ ककोड़ा, नीम, सोंठ, लांगली का कंद इन सब को लेकर कूट पीस कर कपड़छान करके नेगड़ की पत्ती के रस में तथा जंबीरी नीबू के रस में घोंट कर नेगड़ की पत्ती के रस में चना के बराबर गोली बनावे। यह गोली अत्यन्त बढ़ा हुआ जो सन्निपात है उसको भी शान्त करता है। अनुपान में दशमूल का क्वाथ या अदरख रस या क्वाथ देना चाहिये।

६६—सन्निपाते पंचवक्त्ररसः

शुद्धं सूतं विषं गंधं मरिचं टंकणं कणा।
मर्दयेत् धूर्तजद्रावैः दिनमेकं विशोषयेत् ॥१॥
पंचवक्त्ररसो नाम द्विगुंजं सन्निपातजित्।
अर्कमूलकषायेण सव्योषमनुपाययेत् ॥२॥
दाडिमैरिक्षुदंडं च दधिभोजनशीतलं।
पूर्ववत्स्थाप्यते पथ्यं जलयोगं च कारयेत् ॥३॥

टीका—शुद्धपारा, शुद्ध गन्धक, शुद्धविष, काली मिर्च, सुहागे का फूला और पीपल इन सब को धतूरे के रस में एक दिन घोंट कर सुखा लेवे, यह पञ्चवक्त्र रस दो दो रत्ती के प्रमाण से सेवन करने पर अनेक प्रकार के सन्निपातों को जीतनेवाला है। इसका अनुपान आक

की जड़ की छाल का काढ़ा सोंठ, मिर्च, पीपल के सहित ऊपर से पिलावे तथा अनार पोड़ा (गन्ना) दही-भात तथा ठंढा जल का पथ्य दे। इसका सेवन करना चाहिये, सिर पर पानी डालना चाहिये।

६७—प्रमेहे द्वितीयः पंचवक्त्ररसः

मृतं लौहाभ्रकं तुल्यं धात्रीफलनिजद्रवैः।
सप्ताहं भावयेत् खल्वे रसोऽयं पंचवक्त्रकः ॥१॥
मासमेकं रसं खादेत् सर्वमेहप्रशांतये।
महानिम्बस्य बीजानि पूर्वचक्रतुल्योदकैः ॥२॥
सघृतैः पाययेच्चानु ह्यसाध्यं साधयेत् क्षणात्।
अनेन चानुपानेन पंचवक्त्ररसो हितः ॥३॥

टीका—अभ्रक भस्म तथा कान्तलोह भस्म इन दोनों को बराबर बराबर लेकर आंवले के फल के रस में सात दिन तक खरल में लगातार घोंटे, तब यह पञ्चवक्त्र नाम का रस तैयार होता है। यह रस एक मास तक सेवन करने से सब प्रकार का प्रमेह शांत करता है। इसका अनुपान बकायन के बीजों की गिरी को चावल के पानी में पीस कर उसमें घी डाल कर ऊपर से पीना चाहिये तथा इस रस की एक एक रत्ती के प्रमाण से शहद या मिश्री की चाशनी में खाना चाहिये। इससे असाध्य प्रमेह भी शान्त हो जाता है।

६८—श्वासादौ शिलातलरसः

तालं द्वादशभागं च चतुर्भागा मनःशिला।
त्रिकंटकरसैर्मर्द्य वालुकायंत्रपाचितम् ॥१॥
यामद्वयात् समुद्धृत्य तत्तुल्यं च कटुत्रयम्।
निर्गुण्डीमूलचूर्णं तु सर्वतुल्यं प्रदापयेत् ॥२॥
शिलातलरसो नाम मासैकं श्वासकासजित्।
योगोऽयं सर्वश्रेष्ठः स्यात् पूज्यपादेन भाषितः ॥३॥

टीका—हरताल तबकिया भस्म १२ भाग तथा शुद्ध मैनशिल ४ भाग इन सब को गोखरू के रस से भावना देवे तथा सुखा कर बालुका यंत्र में दो पहर तक पाचन करके बाद निकाल लेवे, उसमें सबके बराबर सोंठ, मिर्च और पीपल मिलाकर फिर सबके बराबर सम्भालू (निर्गुण्डी) की जड़ का चूर्ण मिलावे, बाद इसको अनुपान-विशेष से

एक माह तक सेवन करे, तो सब प्रकार के श्वासकास नष्ट होते हैं। यह योग सर्वश्रेष्ठ है—पूज्यपाद स्वामी ने कहा है।

६६—कुष्ठरोगे मेदिनीसाररसः

पलत्रयं मृतं लोहं मृतं शुल्वं पलत्रयं।
भृंगराजाम्बुगोमूत्रत्रिफलाक्वाथितैः पृथक् ॥१॥
पुटं त्रिवारं यत्नेन तस्मिन्नेव परिक्षिपेत्।
बीजपूररसस्यापि क्वाथे यामचतुष्टयम् ॥२॥
पुनश्च तुल्यं गंधेन पुटानां विंशति दहेत्।
पलमात्रं मृतं सूतं रुद्रांशममृतं तथा ॥३॥
कटुत्रयं समं सर्वः पिष्ट्वा सम्यग्विदापयेत्।
रसोऽयं मेदिनीसारो नाम्ना च परिकीर्तितः ॥४॥
सेवितो वल्लमानेन घृतं त्रिकुटकान्वितम्।
इति सर्वाणि कुष्ठानि चित्राणि विविधानि च ॥५॥
गुल्मप्लीहामयं हिक्कां शूलरोगमनेकधा।
उदावर्तं महावातं कफमन्दानलं तथा ॥६॥
गलग्रहं महोन्मादं कर्णनादामयं तथा।
सर्पादिकं विषं घोरं व्रणं लूताभगंदरं ॥७॥
विद्रधिं चांडवृद्धिं च शिरस्तोदं च नाशयेत्।
पूज्यपादप्रयुक्तोऽयं मेदिनीरस उत्तमः ॥८॥

टीका—तीन पल कांत लोह की भस्म, तथा तीन पल तामे की भस्म, इन दोनों को एकत्रित करके भंगरा के रस, गोमूत्र एवं त्रिफला के काढ़ में अलग अलग भावना देकर पुट देवे तथा बीजोरा नीबू के रस से चार पहर तक घोंट कर सुखा लेवे, तब उसी रस के बराबर शुद्ध गन्धक डाल कर घोंट कर पुट देवे। इस प्रकार बिजोरा के रस की २० पुट देवे तथा उसमें १ पल रससिन्दूर तथा उस चूर्ण में ११ वां हिस्सा शुद्ध विषनाग और त्रिकटु का चूर्ण सब के बराबर ले कर सब को उसी तैयार हुये रस में मिला कर घोंटे, बस यह मेदिनी सार रस तैयार हो गया समझें। इसको तीन २ रत्ती की मात्रा से घी तथा त्रिकटु चूर्ण के साथ खाने से अनेक प्रकार के कुष्ट रोग दूर होते हैं। अनुपान-विशेष से गुल्म, प्लीहा, हिचकी, शूलरोग, उदावर्त, महावात, कफजन्य व्याधि, मन्दाग्नि, गले के रोग, उन्माद, कर्णरोग तथा सर्पादिक के विष की पीड़ा, भय-

दुष्ट व्रण, लूता (मकड़ी का विष), भगंदर, विद्रधि, अण्डवृद्धि, शिर की पीड़ा वगैरह सब शांत होते हैं। यह पूज्यपाद स्वामी का कहा हुआ मेदिनीसार रस उत्तम है।

७०—ज्वरादौ ज्वरकुठाररसः

सहस्रभेदी कनकस्य बीजं यष्टिलवंगकम्।
शिलात्वचा च संयुक्तं चैतेषां समभागकम् ॥१॥
नालिकेरांबुना पिष्ट्वा तदलाभे तुषांबुना।
चणकप्रमाणगुटिकां कृत्वा छायाविशोषितां ॥२॥
नालिकेरांबुना पेयादथवा तुषवारिणा।
शर्करासहिता जीर्णगुडेन सहसा तथा ॥३॥
जिह्वादोषं सन्निपातं प्रलापं कफदोषजं।
दोषत्रयोत्थरोगं च ज्वरं सर्वो नियच्छति ॥४॥
रसो ज्वरकुठारश्च सर्वज्वरविमर्दनः।
अनुपानविशेषेण पूज्यपादेन भाषितः ॥५॥

टीका—अमलवेत, शुद्ध धतूरा के बीज, मुलहटी, लौंग, शुद्ध मैनशिल, दालचीनी इन सब को बराबर-बराबर लेकर नारियल के पानी में घोंटे यदि नारियल न मिले तो धान की तुषा के जल में घोंट कर चने के बराबर गोली बांध लेवे, तथा छाया में सुखावे और नारियल के या धान्य के तुषा के जल से अथवा शक्कर या पुराने गुड़ के साथ सेवन करावे तो इससे जिह्वादोष, सन्निपात, प्रलाप, कफ-दोष, त्रिदोषज सम्पूर्ण रोग तथा सब प्रकार के ज्वर शान्त होते हैं। यह ज्वर-कुठार त्रिविध ज्वरों को नाश करनेवाला है। यह रस पूज्यपाद स्वामी का कहा हुआ है।

७१—शीतवाते अग्निकुमाररसः

रसभस्म च भागैकं मृतशुल्वं तथैव च।
विषं च तत्समं ग्राह्यं गंधकं द्विगुणं कुरु ॥१॥
निर्गुण्डी चाग्निमंथानि वह्निव्याघ्रिद्वयं तथा।
पातालतुंबिका ग्राह्या चेन्द्रवारुणिका तथा ॥२॥
सर्वेषां स्वरसैनेव भावयेदेकविंशतिम्।
रसो ह्यग्निकुमारोऽयं पूज्यपादेन निर्मितः ॥३॥

शीते वाते सन्निपाते यमालयगतेऽपि च ।
गुंजिकाषष्ठमात्रेण सर्वज्वरनिषूदनः ॥२॥
सूचिकाग्रे प्रदातव्यः मृतो जीवति तत्क्षणात् ॥५॥

टीका—पारे की भस्म, तांबे का भस्म, शुद्ध विषनाग एक-एक भाग तथा शुद्ध गंधक २ भाग इन सब को एकत्रित करके नेगड़, गनयारी, चित्रक, बड़ी कटहली, छोटी कटहली, पाताल गरुड़ी, इंद्रायन इन सब के रस से तीन तीन अलग अलग भावना देवे तब यह अग्निकुमार रस तैयार हो जाता है। यह पूज्यपाद स्वामी का कहा हुआ रस शीत में, वात में, सन्निपात में ६ रत्ती के प्रमाण देने से एवं तीव्र हैजा में भी मृत प्राय हो जाने पर भी इस से लाभ हो जाता है।

७२—ज्वरे लघुज्वरांकुशः

रसगंधकताम्राणां प्रत्येकं टंकमात्रकं ।
खल्वे द्विगुणभागांशं देयं च धत्तूरबीजकं ॥१॥
मातुलुंगरसेनैव मर्दयेच्च रसं बुधः ।
कासमर्दकतोयेन सिद्धोऽयं जायते रसः ॥२॥
निंबमज्जार्द्रकरसैः वल्लं देयं त्रिदोषजे ।
ज्वरे दध्योदनं पथ्यं शाकं [illegible] ॥३॥
लघु ज्वरांकुशो नाम पूज्यपादेन भाषितः ।

टीका—शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, ताम्रभस्म इन तीनों को एक एक भाग लेकर तथा चार भाग धतूरे के शुद्ध बीज लेकर सब को खल में डाले बिजौरा नींबू के रस में मर्दन करे और कसौंदन के रस में मर्दन करे सुखा कर रख लेवे, इसको तीन तीन रत्ती की मात्रा से नीम की मींगी के और अदरख के रस के साथ दिया जाय तो त्रिदोषज ज्वर में लाभ होवे। इसका पथ्य दही भात है तथा कोंचाई का शाक भी दे सकते हैं। यह सब प्रकार के ज्वरों में दे सकते हैं। यह पूज्यपाद स्वामी ने कहा है।

७३—स्फोटादौ त्रिलोक-चूड़ामणिरसः

पारदं टंकणं तुत्थं विषं लांगुलिकं तथा ।
पुत्रजीवस्य मज्जानि गंधकं कर्षमात्रया ॥१॥
देवदाल्या रसैर्मर्द्यः त्रिशूलीरसमर्दितः ।
विष्णुक्रांता नागदंती धत्तूरनागकेशरैः ॥२॥

भाव्योऽस्याप्यार्द्रके एव बल्लीजप्रमाणकः ।
जंबीररसतो ग्राह्यः पानलेपननस्यके ॥३॥
चांजने सर्वकार्ये वा कालस्फोटमहाविषं ।
कक्षग्रंथि गलग्रंथि कटिग्रंथि-महारसं ॥४॥
स्फोटानां च शतं रोगज्वरज्वालाशताकुलं ।
ब्रह्मराक्षस-भूतादि-शाकिनी-डाकिनी-गणं ॥५॥
कालयनमहादेवीमत्तमातंगकेशरि ।
नानाविजित स्थाप्य ?) श्रीदेवीश्वरसूरिणं ॥६॥
कथितोऽयं त्रिलोकस्य चूडामणिमहारसः ।
पूज्यपादेन यतिना सर्वमृत्युविनाशनः ॥७॥
पार्श्वनाथस्य स्तोत्रं या स्तंभं कत्वा तु तत्क्षणात् ।

टीका—शुद्ध पारा, सुहागे का फूला, तूत्थ भस्म, शुद्ध विषनाग, शुद्ध लांगली (कलिहारी विष), पुत्रजीवक की मज्जा तथा शुद्ध गन्धक ये सब एक एक तोला लेकर सब को एकत्रित कर देवदाली के रस में तथा शिवलिंगी (शिवलिंगी) के रस, विष्णुकांता के रस, नागदन्ती के रस तथा धतूरे के रस में और नागकेशर के काढ़े से अलग अलग एक एक दिन भावना देवे और चने के बीज के समान गोली बांधे तथा जंबीरी नीबू के रस में पान करने में, नस्य लेने में तथा लेप करने और अंजन कर और भी अनेक कर्मों में प्रयोग करना चाहिए। महा विषैला कालस्फोट तथा कांख की ग्रन्थि, गले की ग्रन्थि, कमर की ग्रन्थि और अनेक प्रकार के व्रणों पर लेप करने से लाभ होता है। इस रस को योग्य अनुपान के द्वारा खाने से महा भयानक ज्वर में भी लाभ होता है। इस रस का सेवन ब्रह्मराक्षस, भूत, डाकिनी, शाकिनी दोषद के स्वामी श्रीजिनेन्द्र का स्थापन कर पूजन करके तथा श्रीपार्श्वनाथ स्वामी जी के स्तोत्र से इस रस के सेवन करने से उसी समय सम्पूर्ण रोग शांत हो जाते हैं। यह पूज्यपाद स्वामी ने कहा है।

७४——रक्तपित्तादौ चन्द्रकलाधररसः

रसकं गंधकं ताम्रं कार्शीसं शीसमेव च ।
वंगशिलाजतुर्धात्रीवेलालामज्जकं समं ॥१॥
नालिकेरं च कूष्माण्डं रंभाजेक्षुरसेन च ।
पंचवल्कलक्वाथेन द्वाविंशतभावनां ददेत् ॥२॥

नालिकेररसेनैव दद्याद्वल्लं सशर्करं ।
पथ्यं च लाजसंसिद्धं शमयेत्तृड्गदान् ज्वरान् ॥३॥
रक्तपित्ताम्लपित्तं च सोमं पाण्डुं च कामलां ।
पूज्यपादेन कथितः रस-चन्द्र कलाधरः ॥४॥

टीका —शुद्ध खपरिया, शुद्ध गंधक, तामे की भस्म, कांशास्य की भस्म, शीसे की भस्म, बंग की भस्म, शुद्ध शिलाजीत, मोलहटी, छोटी इलायची, लजनी के बीज ये सब औषधियां बराबर बराबर लेवे और इन सब को एकत्रित करके नारियल, कूष्मांड (पेठे), केले के तथा गन्ने के जल से पञ्च वल्कल वृक्ष (बड़, ऊमर, पीपल, पाकर और कठऊमर) इनके काढ़े से सब मिला कर ३२ भावना देवे और सुखा कर रख लेवे। इसको नारियल के पानी के साथ ३ रत्ती चीनी मिला कर देने से यह रस पिपासा आदि ज्वर बीमारियों को, रक्तपित्त, अम्लपित्त, सोमरोग, और पीलिया आदि गरमी के रोगों को शान्त करता है। धान की खील का पथ्य देना चाहिये।

७५——विषमज्वरे चन्द्रकांतरस:

कर्षं शुद्धरसस्यस्य त्रिमासे चाम्लविद्रुते ।
निक्षिपेन्मर्दयेत्खल्वे पणिपात्रे शुद्धगंधकं ॥१॥
तुत्थांकोलकुणीबीजं शिलातालं चतुश्चतुः ।
तत्समं मृतलोहस्य निष्कौ द्वौ टंकणस्य च ॥२॥
तत्समं कुटकीतोलं वराटांजनविंशति ।
निष्कद्वयं मितं योज्यं सर्वं चोक्तमनुक्रमात् ॥३॥
शुभलग्ने शुभदिने खल्वमध्ये विमर्दयेत् ।
चांगेरीभिश्च यामांस्त्रीन् जंबीराम्लैः दिनद्वयम् ॥४॥
पुटं हस्तप्रमाणं तु वलुमंडे तुषाग्निना ।
जंबीरैश्च द्रवैरेव पिष्ट्वा-पिष्ट्वा पचेत्पुटे ॥५॥
ततो वनोत्पलैरेव देयं गजपुटं महत् ।
आदाय श्लक्ष्णचूर्णं तु चूर्णांशं शुद्धगंधकं ॥६॥
तदर्धमरिचं ग्राह्यं तदर्धा पिप्पली मता ।
तदर्धनागरो ग्राह्यः एकीकृत्य त्रिमासकं ॥७॥
लेहयेन्माक्षिकैः सार्धं नागवल्लीदलस्थितं ।
पथ्योऽस्ति याममात्रं तु चाभुक्ति विषमज्वरे ॥८॥

चन्द्रकांतरसो नाम रसश्चन्द्रप्रभाकरः।
क्षयव्याधिविनाशश्च सर्वज्वरकुलांतकः ॥९॥
एकमासप्रयोगेण देहचन्द्रप्रभाकरः।
कथितः व्याधिविध्वंसः पूज्यपादेन निर्मितः ॥१०॥

टीका—१ तोला शुद्ध पारा, दो मास तक खरल में मर्दन करके निकाल लेवे, फिर खल में डाल कर १॥ तोला शुद्ध गन्धक तथा तूतिया की भस्म, अंकोले के बीज, कुसी के बीज, शिलाजीत, कांतलोह की भस्मः ये सब एक एक तोला लेकर ६ मासे सुहागे का फूला तथा कुटकी, और शुद्ध विषनाग लेवे, और कौड़ी की भस्म, कृष्णांजन शुद्ध दोनों मिला कर २० तोला लेवे तथा तीन तोला सिंगरफ लेवे, इस प्रकार ऊपर कहे हुये परिमाण से सब औषधियों को लेकर शुभ मुहूर्त में, शुभ नक्षत्र में खल में डाल कर नारंगी के रस से ३ पहर, जंबीरी नीबू के रस से ४ दिन मर्दन कर और ८ हाथ प्रमाण गहरे गड्ढे में तुष की अग्नि से आंच देवे। इसी प्रकार जंबीरी नीबू के रस में घोंट कर आठ पुट देवे तथा एक महागज पुट देवे। इस प्रकार जब भस्म हो जाय तब वह भस्म तथा उसके बराबर शुद्ध गन्धक लेवे, फिर गन्धक से आधा काली मिर्च का चूर्ण और काली मिर्च के चूर्ण से आधा पीपल का चूर्ण तथा पीपल से आधा सोंठ का चूर्ण लेकर सब को एकत्रित करके तीन तीन मासा पान का रस तथा अदरक के साथ सेवन करे। विषम ज्वर में भोजन नहीं करना यही पथ्य है। यह चन्द्रकांत नाम का रस चन्द्रमा के समान कांति को देनेवाला तथा क्षय रूप व्याधि का नाश करनेवाला तथा सम्पूर्ण ज्वरों का नाश करनेवाला एक माह तक सेवन करने से शरीर की कांति को कपूर के समान करनेवाला और अनेक व्याधि को नाश करनेवाला है। यह चन्द्रकांतरस पूज्यपाद स्वामी ने कहा है।

७६—मूत्रकृच्छ्रादौ वंगेश्वररसः

रसवंगं सममादाय (?) द्वयोः कृत्वा च मेलनं।
कुमारीरससंयुक्तं दिनमेकं च मर्दयेत् ॥ ॥
त्रिफलाकषाय संयुक्तं द्विदिनं मर्दयेत्तथा।
वालुकायंत्रयोगेन क्रमवृद्धेन वह्निना ॥ २ ॥
मृदुमध्यदीप्तज्वालेन पर्पटी-यंत्रपाचिता।
अश्वगंधामृताविश्वमोचारसशतावरी ॥ ३ ॥

गोक्षुरकर्कटाख्यौ च वाराही कंदमागधी।
त्रिफला कर्कटीचैव यष्टीचमधुका समा ॥ ४ ॥
समांशं सितया मिश्रं भुंजीत निष्कमात्रकम्।
रसो बंगेश्वरो नाम तवक्षीरेण सह लिहेत ॥ ५ ॥
प्रातःकाले च पीयूषलवणाम्रं च वर्जयेत्।
मूत्रकृच्छ्रं च बहुमूत्रं रक्तशुक्रप्रमेहकं ॥ ६ ॥
मधुप्रमेह-दौर्बल्ये नष्टलिंगं तथैव च।
सर्वप्रमेहशांत्यर्थं बंगेश्वररसः स्मृतः ॥ ७ ॥
अन्नं तु पंचरात्रेण दशरात्रेण दुग्धकम्।
दधि विंशतिरात्रेण घृतं मासेन जीर्यति ॥ ८ ॥
एतद्वंगेश्वरो नाम सर्वयोगेषु चोत्तमः।
सर्वरोगनिकृत्यर्थं पूज्यपादेन भाषितः ॥ ९ ॥

टीका—शुद्ध पारा तथा वंग दोनों को बराबर मिला कर घृतकुंवार के रस में बराबर एक दिन तथा त्रिफला के काढ़े में ३ दिन तक मर्दन करे तब सुखा और शीशी में भर कर बालुकायंत्र से क्रमपूर्वक मृदु, मध्यम तीव्र आंच देवे। जब बालुका यंत्र की शीशी में पर्पटी के समान बन जाय तब निकाल कर असगंध शतावर, गुर्च, सोंठ ? जल का कंद गोखुरू, बांझ-ककोड़ा बाराही कंद, पीपल, त्रिफला, कोंच के बीज तथा मुलहठी इन सब का चूर्ण बना कर इसके समान मिश्री मिलाकर तवाखीर के साथ सेवन करे तो इससे नीचे लिखे रोग शांत होवें। इसे प्रातः काल खाना चाहिए। किन्तु नमक और आम न खाये। इसके सेवन से मूत्रकृच्छ्र, तथा बहुमूत्र, रक्त प्रमेह, शुक्रप्रमेह, मधुप्रमेह, दुर्बलता एवं इन्द्रिय की कमजोरी शांत हो जाती है। सब प्रकार के प्रमेहों को शांत करने के लिये यह वंगेश्वर रस उत्तम है। इसके सेवन करने से पांच दिन में अन्न, दश दिन में दूध, बीस दिन में दही, तथा एक माह में घी हजम होने लगता है। यह बङ्गेश्वर नाम का रस सब योगों में उत्तम योग है। यह पूज्यपाद स्वामी ने सब रोगों को दूर करने के लिये कहा है। इसकी मात्रा एक निष्क प्रमाण है।

७७—विबन्धे वज्रभेदीरसः

चित्रकं त्रिवृता ग्राह्या, त्रिफला च कटुत्रयम्।
प्रत्येकं सूक्ष्मंचूर्णं तु द्विगुणं च स्नुहीपयः ॥ १ ॥

पंचगुंजामिदं खादेद्धत्रभेदिरसोह्ययं।
विबंधं नाशयत्याशु पूज्यपादेन भाषितः॥ २॥

टीका—चित्रक, निशोथ, त्रिफला, सोंठ, मिर्च और पीपल यह प्रत्येक चीज समान भाग लेकर कूट कपड़छन कर के एकत्रित करे फिर इसमें दूना थूहर का दूध मिलाकर घोंटे, और सुखा कर तैयार कर रख ले। इसकी पांच रत्ती की मात्रा है। अवस्था के अनुसार सेवन करे तो बराबर दस्त होवे। कब्ज को दूर करनेवाला यह रस पूज्यपाद स्वामी ने कहा है।

७८—विबंधे इच्छाभेदिरसः

सूतं गंधं तथा व्योषं टंकणं नागराभये।
जयपालबीजसंयुक्तं इच्छाभेदी रसः स्मृतः॥ १॥
चतुर्गुंजाप्रमाणेन विरेकः कथ्यते बुधैः।
शीघ्रं विरेचयत्याशु पूज्यपादेन भाषितः॥ २॥

टीका—शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, सोंठ, मिर्च, पीपल, भुना हुआ चौकियासुहागा, सोंठ, बड़ी हर्र का छिलका, तथा जमालगोटा के शुद्धबीज इन सब को समभाग एकत्रित करके चार चार रत्ती के प्रमाण से सेवन करे तो बराबर शीघ्र ही दस्त हो। ऐसा पूज्यपाद ने कहा है।

७९—ज्वरादौ ज्वर-कराटकरसः

पारदं टंकणं चैव सैंधवं त्रिफला युतं।
त्रिकटुं च समं सर्वं जयपालं सर्वतुल्यकं (?)॥ १॥
चतुर्गुंजमिदं खादेत् रसोऽयं ज्वरकंटकः।
सर्वज्वरविनाशोऽयं पूज्यपादेन भाषितः॥ २॥

टीका—शुद्ध पारा, सुहागे का फूला, सेंधा नमक तथा त्रिफला त्रिकटु ये सब समान भाग लेकर कूट कपड़छन करे तथा सब के बराबर जमालगोटा लेकर पीस कर रख लेवे। इसको चार चार रत्ती के प्रमाण से अनुपान-विशेष के द्वारा सेवन करने से सब प्रकार का ज्वर शांत होता है, यह पूज्यपाद स्वामी की उक्ति है।

८०—शीतज्वरे शीत-कराटकरसः

पारदं टंकणं तालकमाद्द्विगुणसंयुतं।
कारवेल्ल्याः द्रवैर्मर्द्यं स्ताम्रपात्रे विलेपयेत् ॥ १ ॥
दिनैकं बालुकायंत्रे पाचयेत्स्वांगशीतलं।
चतुर्गुंजमिदं खादेत् पर्ण-खंडेन योजयेत् ॥ २ ॥
दध्योदनमिदं पथ्यं रसोऽयं शीत-कंटकः।
शीघ्रं शीतज्वरं हंति पूज्यपादेन भाषितः ॥ ३ ॥

टीका—शुद्ध पारा १ भाग सुहागा २ भाग, एवं शुद्ध हरताल ४ भाग (इस क्रम से एक से दूसरा दूना २ लेकर) सब को एकत्रित कर करेले के फल के रस में मर्दन कर के शुद्ध तामे के पत्र पर लेपन करे तथा उसको ताम्रपत्र सहित बालुका-यन्त्र में पकावे। जब स्वांग शीतल हो जाय तब उस को निकाल और घोट कर रख लेवे तथा चार रत्ती के प्रमाण से पान के रस के साथ सेवन करे तो शीतज्वर दूर होवे। इसके ऊपर दही-भातका पथ्य है। पूज्यपाद स्वामी ने इसे शीतज्वर को नाश करनेवाला बतलाया है।

८१—शीतज्वरे शीतकुठाररसः

पारदं रसकं तालं समं निर्गुंडिकाद्रवैः।
मर्दयेत्ताम्रपत्रेण लेपयेद् वैद्यपुंगवः ॥ १ ॥
बालुकायंत्रमध्यस्थं दिनैकं पाचयेत्तथा।
तद्भस्म च समं योज्यं यत्नाद्भस्म च टंकणं ॥ २ ॥
कारवेल्याः द्रवैस्सर्वं बटी गुंजाप्रमाणिका।
नागवल्याः द्रवैर्देया रसः शीतकुठारकः ॥ ३ ॥

टीका—शुद्ध पारा, शुद्ध खपरिया हरताल, तबकिया ये तीनों भाग बराबर लेकर नेगड़ की पत्ती के रस में मर्दन करके तथा शुद्ध ताम्र पत्र पर लेप करे और उसको बालुकायंत्र में १ दिन भर पकावे तथा जब पक जाय तब उसको ठंडा होने पर निकाल लेवे। उसके बराबर चौकिया सुहागे का फूला लेकर दोनों को करेले के रस के साथ मर्दन कर के एक एक रत्ती प्रमाण गोली बना लेवे और पान के रस के साथ देवै तो शीतज्वर शांत होता है।

८२—प्रदरादौ पंचबाणरसः

मृतसूताभ्रहेमं च विधाय पर्पटी तथा।
अरण्यकदलीकंदमश्वगंधाशतावरी ॥१॥
विकंटकामृता विश्ववानरीबीजयष्टिका।
धात्री च शाल्मली सोरश्च तु सारेण मर्दयेत् ॥२॥
वटी गुंजाप्रमाणेन सिताक्षीरं पिबेदनु।
पथ्यं च मधुराहारं पंचबाणरसोऽह्वयं ॥३॥
योगोऽयं सर्वरोगघ्नो विशेषं प्रदरं तथा।
प्रमेहे सेतुवज्ज्ञेयो पूज्यपादेन भाषितः ॥४॥

टीका—पारे की भस्म, अभ्रक भस्म एवं सोने की भस्म इन तीनों को बराबर लेकर एकत्रित कर घोंट कर पपड़ी बनावे फिर जंगली केले के कन्द के रस में तथा असगंध, शतावरी, गोखरू गुर्च, सोंठ, कौंच के बीज, मुलहठी, आंवला, सेमल तथा [illegible], इन सब के रस में एक एक दिन अलग अलग मर्दन करे एवं एक एक रत्ती के बराबर गोलियां बनावे। रोग की अवस्था को देख कर सब रोगों में प्रयोग करे और ऊपर से दूध, मिश्री पिलावे तो इससे सब प्रकार के धातु-सम्बन्धी रोग अच्छे होते हैं। तथा खास कर प्रदर प्रमेह शांत होते हैं। पथ्य मीठा भोजन करे—ऐसा स्वामी जी ने कहा है।

८३—मन्दाग्नौ कालाग्निरसः

शुद्धं सूतं विषं गंधमजमोदं पलत्रयम्।
सर्ज्जीक्षारयवक्षारौ वह्निसैंधवजीरकम् ॥ १ ॥
सौवर्चलं विडंगानि टंकणं च कटुत्रयम्।
विषमुष्टिं सर्वतुल्यं जंबीररसमर्दितम् ॥ २ ॥
मरिचप्रमाणवटिकां चाग्नि मान्द्यप्रशांतये।
अशीतिवातजान् रोगान् गुल्मं च ग्रहणीं जयेत् ॥ ३ ॥
रसः कालाग्निरुद्रोऽयं पूज्यपादेन निर्मितः।

टीका—शुद्ध पारा, शुद्ध बिषनाग, शुद्ध आंवलासार गंधक ये एक एक पल तथा अजमोदा ३ पल, सज्जीखार १ पल, जवाखार १ पल, चित्रक १ पल, सेंधा नमक १ पल, सफेद जीरा १ पल, काला नमक १ पल, बायबिडङ्ग १ पल, भुना चौकिया सुहागा १ पल, सोंठ मिर्च पीपल ये तीनों १-१ पल तथा शुद्ध कुचला सब के बराबर ले, कूट एवं कपड़-

छन कर जम्बीरी नीबू के रस में मर्दन कर के काली मिर्च के बराबर गोली बनावे। यह गोली अनुपान विशेष से अग्निमांद्य की शान्ति के लिये लाभदायक है। यह अस्सी प्रकार के वायु के रोग सर्व प्रकार के गुल्म रोग तथाग्रहणी रोग इन सब रोगों के नाश करने के लिये हितकारी है। यह कालाग्नि रुद्ररस श्री पूज्यपाद स्वामी जी ने कहा है।

भावार्थ—आचार्य जी ने इस रसका अनुपान तथा मात्रा नहीं बतलाई है। इस लिये वैद्य लोग रोगी का तथा रोग का बलाबल विचार कर मात्रा तथा अनुपान की कल्पना स्वयं करें।

८४—अजीर्णो अजीर्णकंटकरसः

शुद्धं सूतं विषं गंधं समं सर्वं विचूर्णयेत्।
मरिचं सर्वसाम्यांशं कंटकारीफलद्रवैः॥ १॥
मर्दयेत् भावयेत्सर्वं चैकविंशतिवारकं।
वटी गुंजात्रयं खादेत् सर्वाजीर्णं च नाशयेत्॥ २॥
अजीर्ण-कंटकाख्योऽयं रसो हंति विषूचिकाः।
अग्निमांद्यविषघ्नोऽयं पूज्यपादेन भाषितः॥ ३॥

टीका—शुद्ध पारा, शुद्ध विषनाग, शुद्ध गंधक ये तीनों बराबर बराबर लेकर सब के बराबर काली मिर्च सब को कूट और कपडछन करके छोटी कटहली के फलों के रस की इक्कीस भावना देवे तथा तीन रत्ती की प्रमाण गोलियां बांधे इन गोलियों को अनुपान-विशेष से सेवन करावे तो सब प्रकार का अजीर्ण तथा सब प्रकार की विषूचिका शांत होती है तथा यह अजीर्ण कण्टक रस अग्निमांद्य-रूपी विष को नाश करनेवाला श्री-पूज्यपाद स्वामी ने कहा है।

८५—वातरोगे रसादियोगः

रसभागो भवेदेको गंधको द्विगुणो मतः।
त्रिगुणं तु विषं ग्राह्यं कणभागचतुष्टयम्॥ १॥
मरिचं पंचभागं च सर्वं खल्वे विमर्दयेत्।
खल्वे तु दिनमेकं तु निंबूनीरैश्च मर्दयेत्॥ २॥
सितसर्षपमात्रां तु वटिकां कारयेद्भिषक्।
चतुरशीति वात-रोगान् चत्वारिंशत् कफोद्भवान्॥ ३॥

रोगान् कुष्ठान्सर्वाणि गुल्ममेहोदराणि च।
हन्यात् शूलानि सर्वाणि विषूचीं ग्रहणीमपि ॥ ४ ॥
दीपनं कुरुते चाग्निं पूज्यपादेन भाषितः।
दध्यन्नं दापयेत् पथ्यं शैत्यमुपचारयेत् सदा ॥ ५ ॥

टीका—शुद्ध पारा १ भाग, शुद्ध गंधक २ भाग, शुद्ध विषनाग ३ भाग, पीपल ४ भाग, काली मिर्च ५ भाग, इन सबको मिला कर कूट कपड़छन कर खरल में नींबू के रस में घोंट तथा सफेद सरसों के बराबर गोली बांधे तथा रोगी के बलानुसार योग्य अनुपान से इसका सेवन करावे तो ८४ प्रकार के वातरोग ४० प्रकार के कफरोग, सब प्रकार के कोढ़, सब प्रकार के गुल्म प्रमेह उदर रोग, शूल, विषूचिका, एवं संग्रहणी वगैरह को नाश करता है। अग्नि को भी संदीपन करता है। इसके ऊपर दही-भात का पथ्य है। और इसके सेवन पर शीतल उपचार करना चाहिये ऐसा श्रीपूज्यपाद स्वामी ने कहा है।

८६——शूले शूलकुठाररसः

टंकणं पारदं गंधं त्रिफला-व्योषतालकं।
विषं ताम्रं च जयपालं भृंगरस्य रसमर्दितम् ॥ १ ॥
गुंजमात्रेण गुटिकां नागवल्लीरसेन तु।
आर्द्रकस्य रसेनैव यथायोग्यं प्रयोजयेत् ॥ २ ॥
शूलान् शूलकुठारोऽयं विष्णुचक्रमिवासुरान्।
विशेषेणानुपानेन पूज्यपादेन भाषितः ॥ ३ ॥

टीक—चौकिया सुहागे का फूला, शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, बड़ी हर्र का छिलका, बहेरे का बकला, आंवला तबकिया हरताल की भस्म, शुद्ध विषनाग, तांबे की भस्म और शुद्ध जमालगोटा इन सबको बराबर बराबर लेकर भंगरा के रस में दिन भर मर्दन करके एक एक रत्ती प्रमाण गोली बनावे तथा इसको पान के रस के साथ अथवा अद्रख के रस के साथ योग्य मात्रा से देवे। विशेष अवस्था में विशेष अनुपान से देने से सम्पूर्ण प्रकार के शूलों को नाश करे। जिस प्रकार कृष्णचन्द्र जी ने सुदर्शन चक्र से असुरों का नाश किया था वैसा ही यह रस उल्लिखित रोगों का नाश करता है। ऐसा पूज्यपाद स्वामी ने कहा है।

८७—शीतज्वरे श्वेतभास्कररसः

एकं च रुद्रबीजं च दश भागं विषोपलं।
अर्कक्षीरेण संमर्द्य दिनमेकं निरंतरं ॥१॥
द्व्यंगुलं वालुकां क्षिप्त्वा मूषायां रसगोलकं।
मूषायाश्च निःसार्य दद्यात लघुपुटं पचेत् ॥२॥
पश्चादुद्धृत्य तद्भस्म काकमाच्या रसेन तु।
मुद्गप्रमाणगुटिकां दद्यात् क्षीरेण मिश्रिताम् ॥३॥
शीतज्वरहरश्चैव रसोऽयं श्वेतभास्करः।
क्षीरान्नं भोजयेत् पथ्यं लवणाम्लं च वर्जयेत् ॥४॥

टीका—एक भाग शुद्ध पारा तथा दश भाग शुद्ध संखिया इन दोनों को मिला कर खरल में अकौड़े के दूध में एकदिन मर्दन करे तथा सुखा कर एक कांच का मूषा (शीशी) में भरकर कपड़मिट्टी करके वालुकायंत्र में पकावे। जब स्वांग शीतल हो जाय तब निकाले तथा मूषा से निकाल कर मकोय के रस से मर्दन करके एक लघु पुट देवे और इसको एक मूंग के बराबर एक पाव गोदुग्ध के अनुपान से सेवन करावे तो यह शीतज्वर को दूर करता है। इसके ऊपर दूध भात का तथा और भी दूध के भोजन का पथ्य देवे, नमक और खटाई खाने का परित्याग कर देवे।

---

८८ ग्रहणीरोगे ग्रहणीकपाटरसः

दरदामृतधत्तूरबीजं टंकणधातकी।
लवंगातिविषावार्धिशोकबीजं समांशकम् ॥१॥
सर्वं समं च तस्यार्धं गगनं च नियोजयेत्।
तस्यार्धं फेनं संयोज्य मर्दयेत् दिवसत्रयम् ॥२॥
धत्तूरमूलक्वाथेन वटीं कुर्याच्च बुद्धिमान्।
लेह्योऽयं ग्राह्यवस्तूनामेकेन मधुमिश्रितम् ॥३॥
लिहेत् प्रवाहे ग्रहणीनाशनो नात्र संशयः।
ग्रहणीकपाटनामोऽयं पूज्यपादेन भाषितः ॥४॥

टीका—शुद्ध सिंगरफ, शुद्ध विषनाग, शुद्ध धतूरे के बीज, सोहागे का फूला, धवई के फूल, लौंग,-अतीस, समुद्रशोष के बीज ये सब बराबर बराबर लेवे और अभ्रक-भस्म सबसे आधा तथा अभ्रक-भस्म से आधा समुद्रफेन मिलावे फिर सबको एकत्रित करके तीन दिन तक धतूरे को जड़ के काढ़े से घोंटे और गोली बनावे। बेलगिरी अथवा जायफल या अतीस के अनुपान से शहद के साथ देवे तो इससे प्रवाहिका-ग्रहणी शांत होवे। यह ग्रहणी-कपाटरस पूज्यपाद स्वामी ने कहा है।

८६——शूलादौ तालकादिरस:

तालकं रसकमाक्षिकाशिला गंधसूतमपि साम्यमानतः।
सर्वमेव खलु:चूर्णितं पचेत् वासकप्रसुरसार्द्र वारिणा॥१॥
मर्दितं तदनु ताम्रहेमजौ संपुटं क्षिपितसूतसाम्यकौ।
मृत्पटेन परिवेष्ट्य पाचितो व्योषनागररसैर्विभावितः॥२॥
तालकादिरसमस्ति सः स्वयं भास्करस्तु कुरुते खगं यथा।
एष एव विनियोजितो द्रुतं रोगराजतमसो विनाशकः॥३॥
चित्रकार्द्र कररसेन योजितो घोरशूलकफवातनाशनः।
नागराज्यजयपालमिश्रितोऽजीर्णगुल्मकृमिनाशने परः॥४॥

टीका—शुद्ध तबकिया हरताल, शुद्ध खपरिया, शुद्ध सोनामक्खी, शुद्ध मैनशिल, शुद्ध गंधक, शुद्ध पारा ये सब वस्तुएँ बराबर बराबर लेकर सबको एकत्रित कर अडूसा, तुलसी एवं अदरख के स्वरस से अलग अलग घोंटे, जब घुट जावे तब पारे के बराबर ताम्बे की भस्म तथा सोने की भस्म डाले और सबको सुखाकर संपुट में बंदकर कपड़मिट्टी करके भस्म कर लेवे। जब स्वांग शीतल हो जाय तब निकालकर त्रिकुट और सोंठ के काढ़े की अलग अलग भावना देवे और सुखाकर रख लेवे—बस यह तालकादिरस सिद्ध हो गया समझें। यह रस युक्तिपूर्वक प्रयोग किया जाय तो जिस प्रकार प्रखर सूर्य अन्धकार को नाश करता है, उसी प्रकार यह तालकादिरस अनेक रोगों को नाश करनेवाला होता है तथा विशेषकर यह रस चित्रक और अदरख के रस के साथ देने से भयंकर शूल अथवा कफजन्य और वातजन्य अनेक रोग शांत होते हैं। सोंठ, घी, शुद्ध जमालगोटा के साथ देने से अजीर्ण, गुल्मरोग और कृमिरोग भी शांत होते हैं।

६०—पित्तरोगे चन्द्रकलाधररसः

प्रत्येकं तोलमानेन—सूतकांताभ्रभस्मकं ।
समं समस्तैर्गंधश्च कृत्वा कज्जलिकां त्र्यहं ॥१॥
मुस्तादाडिमदूर्वाकैः केतकीस्तनवारिभिः ।
सहदेव्या कुमार्याश्च पर्पटस्यापि वारिणा ॥२॥
एषां रसेन क्वाथैर्वा शतावर्या रसेन च ।
भावयित्वा प्रयत्नेन दिवसे दिवसे पृथक् ॥३॥
तिक्तागुडूचिकासत्त्वं पर्पटोशीरमाधवी ।
श्रीगंधं निखिलानां तु समानं सूक्ष्मचूर्णकम् ॥४॥
तद्द्राक्षादिकषायेण सप्तधा परिभावयेत् ।
सर्वेषां परिशोष्याथ वटिकाश्चणकैः समाः ॥५॥
अयश्चन्द्रकलानाम—रसेन्द्रः परिकीर्तितः ।
सर्वपित्तगदध्वंसी वातपित्तगदापहः ॥६॥
अन्तर्बाह्यमहाताप-विध्वंसनमहाघनः ।
ग्रीष्मकाले शरत्काले विशेषेण प्रशस्यते ॥७॥
हन्ते चाग्निमांद्यं च महातापज्वरं जयेत् ।
बहुमूत्रं हरत्याशु स्त्रीणां रक्तमहास्रवम् ॥८॥
ऊर्ध्वगं रक्तपित्तं च रक्तवांतिविशेषकं ।
मूत्रकृच्छ्राणि सर्वाणि नाशयेन्नात्र संशयः ॥९॥

टीका—शुद्ध पारा १ भाग, अभ्रक भस्म १ भाग—कांतलोह भस्म १ भाग तथा शुद्ध गंधक ३ भाग लेने चाहिये। पहले पारा और गंधक का तीन दिन तक कज्जली बनावे, फिर उसमें अभ्रकभस्म तथा कांतलोहभस्म मिलाकर उसको खरल में डालकर नागरमोथा, अनार की छाल, दूर्बा, केवड़े का दूध तथा सहदेवी, घीकुमारी, पित्तपापड़ा और शतावरी के रस से अथवा काढ़े से अलग-अलग एक-एक दिन भावना देवे। भावना देने के बाद कुटकी का सत्त्व, गुर्च का सत्त्व, पित्तपापड़ा, खस, माधवीलता और चन्दन इन सब का चूर्ण करके उसी औषधि के बराबर लेकर मिला देवे—और उसमें द्राक्षादि के काढ़े से सात भावना देवे तथा चना के बराबर गोली बांध लेवे। यह चन्द्रकलाधर सेवन करने से सब प्रकार के पित्तजन्य रोग तथा वात-पित्तरोग, बाह्याभ्यन्तर के महाताप को शांत करने के लिये घनघोर मेघ के समान है। ग्रीष्म ऋतु एवं शरद ऋतु में विशेष लाभप्रद है। यह रस अग्निमांद्य को तथा महाताप-सहित ज्वर को जीतता है और हरएक प्रकार की थकावट, बहुमूत्र, स्त्रियों का रक्तप्रदर, उर्ध्वगरक्तपित्त, रक्त की कमी, और मूत्रकृच्छ्रता इत्यादि रोगों को दूर करता है, इसमें संशय नहीं करना चाहिये।

६१—वातरोगे कल्पवृक्षरसः

मृतं लोहं मृतं सूतं मृतं ताम्रं च रौप्यकम्।
मौक्तिकं नीलगंधं च चामृतं मर्दयेत्तथा ॥१॥
अर्कमूलं रक्तचित्रं गजकणा च पुनर्नवा।
बृहती चेश्वरी मूलकषायैः मर्दयेद्भिषक् ॥२॥
चतुर्गुंजाप्रमाणेन लशुनं कटुकत्रयम्।
रक्तचित्र-कषायेण निर्गुण्ड्या मार्कवैश्च सः ॥३॥
अनुपानविशेषेण वातरक्तहरश्च सः।
कल्पवृक्षरसो नाम विख्यातः सिद्धसम्मतः ॥४॥
चतुरशीतिवातानि गुल्मरोगक्षयाणि च।
अम्लपित्तं निहंत्याशु रक्तवांतिप्रशांतये ॥५॥
नानारोगहरश्चैव तत्तद्रोगानुपानतः।
पूज्यपादेन विभुना सर्वरोगविनाशकः ॥६॥

टीका—लोह भस्म, पारे की भस्म, तांबे की भस्म, चांदी की भस्म, शुद्ध मोती, नीलवर्ण का शुद्ध गंधक, शुद्ध विषनाग इन सबको समान भाग लेवें तथा इनको खरल में डालकर अकोड़े की जड़, लाल चित्रक, गजपीपल, पुनर्नवा, बड़ी कटेरी, ईश्वरमूल इन सब के काढ़े से अलग अलग भावना देवें तथा सुखाकर रख लेवें और चार चार रत्ती के प्रमाण से लहसुन के रस के साथ एवं त्रिकटु, लालचित्रक, नेगड़, भंगरा के काढ़े के साथ अथवा अनुपान-विशेष से देवें तो इससे वातरक्त रोग शांत होता है। यह कल्पवृक्ष रस सर्व रसों में श्रेष्ठ है। यह ८४ प्रकार के वातरोगों को, सर्व प्रकार के गुल्मरोगों को, क्षयरोग, अम्लपित्त, रक्तवांति को तथा अनुपानविशेष से अनेक रोगों को हरनेवाला है, ऐसा पूज्यपाद स्वामी ने कहा है।

६२—शूलादौ शूलकुठाररसः

रविरसभावितसद्यः क्षारत्रयं पंचलवणं च।
प्रत्येकं च समानं लशुनरसैरार्द्रकस्य संयुक्तम् ॥१॥
हंति पारगामशूलं जलोदरं सर्वशूलकटिशूले।
हरते च कुक्षिशूलं सद्योऽयं शूलकुठाररस एषः ॥२॥

टीका—सज्जीखार, जवाखार, टंकणखार, समुद्र नमक, काली नमक, सेंधा नमक, बिडानमक और साम्हर नमक (पांगा) इन आठों को समान भाग लेकर अकौड़े के दूध की भावना देकर सुखाकर धर लेवे, फिर इसको लहसुन एवं अदरख के रस के साथ सेवन करावे तो इससे परिणाम-शूल, जलोदर, पार्श्वशूल, कटिशूल तथा कुक्षिशूल शांत होते हैं।

६३—विबंधे इच्छाभेदिरसः

त्रिकटुं टंकणं चैव पारदं शुद्धगंधकं।
जयपालचूर्णं त्रिगुण्यं गुडेन वटिकां कुरु ॥१॥
विरेचनकरश्चासौ मूत्ररोगविनाशनः।
दीपने पाचने कुष्ठे ज्वरे तीव्रे च शूलके ॥२॥
मन्दाग्नौ चाश्मरीरोगे चानुपानविशेषतः।
रोगिणश्च ब' दृष्ट्वा प्रयुंज्यात् भिषगुत्तमः ॥३॥
संशोधनः शीतजलेन सम्यक् संग्राहकश्चोष्णजलेन सत्यम्।
सर्वेषु रोगेषु च सिद्धिदः स्यात् श्रीपूज्यपादैः कथितोऽनुपानैः ॥४॥

टीका—सोंठ, कालीमिर्च, पीपल, चौकिया सुहागा, शुद्ध पारा और शुद्ध गंधक इन सबको बराबर लेवे तथा पहले पारे और गंधक की कज्जली बनावे पश्चात् ऊपर की औषधियां मिलावे और शुद्ध जमालगोटा तीन भाग लेकर खूब पीसे तथा पुराने गुड़ के साथ गोली बांध लेवे। इसको अनुपान-विशेष से सेवन करने से विरेचन एवं मूत्ररोग शांत होता है। अग्नि को दीपन करनेवाली, पाचन करनेवाली, कोढ़ में हितकारी, ज्वर में, शूल में, अग्निमांद्य में एवं अश्मरी रोग में, उत्तम वैद्य रोगी का बल देखकर इसका प्रयोग करें तो यह इच्छाभेदी रस की गोली हितकारी है। यह इच्छाभेदीरस शीतल जल के साथ दोषों को शुद्ध करनेवाला तथा उष्ण जल के साथ संग्राहक है अर्थात् दस्तों को रोकनेवाला है।

६४—गुल्मादौ भैरवीरसः

सूतकं कृष्णजीरं च विडंगं गंधकानि च।
सौवर्चलं समं व्योषं त्रिफलातिविषाणि च ॥१॥
सैंधवं चामृतं युक्तं हेमत्तोयाश्च तद्रसैः।
मर्दयेत् गुटिकां कृत्वा प्रमाणं गुंजमात्रया ॥२॥

गुंजाद्वयं च वटिका दातव्या चार्द्रकैः रसैः ।
वातजन्यं च गुल्मं च शूलं च जठरानलम् ॥३॥
पूज्यपादेन कथितश्चोत्तमो भैरवीरसः ।

टीका—शुद्ध पारा, स्याहजीरा, वायविडंग, शुद्ध गंधक, काला नमक, सोंठ, मिर्च, पीपल, त्रिफला, अतीस, सेंधा नमक, शुद्ध विषनाग इन सबको समान भाग लेकर पहिले पारे और गंधक की कज्जली बनावे, पश्चात् सब औषधियाँ कूट कपड़छन करके हेमत्तीरी (सत्यानाशी) के स्वरस में घोंट कर एक-एक रत्ती की गोली बांधे। दो-दो गोली सुबह शाम अदरख के रस के साथ देवे तो वातजन्य गुल्मरोग एवं शूल रोग के विनाश के साथ जठराग्नि दीप्त हो जाती है। यह भैरवीरस पूज्यपाद स्वामी ने कहा है।

६५—शीतज्वरादौ स्वच्छन्दभैरवीरसः

समभागं च संग्राह्य पारदामृतगंधकम् ।
जातीफलं च भागार्धं दत्त्वा कुर्याच्च कज्जलीम् ॥१॥
सर्वार्धं मागधीचूर्णं खल्वयित्वा तु दापयेत् ।
गुंजाद्वयं त्रयं चापि नागवल्लीदलेन वा ॥२॥
आर्द्रकस्य रसेनापि यत्नात् पूर्वं निषेवितम् ।
शीतज्वरे सन्निपाते विषूचीविषमज्वरे ॥३॥
जीर्णज्वरे च मन्दाग्नौ शिरोरोगे च दारुणे ।
प्रयुज्य भिषजः सर्वे रसं स्वच्छन्दभैरवं ॥४॥
मुहूर्तात् सेवने पश्चात् ततः कुर्यात् क्रियामिमां ।
तक्रत्तीरं सितां दद्यात् ततः शीतेन वारिणा ॥५॥
पथ्यं दध्योदनं कुर्यात् आर्द्राहारं तु कालजित् ।
यथा सूर्योदयेण स्यात्तमसः नाशनं परम् ॥६॥
स्वच्छन्दभैरवेण स्यात्तथा सर्वामयस्य तु ।
स्वच्छन्दभैरवीनामा पूज्यपादेन भाषितः ॥७॥

टीका—शुद्ध पारा, शुद्ध विषनाग, शुद्ध गंधक एक-एक भाग लेवे तथा जायफल आधा भाग लेवे। इन सब की कज्जली करके सब से आधी पीपल लेकर सबको सुखा एवं खरल कर २ रत्ती या तीन रत्ती पान के रस के साथ अथवा अदरख के रस के साथ यत्नपूर्वक देवे तो इससे सन्निपात, विषूचिका, विषमज्वर, जीर्णज्वर, मन्दाग्नि तथा कठिन से कठिन

शिरोरोग भी अच्छे हो जाते हैं। वैद्य महाशय इसको यत्नपूर्वक प्रयोग करें। इस रस को देने के एक मूहूर्त पश्चात् तवाखीर तथा शक्कर ठंढे पानी के साथ खाने को देवे और दही भात का पथ्य देवे तथा तरल (पतली) वस्तु का आहार देवे। जिस प्रकार सूर्योदय से अन्धकार का नाश हो जाता है उसी प्रकार स्वच्छन्द भैरवरस के सेवन करने से रोगरूपी अन्धकार नष्ट हो जाता है, ऐसा पूज्यपाद स्वामी ने कहा है।

९६—मन्दाग्नौ कालाग्निरुद्ररसः

बज्रसूताभ्रस्वर्णार्कताराताीक्ष्णायसं क्रमात्।
भागवृद्ध्यामृतं सर्वं समाहं चित्रकद्रवैः ॥१॥
मर्दयेत् मातुलुंगाम्लैः जंबीरस्य दिनत्रयम्।
शिग्रुमूलद्रवैः क्वाथैः कणाक्वाथैः दिनत्रयम् ॥२॥
त्रिदिनं त्रिफला-क्वाथैः शुंठीमारीचजैः त्रयम्।
जातीफलं लवंगैलात्वचापत्रककेशरैः ॥३॥
कोलांजनयुतक्वाथैः भावयेद्दिवसत्रयम्।
आर्द्रकस्य द्रवैः सप्तदिवसं भावयेत् पुनः ॥४॥
शोषितं चूर्णयेत् श्लक्ष्णं चूर्णपादं च टंकणम्।
टंकणांशं वत्सनाभं चूर्णीकृत्वा विमिश्रयेत् ॥५॥
त्रिकटुत्रिफलाब्राह्मीचातुर्जातिकसैंधवम्।
सौवर्चलं च सामुद्रं चूर्णमेषां च तत्समम् ॥६॥
समं कृत्वा प्रयोज्यं च तत्सर्वं चार्द्रकद्रवैः।
शिग्रुत्थमातुलुंगाम्लैः घोटयित्वा वटी कृता ॥७॥
रसः कालाग्निरुद्रोऽयं त्रिगुंजं भक्षयेत् सदा।
अग्निर्दीपकरः ख्यातः सर्ववातकुलांतकः ॥८॥
स्थूलानां कुरुते कार्श्यं कृशानां स्थौल्यकारकम्।
अनुपानविशेषात्तु तत्तद्रोगे नियोजयेत् ॥९॥
लेपसेकावगाहादीन् योजयेत् कार्ययुक्तितः।
साध्यासाध्यं निहंत्याशु मंडलानां न संशयः ॥१०॥
पूज्यपादेन विभुना चोक्तो वातविनाशनः।

टीका—वज्र का भस्म १ भाग, पारे की भस्म २ भाग, अभ्रक की भस्म ३ भाग, सोने की भस्म ४ भाग, तांबे की भस्म ५ भाग, चांदी की भस्म ६ भाग, और कांतलोह भस्म ७ भाग इन सब को एकत्रित कर चित्रक के काढ़े से ७ दिन तक मर्दन करे पश्चात् बिजोरा नींबू, जम्बीरी नींबू के रस से, मीठा सांजना की जड़ के काढ़े से, पीपल के काढ़े से, त्रिफला, सोंठ, काली मिर्च, जायफल, लौंग, इलायची, दालचीनी, तेजपत्र, नागकेशर, बेर, और अञ्जन इन सब के काढ़े से अलग अलग तीन तीन दिन तक तथा अदरख के रस से ७ दिन तक मर्दन करे फिर उसको सुखाकर महान चूर्ण करे। चूर्ण से चौथाई भाग सुहागे का फूला तथा सुहागे के बराबर शुद्ध विषनाग लेकर सबको मिलावे। बाद त्रिकटु, त्रिफला, चित्रक, दालचीनी, इलायची, तेजपत्र, नागकेशर, सेंधानमक, काला नमक इन सबको सम भाग में चूर्ण बनावे और ऊपर के चूर्ण के बराबर ही लेकर सबको एकत्रित करके मीठा सांजना तथा बिजोरा नींबू के रस में घोट कर एक एक रत्ती की गोली बनावे। तीन तीन रत्ती के प्रमाण से इस गोली को योग्य अनुपान से देवे तो यह अग्नि को दीप्त करनेवाला, वात के सब प्रकार के विकारों को दूर करनेवाला, और मनुष्यों को कृश और कृश मनुष्यों को मोटा करनेवाला होता है। अनुपान-विशेष से यह अनेक रोगों का नाश करनेवाला है। (इसके प्रयोग के समय, यदि लेप, सेंक, अवगाह (जल में बैठाना) इत्यादि क्रियाएँ करना हों तो युक्तिपूर्वक करे)। इसके सेवन से साध्यासाध्य वातरक्त भी शांत हो जाता है। सर्वरोगों को नाश करनेवाला पूज्यपाद स्वामी का कहा हुआ यह उत्तम योग है।

९७—शीतज्वर वडवानलरसः

रसाष्टकममृतं सप्त षड्गंधं पञ्चतालकम्।
दंतिबीजानि षड्भागं त्रिभागं सटंकणम् ॥१॥
चतुर्थं धूर्तबीजस्य शुल्बभस्म त्रयस्त्र च।
एतानि सर्वभागानि (?) वह्निमूलकषायकैः ॥२॥
मुद्गमात्रवटीं कृत्वा चार्द्र कद्रवसंयुतम्।
शीतज्वरं सन्निपातं सद्यज्वरविनाशनः ॥३॥
बड़वानलनामायं सर्ववातामयापहः।
शीतज्वरविध्वंसोऽयं पूज्यपादेन भाषितः ॥४॥

टीका—शुद्ध पारा आठ भाग, शुद्ध विषनाग सातभाग, शुद्ध आंवलासार गंधक छः

भाग, शुद्ध तबकिया हरताल छः भाग, शुद्ध जमालगोटा के बीज छः भाग, सुहागे का फूला पांच भाग, शुद्ध धतूरे के बीज चार भाग तथा तामे की भस्म तीन भाग इन सब को एकत्रित कर के चित्रक की जड़ के काढ़े मे घोंटकर मूंग के बराबर गोली बनावे तथा अदरख के रस के साथ सेवन करे तो शीत ज्वर तथा सन्निपात ज्वर शांत होता है। यह बड़वानल रस पूज्यपाद स्वामी का कहा हुआ शीतज्वर तथा सम्पूर्ण वात रोगों को हरने वाला है।

६८—ग्रहणयादौ रतिलीलारसः

जातीकणाहिफेनं च विजयाचूर्णसंयुतम्।
वराटं धूर्तबीजं च त्रुटिवारिधिशोकजं ॥१॥
तुल्यांशं निक्षिपेत् खल्वे यामैकं विजयारसैः।
मर्दयेत् वटिकां कुर्यात गुंजामात्रप्रमाणिकाम ॥२॥
रतिलीलारसो ह्येषः द्विगुंजो ऽ मधुप्लुतम।
भक्षयेद्वीर्यरोधश्च मधुराहारसंयुतः ॥३॥
ग्रहणयाश्चातिसारस्य वातरोगविनाशनः।
सर्वोत्तमरसश्चासौ पूज्यपादेन भाषितः ॥४॥

टीका—जायपत्री, पीपल, अफीम, भांग, तथा कोड़ी की भस्म, शुद्ध धतूरे के बीज, छोटी इलायची, समुद्रशोष, इन सब को बराबर बराबर ले एक पहर तक भांग के रस से घोंटकर एक एक रत्ती के बराबर गोली बना कर २ रत्ती शहद के साथ सेवन करे एवं ऊपर से मीठा भोजन करे तो इससे वीर्य की रुकावट हो तथा संग्रहणी और अतीसार, वातरोग शांत होता है—यह सर्वोत्तम रस पूज्यपाद स्वामी ने कहा है।

६९—वातरोगे बड़वानल रसः

सूतहाटकवज्रार्ककांतभस्मानि माक्षिकं।
तालं नीलांजनं तुत्थं चाब्धिफेनं समांशकम् ॥१॥
पंचानां लवणानां च भागैकं च विमर्दयेत्।
वज्रीक्षीरैः दिनैकं तु रुद्ध्वा च भूधरे पचेत् ॥२॥
उद्धरेत् खल्वमध्यस्थे रसपादं विषं क्षिपेत्।
मासैकमार्द्रकद्रावैः लेहयेद्बडवानलं ॥३॥

पिप्पली मूलककाथं सपिप्पल्या पिबेदनु।
दंडवातं धनुर्वातं शृंखलावातमेव च ॥४॥
खञ्जवातं पंगुवातं कंपवातं जयेत् सदा।
मातंगवातसिंहोऽयं पूज्यपादेन भाषितः ॥५॥

टीका—शुद्ध पारे की भस्म, हीरे की भस्म, तामे की भस्म, कांतलौह भस्म, सोना मक्खी की भस्म तवकिया हरताल की भस्म, शुद्ध नीला सुरमा, तूतिया की भस्म तथा समुद्रफेन ये सब बराबर बराबर तथा पांचों नमक १ भाग लेवे और सब को मिला कर थूहर के दूध से दिन भर मर्दन कर बाद भूधर यंत्र में पुटपाक करे पश्चात् और सब को खरल में डालकर पारे से चौथाई भाग शुद्ध विषनाग डाले एवं खूब घोंटे और उसको १ माह तक अदरख के रस के साथ सुबह शाम सेवन करे तथा ऊपर से पीपल और पीपरामूल का काढ़ा पिये तो इससे दंडवात, धनुर्वात, शृंखलावात, खंजवात, पंगुवात, कंपवात वगैरह सब शांत हो जाता है। यह पूज्यपाद स्वामी का कहा हुआ बड़वानल रस बहुत उत्तम है।

१००—सन्निपातादौ सिद्धगणेश्वररसः

पारदं दरदं गंधं त्र्यक्त्वा चैकोत्तरं क्रमात्।
नागस्याप्यस्य सर्वांशं मर्दयेत् खल्वके बुधः ॥१॥
विजयाकनकद्रावैः सप्त वारं विमर्दयेत्।
दीयते वल्लमात्रेण पिप्पल्या मधुनार्द्रकैः ॥२॥
त्रिदोषं सन्निपातादिसर्वदुष्टज्वरं जयेत्।
शीतोपचारः कर्तव्यः मधुराहारसेवनं ॥३॥
सिद्धो गणेश्वरो नाम पूज्यपादेन निर्मितः।

टीका—शुद्ध पारा १ भाग, शुद्ध सिंगरफ २ भाग, शुद्ध गंधक ३ भाग, तथा शुद्ध विषनाग छः भाग, इन सब को एकत्रित कर के भांग और धतूरा के स्वरस से तथा सोंठ मिर्च पीपल के काढ़े से अलग अलग सात सात बार मर्दन करे और इसको तीन तीन रत्ती की मात्रा में अदरख तथा मधु के साथ देवे तो त्रिदोष, सन्निपात ज्वर भी शांत होता है। इसके ऊपर शीतोपचार तथा मधुर भोजन का सेवन करना चाहिये। यह सिद्ध गणेश्वर रस श्रीपूज्यपाद स्वामी ने बनाया है।

१०१—सन्निपाते सन्निपातगजांकुशः

मृतं सूतं मृतं ताम्रं शुद्धतालकमाक्षिके ।
तथा हिंगुसमान्येतान्याद्र्कस्य च वारिभिः ॥१॥
वंध्यापटोलनिर्गुंडीसुगंधानिंबचित्रजैः ।
धत्तूरलांगलीपानभृङ्गजंबीरसंभवैः ॥२॥
त्रिदिनं मर्दयित्वाथ त्रिक्षारं सैंधवं विषं ।
वालं मधूकसारं च प्रत्येकं रससंमितम ॥३॥
संमिश्र्य मर्दयेत् सिद्धः सन्निपातगजांकुशः ।
माषमात्रेण हन्त्याशु पूज्यपादेन भाषितः ॥४॥

टीका—पारे की भस्म, तामे की भस्म, तबकिया हरताल की भस्म, शुद्ध सोनामक्खी और शुद्ध हींग, इन सब को समान भाग लेकर अदरख के रस से तथा बांझ ककोड़ा और परबल के पत्तों के रस से, नेगड़ के रस से, सुगंधा (तेजपत्र) के रस से, नीम को पत्ती के रस से, चित्रक की जड़ के रस से धतूरे के रस से लांगली (कलिहारी) के रस से, पान के रस से, भंगरा के रस से और जंबीरी नीबू के रस से पृथक् पृथक् और तीन तीन दिन तक मर्दन करे फिर उसमें जवाखार, सज्जी खार, सुहागा, सेंधा नमक शुद्ध बिषनाग, सुगंध वाला तथा महुवे की लकड़ी का सार ये सब पारे के बराबर बराबर लेकर घोंटकर तैयार करले। यह एक मासे की मात्रा में खाने पर सन्निपात को नाश करता है।

१०२—ज्वरादौ गजसिंहरसः

अविषदरदयुग्मं शुद्धसूतं च गंधं ।
सुरसस्वरसमर्द्या वल्लयुग्मं च दद्यात् ॥
ज्वरहरगजसिंहो शृंगवेरोदकेन ।
हरति प्रथमदाहं नक्तभक्तं च योज्यम् ॥

टीका—शुद्ध विषनाग, शुद्ध सिंगरफ दो दो भाग, शुद्ध पारा और शुद्ध गंधक एक एक भाग इन चारों की कज्जली बनाकर तुलसी के स्वरस में घोटें तथा तीन तीन रत्ती के प्रमाण से अदरख के रस के साथ सेवन करे तो ज्वरशांति हो तथा दाह की भी शांति होती है। जिस दिन इस औषधि का सेवन करे उस दिन छाँछ और चावल का भोजन करना उचित है।

---

१०३ गुल्मादौ लवणपंचक योगः

संख्यातं लवणं सुवर्चिभिमजौ क्षारद्वयं टंकणं ।
जीरं दीप्ययुगं च रामठविडंगं चैव जैपालकं ॥
शोधं वै लशुनं निकुंभमिलितं अर्कस्य पयसा मर्दयेत् ।
तत्कल्कं मरिचप्रमाणवटिकां चाज्येन संभक्षयेत् ॥१॥
संपूर्णं गदहः प्रयोगशुभगः रोगानुपानेन च ।
गुल्मं पंचकमूलरोगमुदरं श्वासं च कास-क्षयम् ॥
वाताशीतिमहोदरं च क्षपयेत् शूलं च रक्तस्रवम् ।
एतद्रोगविनाशनो हितकरः श्रीपूज्यपादोदितः ॥२॥

टीका—समुद्र नमक, सेंधानमक, काला नमक, बिड़नमक, साँभर नमक, चिताबर, सोंठ, सज्जीखार, जवाखार, भूना हुआ सुहागा, सफेद जीरा, अजमोदा, अजवायन, भूनी हुई हींग, वायविडंग, शुद्ध जमालगोटा के बीज, लहसुन की मींग, (घी में सिकी हुई) काली मिर्च, पीपल और जमालगोटे की जड़ इन सबको समान भाग लेकर कूट पीस कपड़छन कर आकौवा के दूध में मर्दन करके काली मिर्च के बराबर गोली बनावे और रोग की अवस्थानुसार योग्य मात्रा में गाय के घी के साथ देवे तो यह शुभ प्रयोग सम्पूर्ण रोगों को नाश करनेवाला है तथा प्रत्येक रोग के पृथक् पृथक् अनुपान से पांचों प्रकार के गुल्म, उदर रोग, श्वास-कास, क्षय अस्सी प्रकार के वातरोग, जलोदर, शूल एवं अधोरक्त-स्राव इन सब रोगों को नाश करनेवाला यह पूज्यपाद स्वामी का कहा हुआ लवणपंचक-योग सर्वोत्तम है।

१०४—सर्वरोगे रसराजरसः

रसेन्द्र सिन्दूर—सथाभ्रकान्तं गंधं रवेः भस्म च रौप्यभस्म ।
संयोज्य सर्वं त्रिफलाकषायैः विमर्द्य पश्चाद्विनियोजनीयः ॥१॥
कटुत्रयेणापि फलत्रयेण युक्तो रसेन्द्रः सकलामयघ्नः ।
रसोत्तमोऽयं रसराज एषः श्रीपूज्यपादेन सुभाषितः स्यात् ॥२॥

टीका—शुद्ध पारा, रससिन्दूर, अभ्रकभस्म, कांतलोह भस्म, शुद्ध गंधक, तांबे की भस्म तथा चांदी की भस्म इन सबको बराबर बराबर लेकर खरल में डालकर त्रिफला के काढ़े में घोंटे और उसको त्रिकटु त्रिफला के काढ़े से ही सेवन करे तो अनेक रोग शांत हों। यह रसों में श्रेष्ठ रस पूज्यपाद स्वामी ने कहा है।

१०५—ज्वरातिसारादौ जयसंभवगुटिका

सूतेन्द्रायसभस्महिंगुलविषं व्योषं च जातीफलं ।
धत्तूरस्य च बीजटंकणमिदं गंधाजमोदाजया ॥
वाराटं हि प्रदाय भस्म सुभिषक् संमर्दयेत् धूर्तजैः ।
स्वरसैः वै जयसंभवां च गुटिकां गुंजामितां कल्पयेत् ॥१॥
ज्वरातिसारं त्वपयेत् जयसंभवभाग् वटी
अनुपानविशेषेण पूज्यपादेन भाषिता ॥

टीका—शुद्ध पारा, लोहभस्म, शुद्ध सिगरफ, शुद्ध विषनाग, सोंठ, मिर्च, पीपल, जायफल, धतूरे के बीज, सुहागे की खील, शुद्ध गंधक, अजमोदा और अरबी, कौड़ी की भस्म इन सब को बराबर बराबर लेकर धतूरे के रस में मर्दन करे और गोली बनावे। यह गोली अनुपान-विशेष में एक एक रत्ती खाने पर ज्वरातिसार को नाश करती है—यह पूज्यपाद स्वामी ने कहा है।

१०६—कुष्ठे महातालेश्वरः

तालं ताप्यं शिलासूतं शुद्धं सैंधवटंकणम् ।
समांशं चूर्णयेत् खल्वे सूताद्विगुणगंधकम् ॥१॥
गंधमास्य सूतं ताम्रं सुवर्णकान्तमभ्रकम् ।
नीलग्रीवं द्विरजनीतालभागयुतं समम् ॥२॥
जंबीरनीरैः संमर्द्यः तत्सर्वं दिनपंचकम् ।
स हि षड्भिः पुटैः पाच्यो भूधरे संपुटोदरे ॥३॥
पुटे पुटे द्रवैर्मर्द्यः सर्वमेतच्च षट्पलम् ।
द्विपलं मारितम् ताम्रं लोहभस्म चतुःपलम् ॥४॥
जंबीराम्लेन तत्सर्वं दिनं मर्द्यः पुटे लघु ।
त्रिंशद्वांशं विषं क्षिप्त्वा तत्र सर्वं विचूर्णयेत् ॥५॥
महिषाज्येन च संमिश्रः निष्कश्च पुंडरीकनुत् ।
मध्वाज्यैः कर्कटीबीजं कर्षमात्रं लिहेदनु ॥६॥
मधुनाज्येन वा सेवेत् कुष्ठरोगं विनाशयेत् ।
महातालेश्वरोनामः पूज्यपादेन भाषितः ॥७॥

टीका—शुद्ध तबकिया हरताल, सोनामक्खी, शुद्ध शिलाजीत, शुद्ध पारा, संधानमक

और सुहागा ये सब समान भाग तथा शुद्ध गंधक पारे से दूना एवं गंधक के बराबर ताम्रभस्म, सोने की भस्म, कांत लोह भस्म और अभ्रक भस्म लेवे, बाद शुद्ध विष नाग, दारुहल्दी ये हरताल के बराबर लेकर इन सबको एकत्रित करके जंबीरी नींबू के रस में पाँच दिन तक मर्दन करे एवं भूधरयंत्र में छः पुट लगावे। बार बार निकाल कर जंबीरी से घोंट कर पुट दे पश्चात् नींबू से घोंटकर हलकी पुट दे। पश्चात् २ पल तांबे की भस्म, ४ पल लोह भस्म डाले। सब द्रव्य से तीसवाँ भाग शुद्ध विष डाले और फिर सबको चूर्ण करके रख लेवे। इसको भैंस के घी के साथ एक एक टंक अथवा रोग तथा रोगी के बलाबल अनुसार सेवन करे एवं ऊपर से शहद तथा घी के साथ मिलाकर १ तोला बकुची के बीज चाबे अथवा ऊपर कहा हुआ रस घी तथा शहद विषम मात्रा में लेकर उसके साथ सेवन करे तो यह महातालेश्वर रस सब प्रकार के कुष्ठ रोगों को एवं श्वेत कुष्ठ को नष्ट करता है। यह पूज्यपाद स्वामी का कहा हुआ है।

तालकेश्वर रस ७२ तरह का लिखा है—यह दसवाँ प्रकार है।

१०७—वातरोग कुठाररसः

रसहिंगुलकांताभ्रशिलातालकगंधकं।
खर्परं वत्सनाभं च तुत्थशुल्बशिलाजतु ॥१॥
त्रिक्षारं पंचलवणं त्रिकटु त्रिफलाजटाः।
जैपालं त्रिवृतादन्ती विडंगं चव्यचित्रकौ ॥२॥
वराहमजमोदं च शाल्मकं हिमिशा मजं।
जातीफलं लवंगमांसी धातकीपुष्पगुग्गुलं ॥३॥
मुस्तापुनर्नवा हिंगु कणामूलद्विजीरकं।
प्रत्येकं समभागानि मर्दयेच्चाद्रकैः रसैः ॥४॥
दिनैकं मातुलुंगस्य भृङ्गराजरसान्वितैः।
वटिका चणमात्रं तु चानुपानविशेषतः ॥५॥
सर्ववातं हरत्याशु सर्वज्वरविनाशनः।
सर्वगुल्मपरिच्छेदी पाण्डुक्षयविनाशनः ॥६॥
अजीर्णकामलाशूलमूत्ररोगकुठारकः।
विशेषं वातरोगघ्नः पूज्यपादेन भाषितः ॥७॥

टीका—शुद्ध पारा, शुद्ध सिंगरफ, कांतलोह भस्म, अभ्रक भस्म, शुद्ध शिला, तबकिया

हरताल भस्म, शुद्ध गंधक, खपरिया भस्म, शुद्ध विषनाग, तूतिया की भस्म, तामे की भस्म, शिलाजीत, सज्जीखार, जवाखार, सुहागा, समुद्र नमक, सेंधा नमक, काला नमक, सांभर नमक, विड नमक, सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेरा, आँवला, बरकी जटा, शुद्ध जमालगोटा, निशोथ, जमालगोटे की जड़, वायविडंग, चाव, चित्रक, कौड़ी की भस्म, अजमोदा, अजवायन, हल्दी, दारुहल्दी, कूट, जायफल, इलायची, भारंगी, धवई के फूल, गूगल, शुद्ध नागरमोथा, पुनर्नवा, (साँठी) हींग भुनी, पीपरामूल स्याहजीरा और सफेद जीरा इन सबको एकत्रित कर कूट कपड़छन कर के अदरख के रस, बिजौरा नींबू के रस तथा भंगरा के रस के साथ घोंट कर चना के बराबर गोली बनावे। यह गोली विशेष अनुपान से संपूर्ण बातरोगों को तथा सर्व प्रकार के ज्वरों को गुल्म, पांडु, क्षय, अजीर्ण, कामला, शूल इन सबको नाश करनेवाला है—यह पूज्यपाद स्वामी का कहा हुआ उत्तम योग है।

१०८—वाजीकरणे कामांकुशरसः

शुद्धसूतरससिन्दूरव्योमसिन्दूरगंधकं।
कांतसिन्दूरशुद्धोन्मत्तबीजकं च सनागकं ॥१॥
वज्रभस्म स्वर्णभस्म अहिफेन वार्धिशोषकं।
त्रिसुगंधं च मिलितं जातीफलवराटकं ॥२॥
तुल्यांशं निक्षिपेत्खल्वे मर्दयेत् वासरत्रयम्।
शतावरीरसेनापि मुशलीस्वरसेन वा ॥३॥
सप्ताहं भावयेद्धीमान् कूष्मांडरसेन च।
वटकान्कारयेत्तस्य गुंजामात्रप्रमाणकान् ॥४॥
देयं गुंजाद्वयं नित्यं भक्षयेत्तन्नपुंसकम्।
महानंदकरः सम्यक्वीर्यस्तंभं करोत्यसौ ॥५॥
शर्करां वा दुग्धघृतमनुपानं पिबेत्सदा।
कामांकुशरसोह्येषः कामिनां तृप्तिकारकः ॥६॥
कामिनीनां सहस्राणां तर्पयेद्दिवसांतरे।
रसायनमिदं श्रेष्ठं वपुःकांतिबलप्रदं ॥७॥
वाजीकरणप्रयोगोऽयं मदनानंदनंदनः।
कामांकुशरसो नाम पूज्यपादेन भाषितः ॥८॥

टीका—शुद्ध पारा, रससिन्दूर, व्योमसिन्दूर, शुद्ध गंधक, लौह सिन्दूर, शुद्ध धतूरा के बीज, शुद्ध विषनाग, हीरे की भस्म, सोने की भस्म, शुद्ध अफीम, समुद्रशोष, दालचीनी,

तेजपत्ता, इलायची, जायपत्री, कौड़ी की भस्म ये सब बराबर बराबर लेकर तीन दिन तक अलग अलग शतावरी तथा मूसली के रस से सात दिन तक घोटे और उसकी एक एक रत्ती की गोली बनावे और दो दो रत्ती की मात्रा से शहद के साथ सेवन करावे तो यह वीर्य को स्तम्भन करनेवाला है और ऊपर से शक्कर, दूध एवं घी का सेवन करे। यह कामांकुशरस कामी जनों को आनन्द देनेवाला, हजारों स्त्रियों को तृप्तकरनेवाला उत्तम रसायन है। शरीर की कांति तथा बल को देनेवाला है। यह वाजीकरण पूज्यपाद स्वामी का कहा हुआ उत्तम प्रयोग है।

टिप्पणी---यह रस भी बहुत बढ़िया मालूम होता है लेकिन बहुत कीमती है। हरएक नहीं बना सकता है। इसमें जो व्योमसिंदूर शब्द आया है सो मल्लसिंदूर, ताम्र सिंदूर, ताल सिंदूर तो आये हैं लेकिन व्योमसिंदूर की जगह एक अभ्रसिंदूर रसयोगसागर में लिखा है, जो एक प्रकार की अभ्रक की भस्म ही है इसमें पारद नहीं है। वाजीकरण औषधियों के ३६ पुट लिखे हैं। कांतसिंदूर नहीं मिला, यह भी एक प्रकार का सिंदूर मालूम होता है जो लोहभस्म डालकर बनाया जाता है।

१०६—कुष्ठे तांडवाख्यरसः

ताल गंधं माक्षिकं च कुष्ठं पारदभस्म च।
श्वेतापराजिताम्भोभिः मर्दयेद्दिवसत्रयम् ॥१॥
धात्रीफलरसेनापि सप्तधा भावयेदमुं।
अन्धमूषागतं रुद्ध्वा चोर्ध्वं मृत्सप्तवेष्टितं ॥२॥
कुक्कुटाख्ये पुटे दग्ध्वा शीतत्वेन मर्दयेत्।
तांडवाख्यो रसो ह्येषः गुंजाद्वि निरूपितः ॥३॥
कुष्ठानां वमनं पूर्व विरेचनमतः परं।
ततो महाकषायश्च मंजिष्ठादिः प्रशस्यते ॥४॥
अष्टादशविधानां हि कुष्ठानां च विनाशकः।
तांडवाख्यरसश्चास्मिन् पूज्यपादेन भाषितः ॥५॥

टीका—तबकिया हरताल की भस्म, शुद्ध गंधक, सोनामक्खी की भस्म, मीठा कूट, पारे की भस्म (रससिन्दूर) इन सब को खरल में एकत्रित करके सफेद कोयल के स्वरस से तीन दिन तक बराबर मर्दन करे, फिर आँवले के फल [illegible] रस से सातबार भावना देवे बाद सुखाकर अंधमूषा में बंद करदे ऊपर से सात कपड़मिट्टी करके सुखा लेवे और फिर कुक्कुटपुट में

पकावे जब स्वांग शीतल हो जाय तब इसको गोमूत्र से घोंट कर रख लेवे। इस रस को दो दो रत्ती अनुपान-विशेष से सेवन करे तथा ऊपर से महामंजिष्ठादि काढ़ा पीवे। इस रस के सेवन करने के पहले वमन, विरेचन, अवश्य करना चाहिये। यह रस अठारह प्रकार के कुष्ठों को नाश करनेवाला है। यह पूज्यपाद स्वामी का कहा हुआ उत्तम रस है।

११०—कुष्टे तालकेश्वररसः

तालस्य सत्वमादाय तत्समा तु मनःशिला।
द्विभागं सूतकं चापि गंधकं च समं समं ॥१॥
गोकर्णिकारसैश्चापि धात्रीमोचोद्भवैः रसैः।
मर्दयित्वा तथा सर्वं खल्वे तत् पंचवारकं ॥२॥
रसैः पुनर्नवायाश्च पिष्ट्वा पिष्ट्वा पुनः पुनः।
तस्य पिंडःप्रदातव्यो मूषिकायां तथापरं ॥३॥
कृत्वांध्रमूषिकां चापि वेष्टितां वसनादिभिः।
ततः पातालयंत्रेण पाचयेश्च करिर्णापुटं ॥४॥
ततस्तत्सममाकृष्य गुंजकां वा द्विगुंजकां।
भक्षयेत् प्रातरुत्थाय पर्णखंडेन केनचित् ॥५॥
गोऽजापयश्च धारोष्णमनुपानं कुष्ठरोगिणो।
श्वेतापराजिता देया कामलाव्याधिपीडिते ॥६॥
पयसा शर्करा देया जीर्णकुष्टे च पुष्कले।
सप्तधातुगते कुष्टे ससाहं च पिबेदनु ॥७॥
तालकेश्वरनामाऽयं पूज्यपादेन भाषितः।
नानाकुष्ठमहाव्याधिवने चरति सिंहवत् ॥८॥

टीका—तबकिया हरताल का सत्व, शुद्ध मैनशिल, एक एक भाग, शुद्ध पारा २ भाग, शुद्ध गंधक २ भाग इन सब को एकत्रित कर खरल में घोंटकर गोकर्णिका (मूर्वा), आँवले और केले के रस से पाँच पाँच बार अलग अलग घोंट कर तथा पुनर्नवा के रस से भी पाँच बार घोंट कर उसका पिंड बना कर अन्धमूषा में बंद करे एवं ऊपर से वस्त्र से वेष्टित कर और पाताल में गजपुट की आँच देवे। जब स्वांग शीतल हो जाय तब निकालकर एक रत्ती अथवा २ रत्ती प्रातःकाल पान के रस के साथ सेवन करे और ऊपर से गाय या बकरी का धारोष्ण दूध पिये। यह अनुपान कुष्ठ रोग का है। कामला से

पीड़ित मनुष्य के लिये सफेद कोयल (विष्णुकान्ता) का अनुपान देवे तथा पुराना कुष्ठरोग हो एवं सातों धातुओं में प्रविष्ट हो गया हो तो दूध और शक्कर सात दिन तक बराबर अनुपान में पिलावे। यह तालकेश्वर रस अनेक प्रकार के कुष्ठरोग को दूर करनेवाला पूज्यपाद स्वामी ने कहा है।

१११—अतीसारे महासेतुरसः

जातीफललवंगैलाककोंटजटिलांबुदाः।
ग्रन्थिका दीप्यकद्वन्द्वारलु बिल्वाम्रदाडिमाः ॥१॥
सैंधवातिषा मोचो (?) वनसत्ताग्निर्बीजकाः (?)।
धातकीकुसुमं शोषत्रयाग्निचकजांबवं ॥२॥
लोहभस्माभ्रसिन्दूरविषपारदहिंगुलं।
एतानि समभागानि सर्वाणि खलु मेलयेत् ॥३॥
गुंजामात्रवटीं कुर्यात् अत्र धोन्मत्तवारिणा।
अनुपानविशेषेण सर्वातीसारनाशनः ॥४॥
महासेतुरिति ख्यातः महावेगस्य रोधकः।
सर्वश्रेष्ठप्रयोगोऽयं पूज्यपादेन भाषितः ॥५॥

टीका—जायफल, लवंग, छोटी इलायची, बांझककोड़ा, जटामांसी, नागरमोथा, पीपरामूल, अजमोदा, अजवायन, श्योनाक, बेल की गिरी, आम की छाल, अनार का बकला, सेंधा नमक, अतीस, मोचरस, बहेरा, तालमखाने की लाई, धवई के फूल, सोंठ, मिरच, पीपल, अरनी, चित्रक, जामुन की छाल, लोह भस्म, अभ्रक की भस्म, रससिन्दूर, शुद्ध विषनाग, शुद्ध पारा, और शुद्ध सिंगरफ इन सब को समान भाग ले और सबको एकत्रित करके धतूरे के रस से घोंट कर गोली बना लेवे। यह सब प्रकार के अतीसारों को नाश करनेवाला है अतीसार के बढ़े हुए वेग को रोकनेवाला यह महासेतु रस पूज्यपाद स्वामी का कहा हुआ उत्तम प्रयोग है।

११२—प्रमेहे मेहारिरसः

सूतं गंधक कांतवंगगगनं सहूरकं शीसकं
सौवीराद्रिजगैरिकंशशिशिला बब्बूलबीजं दलं।
काथमास्थिजलारिसिंधुलवणं चिंचाम्बुबीजत्वचं।
सारं बिल्वकपित्थनिबकुटजमत्स्याक्षिमेदायुगं ॥१॥

गुंजायुग्मकिरीटनक्तजतुका भृंगं वराभिः समम्
चूर्णपाणितलं सतक्रमथवा मध्वन्वितं तल्लिहेत् ।
पिण्याकोदनभोजनं प्रतिदिने तैलेन तक्रेण वा
विंशतिमेहजयी रसोनिगदितः श्रीपूज्यपादेन वै ॥२॥

टीका—शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, कांत लोह भस्म, बंगभस्म, अभ्रक भस्म, मंडूर भस्म, शीशा भस्म, सफेद सुरमा, गेरू, शिलाजीत, कपूर, शिला, (मनशल), बब्बूल का बीज तथा पत्ती, कपास के बीज की गिरी, चित्रक, सेंधा नमक, इमली का बीज और इमली की छाल, बेल का सार, कवीट का सार, नीम का सार, कुरैया का सार, मजेठी, मेदा, महामेदा दोनों प्रकार के घुंघुचियों का फूल, हल्दी, लाख, दालचीनी, त्रिफला ये सब बराबर लेकर योग्य-मात्रा से छाँछ के साथ, मधु के साथ तथा पथ्य में रबड़ी मलाई, चावल खावे अथवा तैल से तथा छाँछ से भोजन करे तो यह रस बीस प्रकार के प्रमेह को नाश करता है ।

११३—प्रमेहे मेहवद्धरसः

भस्मसूतं मृतं कांतं मुंडभस्म शिलाजतु ।
शुद्धं ताप्यं शिलाव्योषं त्रिफला कोलबीजकम् ॥१॥
कपित्थरजनीचूर्णं सर्वं भाव्यं च भृङ्गिणा ।
विषमेनाहिभागेन सघृतं समधुलिहेत् ॥२॥
निष्कमात्रं हरेन्मेहान् मेहबद्धरसो महान् ।
महानिम्बस्य बीजानि शिलायां पेषितानि च ॥३॥
पलतंडुलतोयेन घृतनिष्कद्वयेन च ।
एकीकृत्य पिबेच्चानु हंति मेहं चिरन्तनम् ॥४॥

टीका—पारे की भस्म, कांतलोह भस्म, मंडूरभस्म, शिलाजीत, शुद्ध सोनामक्खी, शुद्ध शिला, त्रिकटु, त्रिफला, बेर की गुठली, कवीट (कैथा), हल्दी ये सब बराबर लेकर भंगरा के रस से गोली बनावे और बलाबल के अनुसार घी तथा शहद विषमभाग से मिला कर उसके साथ देवे तो सब प्रकार के प्रमेहों को दूर करे । इसको बकायन के बीजों को ४ तोला चांवल के पानी से पीसकर तथा उसी में ६ मासे घी मिलाकर ऊपर से पिलावे तो प्रमेह की शांति होवे ।

११४—वाजीकरणादि प्रयोगे मदनकामरसः

सूतं गंधकतालकं मणिशिला ताप्यं तथा रौप्यकं
आरं वंगभुजंगहेमदरदं शुल्वं च लोहत्रयम्
वज्रं विद्रुममौक्तिकं मरकतं भस्म निरुत्थम् समम
सर्वं भस्मकृतं पृथक्क्रमगतं वृद्धं च तत्संमितम् ॥१॥
खल्वमध्ये विनिक्षिप्य चार्कक्षीरेण मर्दितः ।
कुमारीपत्रनिर्यासैः मर्दयेद्दिवसत्रयम ॥२॥
वज्रमूषां दृढां कृत्वा तस्यां कल्कं विनिक्षिपेत् ।
मृद्वग्निना पचेत् सम्यक् स्वांगशीतलमुद्धरेत् ॥३॥
मर्दयेत मुसलीस्वरसैः छायायां च विशोषयेत् ।
दातव्यः कुक्कुटपुटं पंचविंशतिवारकम ॥४॥
खल्वमध्ये विनिक्षिप्य शाल्मलिद्रावसंयुतः ।
शतावरीरसैश्चापि मुसलीक्षुरसैस्तथा ॥५॥
कोकिलाक्षा मुद्गपर्णी गोक्षुरश्च पुनर्नवा ।
प्रत्येकस्य रसेनैव मर्दयेत्त्र्यवासरं ॥६॥
निक्षिपेत् वज्रमूषायां पुटं सप्तन्तु दापयेत् ।
मर्दितस्य पुनर्द्रावैः पुटं सप्त यथाविधि ॥७॥
स्वांगशीतलमुद्धृत्य चातसीपुष्पद्रावकैः ।
कूष्मांडस्वरसेनैव विजयानागकेसरैः ॥८॥
चातुर्जातस्य निर्यासैः प्रत्येकं मर्दितं तथा ।
शुष्कं कृत्वा समालोक्य पूरयेत् काचकूपिकाम् ॥९॥
यंत्रमध्ये विनिक्षिप्य चतुर्विंशतियामकम् ।
धमेदग्निक्रमेणैव दीप्तमध्यमृदुवह्निना ॥१०॥
स्वांगशीतलमादाय चोद्धरेत् काचकूपिकाम् ।
स्थापयेच्च शिलाखल्वे भावनाकारयेद्बहु ॥११॥
इक्षुदाडिमखर्जूरमुसलीकनकगोक्षुराः ।
चातुर्जातं गवांक्षीरः शर्करा मधुर्जीरकाः ॥१२॥
नीलोत्पलं च वकुलीनालिकेरैश्च भावना ।
अपामार्गश्च विजया गुडूची त्रिफला तथा ॥१३॥

कपिकच्छु, [illegible] कमल, केला के फल, भोख्या (पाढल), बहेरे, असगंध, कुम्हड़ा, बेल, बिजौरा और [illegible] गिलोय, इन सब के स्वरस में पचीस पचीस भावना देवे एवं सेमर के स्वरस की [illegible] भावना दे। इस प्रकार भावना दे सुखाकर रख लिया जाय तो यह मदन काम नामका रस तैयार हो जाता है। इसको एक रत्ती, दो रत्ती के प्रमाण में [illegible] अनुपान-द्वारा सेवन किया जाय तो सब धातुओं की वृद्धि होती है। [illegible] को बढ़ानेवाला यह पूज्यपाद स्वामी का कहा हुआ है।

[illegible]—अर्शोगादौ प्रनाशनी वटी

हरिद्रा त्रिफलावर्गाणि पिप्पली मरिचानि च ।
[illegible]कुस्ता विडंगानि समं विश्वभेषजम् ॥१॥
[illegible] भावके मूत्रं त्रिंशं पाता[illegible]
[illegible] समभागानि [illegible] [illegible] ॥२॥
[illegible]र्दिकां [illegible] नु [illegible]
[illegible]केन पीतेन अर्शांसि नाशयेद्ध्रुवम् ॥३॥
इयं विषूचिकां हंति तथैवोष्णेन वारिणा ।
पंच लूतानि विस्फोटकांजयन्त्यव निश्चितम् ॥४॥
व्रणादावन्यरोगे च पानलेपं च कारयेत् ।
वनिता स्तनदुग्धेन चांजने पटलापहा ॥५॥
रात्र्यंधं तिमिरं कांचं अन्यदार्द्रकवारिणा ।
गोमूत्रेण सहैषा हि तृतीयादिज्वरं जयेत् ॥६॥
गुडोदकेन संपीता वातदोषं प्रशाम्यति ।
गुडोदकेन लेपेन वातजातं प्रशाम्यति ॥७॥
लेपनादेव नश्यंति शिरःशूलशिरोगदा ।
स्त्रीस्तन्येनांजनं कार्यं नेत्रस्रावविमुक्तये ॥८॥
मधुना पिच्छिलं हंति ताम्रपत्रेण घर्षतः ।
पुष्पं च पटलं हंति कदलीकंदवारिणा ॥९॥
नेत्रकाचं जयत्याशु कासमर्दरसान्विता ।
छागमूत्रान्विता लेपः नेत्रभारं विनाशयेत् ॥१०॥
अर्कक्षीरान्विता लेपो लूतादोषविनाशनः ।
गुटिकासेवनेनैव मूत्रकृच्छ्रं विनाशयेत् ॥११॥

[illegible] पिबेत् ।
[illegible] ॥८४॥
[illegible] ।
[illegible] ॥८५॥
[illegible] ।
[illegible] ॥८६॥
[illegible] ।
[illegible] ॥८७॥

टीका—हल्दी, नीम की पत्ती, छोटी पीपर, काली मिर्च, नागरमोथा, [illegible] चित्रक, शुद्ध गंधक, शुद्ध पारा, शुद्ध विषनाग, सोनापाठा, [illegible] बराबर लेकर बकरी के मूत्र से घोंट कर [illegible] इस गोली को गर्म जल से सेवन करे तो नाग अजीर्ण की बाधा [illegible] जल से सेवन करे तो विषूचिका की शांति, [illegible] सेवन करे [illegible] काटा हुआ विष शांत होता है। विस्फोटक [illegible] इत्यादि में इसका [illegible] अथवा इसको खिलाने से लाभ होता है। स्त्री-दुग्ध के साथ आँख में अंजन करने से नेत्र के पटलरोग की शांति होती है। अदरख के रस के साथ अंजन करने से रतौंधी, नेत्रांधता इत्यादि शांत होती है। गोमूत्र के साथ सेवन करने से तिजारी इत्यादि विषम-ज्वर नष्ट होता है। गुड़ के पानी के साथ सेवन करने से वातदोष दूर होता है। [illegible] से उत्पन्न हुआ व्रण भी शांत होता है। इसका शिर में लेप करने से शिर का शूल जाता रहता है। स्त्री के दूध के साथ अंजन करने से आँखों का स्राव ठीक होता है। शहद के साथ तांबे के पत्र पर घिसने से नेत्र का पिच्चिट दोष शांत होता है, केला के कन्द के पानी के साथ घिस कर लगाने से नेत्र की फुली, माड़ा जाला सब शांत हो जाता है। कंमोदन के रस के साथ आँख में लगाने से आँख का कांच दोष शांत होता है। बकरी के मूत्र के साथ लेप करने से नेत्र की सूजन शांत होती है। अकौवा के दूध के साथ लेप करने से मकड़ी का काटा हुआ विष शांत हो जाता है। इस गोली को अनुपान विशेष के साथ सेवन करने से मूत्रकृच्छ्र (सुजाक) शांत होता है। शुद्ध गंधक के साथ सेवन करने से रक्त का कैसा ही प्रवाह हो बन्द हो जाता है। छाँछ के साथ पीने से अतीसार दूर होता है। अकौवा के दूध के साथ लेप करने से बिच्छू का काटा हुआ विष शांत हो जाता है। इसकी एक-एक गोली अनुपान के बिना सेवन करने से भी ज्वर निर्मूल हो जाता है। इस गोली को नारियल के पानी के साथ इन्द्रिय पर लेप करने से नपुंसकता दूर होती है।

अंजनं सर्वकार्ये वा ज्वरज्वालाशताकुले ।
ब्रह्मराक्षसभूतादिशाकिनीडाकिनीगण-॥४॥
कालवज्रमहादेवीमदमातंगकेशरि--
वृषभादि सुसंस्थाप्य श्रीदेवीश्वरसूरिणाम॥५॥
पूजनं चाशु कृत्वा च यथायोग्यं प्रकल्पयेत् ।
कथितोऽयं त्रिलोकस्य चूड़ामणिमहारसः ॥६॥
पार्श्वनाथस्य मंत्रेण स्तंभोभवति तत्क्षणम ।
पूज्यपादेन कथितः सर्वमृत्युविनाशनः ॥७॥

टीका—शुद्ध पारा, सुहागे की भस्म, मृतिका की भस्म, शुद्ध विष, लांगली (कलिहारी) की जड़, जियापोता की गींगी, शुद्ध आँवलासार गंधक तथा गुंजावृक्ष के पत्ते इन सब को बराबर-बराबर लेकर पहले पारे, गंधक की कजली बनावे। पीछे और सब दवाइयाँ अलग अलग कूट-कपड़-छन करके मिलावे तथा देवदाली, हंसराज, हुलहुल नागदौन, धतूरा, नागकेशर इन सबके स्वरस से अथवा क्वाथ से एक-एक दिन अलग घोंटे और बेर के बीज-समान गोली बनाकर त्रिभंगी के रस के साथ सेवन करावे। मूर्छावस्था में नास भी देवे, आवश्यकता आने पर या सन्निपात की दशा में अंजन भी लगावे। इसका सेवन करने से कठिन से कठिन ज्वर भी शांत होता है। इसका जब सेवन करे तब ब्रह्मराक्षस, डाकिनी, शाकिनी इत्यादि व्यन्तर-रूपी मातंग के लिये सिंह सदृश आचिलीन्द्र (?) की स्थापना करके पूजन करे तो शीघ्र ही लाभ होता है और श्रीपार्श्वनाथ स्वामी के मंत्र से तो उसी क्षण रोग का स्तम्भन होता है। यह तीन लोक का शिरोमणि त्रिलोक चूड़ामणि रस पूज्यपाद स्वामी का कहा हुआ अपमृत्यु का नाश करनेवाला है।

११८—सर्वज्वरे ज्वरांकुशरसः

पारदं गंधकं ताम्रं टंकणं कटुकत्रयम ।
चित्रकं निम्बबीजानि यवक्षारं च तालकम ॥१॥
एरंडबीजसिन्धूत्थं हारीतक्यं समांशकम ।
शुद्धस्य वत्सनाभस्य पंचभागं च निक्षिपेत् ॥२॥
जैपालं द्विगुणं चैव निर्गुण्ड्याः मर्दयेद्द्रवैः ।
दशव्रीहिसमो देयः सर्वज्वरगजांकुशः ॥३॥
पृथिव्या चाजमोदेन पिप्पल्या सहितं जलैः ।
ज्वरादिष्वपि रोगेषु सर्वेषु हितकृद्भवेत् ॥४॥

मुलहठी इन सब के अनुपान से उसको सेवन करावे। इसके सेवन कराने से इन्द्रिय की कमजोरी, दाह, पित्तज्वर, मार्ग में चलने की थकावट, सर्व प्रकार के प्रमेह, मज्जा, धातु के दोष इन सब को नाश करनेवाला है, इसमें कुछ संदेह नहीं है। यह सब प्रकार के प्रमेहों को दूर करनेवाला श्रीपूज्यपाद स्वामी ने कहा है।

१२०—सर्वज्वरे मृत्युञ्जयरसः

रसगंधकौहि जयपालः तालकश्च मनःशिला।
ताम्रश्च माक्षिकः शुंठीमुसलीरससमर्दितः ॥१॥
कुक्कुटे च पुटे सम्यक् पक्तव्यः मृदुवह्निना।
स्वांगशीतलमुद्धृत्य गुंजामात्रप्रमाणकम् ॥२॥
शुद्धशर्करया खादेत् शीततोयानुपानतः।
पथ्ये क्षीरं प्रयोक्तव्यं दधि वापि यथारुचि ॥३॥
संततादिज्वरघ्नोऽयमनुपानविशेषतः।
मृत्युञ्जयरसश्चासौ पूज्यपादेन भाषितः ॥४॥

टीका—शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, शुद्ध जमालगोटा, हरताल भस्म, शुद्ध मैनशिल, ताम्बे की भस्म, शुद्ध सोनामक्खी, सोंठ इन सब को मुसली के रस से मर्दन करे तथा कुक्कुट पुट में पाक करे और ठंढ़ा होने पर निकाल कर एक-एक रत्ती के प्रमाण से मिसरी की चासनीके साथ शीतल जलके अनुपान से सेवन करावे। पथ्य में दूध देवे तथा रोगी को अरुचि होवे तो दधि भी खिलावे (?)। यह संततादि ज्वरों को नाश करनेवाला मृत्युञ्जय रस पूज्यपाद स्वामीने कहा है।

मतान्तर

ताप्यतालकनेपाल-वत्सनाभं मनःशिला। ताम्रगन्धकसूताश्च मुसलीरसमर्दिताः ॥
मृत्युञ्जय इति ख्यातः कुक्कुटीपुटपाचितः। वल्लद्वयम् प्रभुंजीत यथेष्टं दधि भोजनम् ॥
नवज्वरं सन्निपातं हन्यादेष महारसः ॥

१९ तरहका मृत्युञ्जय रस है यह १४ के पाठ से मिलता है। एक चीज का फर्क है, इस में सोंठ है उसमें सिंगिया लिखा है। इस ग्रन्थ के रस रसरत्न-समुच्चय, रससुधाकर, रसपारिजात से अधिक मिलते हैं। रसरत्नसमुच्चय बौद्धों का बनाया हुआ ग्रन्थ प्रसिद्ध है; मुमकिन है यह उसी समयका हो।

१२१—शीतज्वरे शीतभंजरसः

पारदं रसकं तालं शिला तुत्थं च टंकणम् ।
गन्धकं च समं पिष्ट्वा कारवेल्ल्या रसैर्दिनम् ॥ १ ॥
शिग्रुमूलरसैः पिष्ट्वा निर्गुण्डी स्वरसेन च ।
ताम्रपत्रे प्रलिप्या च भाण्डे पत्रमधोमुखम् ॥ २ ॥
कृत्वा रुद्ध्वा मुखं तस्य वालुकाभिः प्रपूरयेत् ।
पश्चादग्निना तुल्या ताम्रपत्रस्य रक्तता ॥ ३ ॥
एवं पुटत्रयं दद्यात् स्वांगशीतलमुद्धरेत् ।
ताम्रपत्रं समुद्धृत्य चूर्णयेन्मरिचं समम् ॥ ४ ॥
शीतभंजरसो नाम पर्णखंडरसेन च ।
शीतज्वरविपघ्नोऽयं पूज्यपादेन भाषितः ॥ ५ ॥

टीका—शुद्ध पारा, शुद्ध खपरिया की भस्म, हरताल की भस्म, शुद्ध शिला, शुद्ध तूतिया की भस्म, टंकण भस्म, शुद्ध गन्धक इन सबको बराबर-बराबर लेकर खरल में एकत्रित करके करेले के पत्तों के रस से एक दिन भर घोंटे तथा एक दिन मुनगा के स्वरस से घोंटे, एक दिन नेगड़ के रस से घोंटे और शुद्ध पतले तांबे के पत्रों पर लेप करके एक हंडी में रख कर नीचे को मुख करके उसका मुख बन्द करके बाकी की जगह बालू से पूर्ण कर नीचे से अग्नि जलावे, जब वह तांबे का पत्र लाल वर्ण हो जाय तब निकाल लेवे। इस प्रकार तीन पुट देवे, जब ठीक पाक हो जाय तांबे के पत्रों को निकाल कर सब चूर्ण बना कर रख लेवे और काली मिर्च बराबर मिला कर पान के रस के साथ यथा योग्य मात्रा से यह शीतज्वर रूपी विष को नाश करनेवाला शीतभंज रस पूज्यपाद स्वामी ने कहा है।

१२२—श्वासादौ अमृतसंजीवनो रसः

सूतश्च गन्धको लोहो विषश्चित्रकपत्रकौ ।
विडंगं रेणुका मुस्ता चैला ग्रन्थिककेशरौ ।
त्रिकटुस्त्रिफला चैव शुल्वभस्म तथैव च ॥
एतानि समभागानि द्विगुणं गुड़मेव च ।
तोलप्रमाणवटिकाः प्रातःकाले च भक्षयेत् ॥
श्वासे कासे क्षये मेहे शूलपांडुगुदांकुरे ।

चतुरशीतिवातेषु योजयेन्नात्र संशयः ॥
अमृतसंजीवनो नाम पूज्यपादेन भाषितः ॥ ४ ॥

टीका—शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, लोह भस्म, शुद्ध विष, चित्रक, तेजपत्र, वायविडंग, रेणुका बीज, नागर मोथा, छोटी इलायची, पीपरामूल, नागकेशर, सोंठ, मिर्च, पीपल, त्रिफला, तामे की भस्म, इन सबका बराबर-बराबर लेकर सबके दुगुना पुराना गुड़ लेकर गोली बनावे तथा प्रातःकाल में अनुपान-विशेष से सेवन करे तो श्वास, खांसी, राजयक्ष्मा, प्रमेह, शूलोदर, पांडु रोग, बवासीर तथा ८४ प्रकार के वायु रोग शांत होते हैं। यह अमृतसंजीवन रस भी पूज्यपाद स्वामी ने कहा है।

१२३—विबंधे नाराचरसः

अष्टौ निम्बुपदंतिर्वीजशुद्धं भागत्रयं नागरं ।
द्वे गंधे मरिचं च टंकणरसो भागैकमेकं पृथक् ॥
गुञ्जामात्रमिदं विरेचनकरं देयं च शीतांबुना ।
गुल्मप्लीहमहोदरादिशमनो नाराचनामा रसः ॥ १ ॥

टीका—आठ भाग शुद्ध जामालगोटाके बीज तीन भाग सोंठ, दो भाग शुद्ध गन्धक, काली मिर्च, सुहागा, शुद्ध पारा एक-एक भाग खरल में डाल कर खूब घोंटे तथा एक-एक रत्ती की मात्रा से शीतल जलके अनुपान से सेवन करावे तो इस से गुल्म, प्लीहा और उदर-रोग शांत होता है।

१२४—शीतज्वरे शीतमातंगसिंहरसः

रसविषशिखि तुल्यं खर्परं चैकभागम् ।
अनलद्विकसमानभागमेतत्क्रमेण ॥
कनकदलरसेन पीतगुंजैकमात्रः ।
परिमितगुटिकः स्यात् शीतमातंगसिंहः ॥ १ ॥

टीका—शुद्ध पारा, शुद्ध विषनाग तृतिया की भस्म, खपरिया भस्म एक-एक भाग, चित्रक दो भाग इन सब को एकत्रित करके धतूरेके रस से घोंटे तथा एक-एक रत्ती प्रमाण सेवन करे तो इससे शीतज्वर दूर होवे।

१२५—ज्वरादौ प्राणेश्वररसः

भस्म सूतं यदा कृत्वा मात्तिकं चाभ्रसत्त्वकम् ।
शुल्वभस्मापि संयोज्य भागसंख्याक्रमेण च ॥
तालमूलीरसं दत्वा शुद्धगंधकमिश्रितम् ।
मर्दयेत् खल्वमध्ये च नितरां यामयोर्द्वयम् ॥
निक्षिप्य काचकूप्यां च मुद्रया कूपिकां तथा ।
खटिकामृदं समादाय लेपयेत् सप्तवारकम् ॥
विपरीतं परिस्थाप्य पूरयेत् वालुकामयम् ।
यंत्रं प्रज्वालयेत्याम चतुरो वह्निना पुनः ॥
सिध्यते रसराजेन्द्रो देवपूजामथार्चयेत् ।
अनुपानं तदा देयं मरिचं नागरं तथा ॥
त्रिक्षारं पंचलवणं रामठं चित्रमूलकम् ।
अजमोदं जीरकं चैव शतपुष्पाचतुष्टयम् ॥
चूर्णयित्वा तथा सर्वं भक्षयेच्चानुवासरं ।
रसराजेन्द्रनामायं विख्यातो प्राणशांतिकृत् ॥
अयं प्राणेश्वरो नाम प्राणिनां शांतिकारकः ।
प्राणनिर्गमकालेऽपि रक्षकः प्राणिनां तथा ।
भक्षयेत् पर्णखण्डेन कटूष्णेनापि वारिणा ॥
ज्वरे त्रिदोषजे घोरे सन्निपाते च दारुणे ।
प्लीहायां गुल्मवाते च शूले च परिणामजे ॥
मन्दाग्नौ ग्रहणीरोगे ज्वरे चैवातिसारके ।
अयं प्राणेश्वरो नाम भवेन्मृत्युविवर्जितः ।
सर्वरोगविपन्नोऽयं पूज्यपादेन भाषितः ॥

टीका—पारे की भस्म १ भाग, सोना मक्खी की भस्म २ भाग, अभ्रक की भस्म ३ भाग, तांबे की भस्म ४ भाग, ये सब लेकर मुसली के स्वरस में घोंटे तथा उसमें १ भाग शुद्ध गन्धक मिलावे, उसमें ६ घण्टे तक बराबर घोंटे, सुखा कर कांचकी शीशी में रख कर मुद्रा देकर बन्द करे । उसके ऊपर खड़िया मिट्टी से सात कपड़मिट्टी करै और सुखावे, फिर सुखा कर उसके चारों तरफ बालुका से पूरण करे, १२ घण्टे बराबर आंच जलावे, तब रसों में राजा यह प्राणेश्वर रस सिद्ध हो जाता है । जब सिद्ध हो जाय तब देवता-पूजन वगैरह धार्मिक क्रिया करे । इस औषधि के सेवन करनेके बाद नीचे लिखा चूर्ण अनुपानरूप सेवन करे ।

अनुपान

काली मिर्च, सोंठ, सज्जीखार, जवाखार, सुहागा, पांचो नमक, हींग, चित्रक, अजमोदा, जीरा सफेद एक-एक भाग तथा सौंफ ४ भाग सब को चूर्ण करके प्रतिदिन सेवन करे। इस रस का दूसरा नाम रस राजेन्द्र है। यह प्राणियों को शांति करनेवाला प्रसिद्ध है वास्तव में इस का दूसरा नाम प्राणेश्वर रस है। प्राणों के निकलने के समय भी यह प्राणों का रक्षक है। इसको पानके रसके साथ गर्म जल के साथ सेवन करे तो यह त्रिदोषज ज्वर, कठिन से कठिन सन्निपात, प्लीहा, गुल्म रोग, वात रोग, परिणाम-जन्य शूल, मन्दाग्नि, ग्रहणी और ज्वरातिसार में लाभदायक है। रोगरूपी विष का नाश करनेवाला और मृत्यु को जीतनेवाला यह प्राणेश्वररस पूज्यपाद स्वामी का कहा हुआ है

१२६—जलोदरे शूलगजांकुशरसः

निष्कत्रयं शुद्धसूतं द्विनिष्कं शुद्धटंकणम्।
गंधकं पंचभागं च चैकनिष्कश्च तिन्दुकः॥ १॥
चतुर्निष्कश्च जैपालः तस्य द्विगुणताम्रकम्।
सर्वतुल्य-तिलक्षारः वृक्षाम्लं क्षारमेव च॥ २॥
तद्वत्पलाशभस्मं च पणिगाष्कं सैंधवोषणम्।
यवक्षारविड्लवणानि वर्चलसामुद्रके तथा॥ ३॥
पिप्पलीत्रयनिष्कं वै चार्कदुग्धेन मर्दयेत्।
निष्कमात्रप्रयोगेण जलोदरहरश्च सः॥ ४॥
शूलगजांकुशरसः पूज्यपादेन भाषितः।

टीका—८ माशा शुद्ध पारा, ६ माशा शुद्ध सुहागा, १। तोला शुद्धगन्धक, ३ माशा शुद्ध कुचला, १ तोला शुद्ध जमालगोटा, २ तोला तामे की भस्म, ५॥। तोला तिली का क्षार, ५॥। तोला तिन्तड़ीक का क्षार, ५॥। तोला पलास का क्षार, १॥ तोला सेंधा नमक, १॥ तोला काली मिर्च, १॥ तोला जवाखार, १॥ तोला विड नमक, १॥ तोला काला नमक, १॥ तोला समुद्र नमक, ६ मासा पीपल इन सब को कूट कपड़छन करके अकौवा के दूध में घोंट कर तीन-तीन रत्ती के प्रमाण से गोली बनाकर अनुपानविशेष से देवे तो जलोदर दूर होवे। यह शूलगजांकुश रस पूज्यपाद स्वामी का कहा हुआ है।

१२७—ज्वरादौ कलाधररसः

सुरसं गंधकं चाभ्रं काशीसं शीसमेव च।
वंगं शिलाजतु यष्टि चैला लामज्जकं समम् ॥१॥
नालिकेरैश्च कूष्माण्डैः रंभाजेक्षुरसेन च।
पंचवल्कलस्वरसेन (?) द्वात्रिंशद्भावना तथा ॥२॥
नालिकेररसेनैव दद्याद्वल्लं सशर्करं।
पथ्ये संसिद्धलाजं हि शमयेत्तृड्गदान् ज्वरान् ॥३॥
रक्तपित्ताम्लपित्तं च सोमं पाण्डुं च कामलां।
पूज्यपादेन कथितः रसः चन्द्रकलाधरः ॥४॥

टीका—शुद्ध पारद, शुद्ध गंधक, अभ्रक-भस्म, शुद्ध कसीस, नागभस्म, बंगभस्म, शुद्ध शिलाजीत, मुलहठी, छोटी इलायची, मंजीठ (एक सुगंधित तृण) ये सब बराबर लेकर नारियल के दूध से, कूष्मांड के स्वरस से, केला के कन्द के स्वरस से, ईख के स्वरस से तथा पंच वल्कल (पीपल, बड़, ऊमर, पाकर, कठऊमर) के काढ़े से अलग अलग बत्तीस-बत्तीस भावना देवे और सुखाकर गोली बांधे। इस गोली को नारियल के दूध के साथ तीन-तीन रत्ती की मात्रा से मिश्री के साथ देवे तथा सिद्ध की गयी (पकायी हुई) लाई को पथ्य में देवे। इसके सेवन करने से तृषा एवं तृषा से उत्पन्न होनेवाले ज्वरों को लाभ होता है तथा रक्तपित्त, अम्लपित्त, सोमरोग (सफेद प्रदर) पांडु, कामला इन रोगों को भी लाभ होता है। यह रस श्रीपूज्यपाद स्वामी ने कहा है।

१२८—मन्दाग्नौ उदयमार्तण्डरसः

जयपालं विषटंकणं च दरदं त्रैलोक्यनेत्रांबुधि।
मर्द्यश्चार्द्र रसैर्द्विगुंजवटिका कार्या चतुर्बुद्धिभिः ॥१॥
मंदाग्निं विगुणानिलं च गुल्मं श्वासं च कासं क्षयं।
प्रोक्तः शूलविनाशकश्च मुनिना मार्तण्डनामा रसः ॥२॥

टीका—शुद्ध जमालगोटा ३ भाग, शुद्ध विषनाग २ भाग, टंकणक्षार २ भाग, शुद्ध सिगरफ ४ भाग इन सबको एकत्रित करके अदरख के रस के साथ मर्दन करे तथा दो-दो रत्ती की गोली बनावे और इसको बुद्धिमान् अनुपान-विशेष से बलाबल के अनुसार देवे तो इससे मंदाग्नि, वायु की विगुणता तथा गुल्म, श्वास, कास, क्षय, शूल इन सब का नाश होता है, यह पूज्यपाद स्वामी ने कहा है।

१२९—ग्रहण्यादौ कनकसुन्दररसः

हिंगुलं मरिचं गंधं पिप्पली टंकणं विषं।
कनकस्य च बीजानि समांशं विजयाद्रवैः ॥१॥
मर्दयेद्याममात्रं तु चणमात्रा वटी कृता।
भक्षयेद्गुंजयुग्मं तु ग्रहणीनाशने परः ॥२॥
अग्निमांद्यं ज्वरं शीघ्रमतीसारविनाशनः।
कनकसुन्दररसश्चासौ पूज्यपादेन भाषितः ॥३॥

टीका—शुद्ध सिंगरफ, काली मिर्च, शुद्ध गंधक, पीपल, सुहागे की भस्म, शुद्ध विषनाग, शुद्ध धतूरे के बीज ये सब बराबर-बराबर लेकर भांग के स्वरस में चार पहर तक मर्दन करे और चना के बराबर गोली बांधे। दो-दो रत्ती अनुपान-विशेष से सेवन करे तो ग्रहणी को लाभ होता है तथा मंदाग्नि, ज्वर, अतीसार को भी लाभ हो। कनकसुन्दर रस पूज्यपाद स्वामी ने कहा है।

१३०—मन्दाग्न्यादौ अमृतगुटिका

त्रिकटु सूतगंधं च ग्रन्थिकं चव्यचित्रकं।
अमृतं लवणं चैव भृङ्गस्य रस-मर्दिता ॥१॥
एषा चामृतगुटिका च कृतवह्निविवर्धना।
अमृता गुटिका नाम विंशतिश्लेष्मरोगजित् ॥२॥
अशीतिवातजान् रोगान् नाशयेन्नात्र संशयः।
विबंधं नाशयेच्छीघ्रं पूज्यपादेन भाषिता ॥३॥

टीका—सोंठ, मिर्च, पीपल, शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, पीपरामूल, चाव, चित्रक, शुद्ध विषनाग और सेंधानमक ये सब बराबर-बराबर भाग लेकर भंगरा के रस से घोटे और गोली बांध लेवे। यह गोली अनुपान-विशेष से दी जावे तो बीस प्रकार के कफरोग शांत हों, तथा अग्नि को बढ़ानेवाली, अस्सी प्रकार के बातरोगों को नाश करनेवाली और बिबंध को नाश करनेवाली यह अमृतगुटिका पूज्यपाद स्वामी ने कही है।

१३१—सर्वरोगे मरीचादिवटी

मरिचं नागरं नाभिस्त्रितयं तत्समं तथा।
पिप्पली ताम्रभस्मानि प्रत्येकं सममात्रकम् ॥१॥

भृङ्गराजरसैमर्द्या वटिका माषमात्रका ।
एषा हि क्षीरसंयुक्ता सर्वव्याधिविनाशिनी ॥२॥

टीका—काली मिर्च, सोंठ, कस्तूरी तथा पीपल, तामे की भस्म ये पांचों समान भाग लेकर भंगरा के रस से मर्दन करे और एक माशे की गोली बांध कर दूध के साथ रोग तथा रोगी के बलाबल के अनुसार देवे तो सर्व प्रकार की व्याधि दूर हो।

१३२—विबन्धे विरेचनवटी

राजवृक्षफलं सारं त्रिफला गुडमेव च ।
दंतितुत्थसमायुक्तं निष्कमात्रवटीकृतं ॥१॥
उष्णोदकं च सम्मितं वमने मोक्षमेव च ।
गुडक्षीरेण संयुक्तं वरेके न प्रशस्यते ॥२॥

टीका—अमलतास का गूदा, बड़ी हर्र का बकला, बहेरे का बकला, आँवला, पुराना गुड़, शुद्ध जमालगोटा तथा तूतिया की भस्म ये सब बराबर-बराबर ले और गुड उतने परिमाण में दे कि जितने में गोली बंध जावे। इसकी तीन-तीन माशे की गोली बना कर एक-एक गोली मिश्री के साथ तथा गर्म पानी से सेवन करने से वमन सुखपूर्वक होता है। गर्म दूध एवं पुराने गुड के साथ सेवन करे तो उत्तम जुलाब हो।

टिप्पणी—यहाँ पर तुत्थ भस्म का पाठ आया है और वह भी सब के समान भाग ही है परंतु वह अधिक है। वैद्यगण विचार कर उसकी मात्रा ग्रहण करें।

१३३—ज्वरादौ प्रतापमार्तण्डरसः

विषटंकणजयपालं हिंगुलं क्रमवर्द्धितम् ।
तुलसीरस-संपिष्टं वटिकागुंजमात्रकाः ॥१॥
ज्वरादिनाशनश्चासौ विशेषैश्चानुपानकैः ।
मार्तण्डप्रतापश्च पूज्यपादेन भाषितः ॥२॥

टीका—शुद्ध विषनाग, सुहागे की भस्म, शुद्ध जमालगोटा, शुद्ध सिंगरफ ये क्रम से एक भाग, दो भाग, तीन भाग, चार भाग लेकर खरल में घोंटकर तुलसी की पत्ती के रस से घोंट एक एक रत्ती के प्रमाण की गोली बनावे। यह अनुपान विशेष से ज्वर को नाश करनेवाला प्रताप मार्तण्डरस पूज्यपाद स्वामी ने कहा है।

१३४—विषमज्वरे प्रभाकररसः

कर्षं शुद्धरसस्यापि द्विमासे चाम्लविद्रुते।
निक्षिपेन्मर्दयेत्खल्वे षण्णिष्कं शुद्धगंधकं ॥१॥
तुत्थांकोलकुणीवीजं शिलातालं चतुश्चतुः।
तत्समं मृतलौहस्य निष्कौ द्वौ टंकणस्य च ॥२॥
तत्समं कुटकीनीलवराटांजनशुद्धकम्।
निष्कत्रयं सितं योज्यं सर्वं चोक्तक्रमेण वै ॥३॥
शुभे मुहूर्ते शुभदिने खल्वमध्ये विमर्दयेत्।
चांगेर्यम्लेन यामत्रीन् जंवीराम्लैः दिनद्वयम् ॥४॥
पुटं हस्तप्रमाणं तु वसुसंख्यं तुषाग्निना।
जंबीरस्य द्रवैरेव पिष्ट्वा पिष्ट्वा पचेत् पुटे ॥५॥
ततो वनोत्पलैरेव देयं गजपुटं महत्।
आदाय चूर्णश्लक्ष्णं तु चूर्णांशं शुद्धगंधकं ॥६॥
तदर्धमरिचं चूर्णं तदर्धं पिप्पलीरजः।
तदर्धं नागरजं चूर्णं चैकीकृत्य त्रिगुंजक ॥७॥
लेहयेन्माक्षिकैः सार्धं नागवल्लीरसेन च।
पथ्यं दुग्धं विजानीयाद्भुक्तिः विषमज्वरे ॥८॥
चन्द्रकान्तिसमो नाम्ना रसश्चन्द्रप्रभाकरः।
सर्वव्याधिविनाशश्च सर्वज्वरकुलांतकः ॥९॥
एकमासप्रयोगेण देहश्चन्द्रप्रभाकरः।
कथित व्याधिविध्वंसो पूज्यपादेन निर्मितः ॥१०॥

टीका—शुद्ध पारा १ तोला लेकर उसको २ मास तक खटाई में मर्दन करे तत्पश्चात् १॥ तोला शुद्ध गंधक एक खरल में डालकर कज्जली बनावे, उसके बाद तूतिया की भस्म, अङ्कोल के बीज, कुणी के बीज (तुनवृक्ष), शुद्ध शिला, तबकिया हरताल की भस्म, लोह की भस्म एक-एक तोला तथा सुहागे की भस्म, कुटकी, नील की पत्ती, कौड़ी की भस्म, शुद्ध सुरमा ये सब दवाएँ छः-छः माशे और नौ माशा मिश्री लेकर सब को एकत्रित करके शुभ दिन एवं शुभ मुहूर्त्त में खरल में डालकर चांगेरी के स्वरस से तीन प्रहर तक, जंबीरी नींबू के स्वरस से दो दिन तक घोंटे एवं सुखाकर संपुट में बंद करके कपड़मिट्टी कर एक हाथ गहरे गड्ढे में पुट लगावे। इस प्रकार आठ पुट दे। ये सब आठों पुट जंबीरी नींबू के स्वरस से ही घोंट कर पुट तुष की अग्नि में देवे और अन्त में एक जङ्गली कण्डों

से बड़ी गजपुट देवे। स्वांग शीतल हो जाने पर चूर्ण कर के सब चूर्ण से आधा शुद्ध गंधक, गंधक से आधा काली मिर्च का चूर्ण तथा उससे आधा सोंठ का चूर्ण मिला सब को बराबर मिलाकर घोंटकर तीन-तीन रत्ती की मात्रा से शहद तथा पान के रस के साथ सेवन करे। इसके ऊपर दूध को पथ्यरूप में सेवन करे और यदि इसको विषमज्वर में देना हो तो दूध भी न देकर लंघन करावे। यह चन्द्रमा की कांति के समान चन्द्रप्रभाकर नाम का रस राजयक्ष्मा को नाश एवं सब ज्वरों को अन्त करनेवाला है। यह एक माह के प्रयोग से शरीर की कांति को चन्द्रमा की कांति के समान बनाने तथा अनेक व्याधियों को नाश करनेवाला पूज्यपाद स्वामी ने कहा है।

१३५—ज्वरादौ संजीवनीय रसः

हिंगुलशुद्धत्रिभागकं सुरसकं भागद्वयं चोषणं।
भागैकं नवनीतकेन मर्द्यः निंबुकरसेनैव च ॥१॥
सिद्धोऽयं रसराज एष मधुना देयस्त्रिदोषज्वरे।
संतापज्वरदाहनाशनपरः संजीवनीयो रसः ॥२॥

टीका—शुद्ध सिंगरफ, तीन भाग, खपरिया की भस्म दो भाग तथा काली मिर्च १ भाग इन सब को कपड़छन करके नेनू (मक्खन) में घोंटे। पश्चात् नींबू के रस में तबतक घोंटे जब तक उसकी चिकनाई न मिट जाय। जब वह गोली बांधने योग्य हो जाय तो गोली बांध लेवे। इस गोली को शहद के साथ सेवन करे तो इससे त्रिदोषजन्य, संताप जन्य ज्वर एवं दाह की भी शांति होती है

१३६—सर्वज्वरे विद्याधररसः

रसगंधार्कक्षीरी धात्री रोहतत्रिवृतावरा।
व्योषाग्निहिंगुलं शुद्धं टंकणं च विनिक्षिपेत् ॥१॥
जयपालं शुद्धकं चापि मर्दयेद्वह्निवारिणा।
दंतिकायेन मर्द्यः शोषयेत् सूर्यरश्मिभिः ॥२॥
बदरास्थिप्रमाणेन वटिकां कारयेद्भिषक्।
गुडेन सह वटिकैका नित्यं सर्वज्वरापहा ॥३॥
अनुपानविशेषेण प्रतिश्यायज्वरापहः।
पूज्यपादेन मुनिना प्रोक्तो विद्याधरो रसः ॥४॥

टीका—शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, तामे की भस्म, लजनू के बीज, आँवले की उरगठी, बहेडे की छाल, निशोथ, हर्र, बहेरा, आँवला, सोंठ, काली मिर्च, पीपल, चित्रक, शुद्ध सिंगरफ सुहागे की भस्म और शुद्ध जमालगोटा ये सब बराबर-बराबर भाग लेकर थूहर के दूध से और दंती के काढ़े से एक-एक बार मर्दन करे और एक-एक दिन धूप में सुखावे। बेर के बराबर बराबर गोली बना गुड के साथ एक-एक गोली प्रतिदिन खाये तो सर्व प्रकार का ज्वर शांत हो तथा विशेष अनुपान-द्वारा खाये तो कुआम का ज्वर भी शांत हो जाता है। यह विद्याधर रस पूज्यपाद स्वामी ने कहा है।

१३७—गुल्मादौ अग्निकुमाररसः

जयपालशुभ्रगंधरसाभ्रकाणां संचर्चलं तुल्यकटुत्रयस्य।
मूत्रेण च षोडशभागमाने संमर्द्य सर्वं च दिनत्रयं च ॥१॥
वटिकां विधाय बदरप्रमाणां सेव्या वटी कोष्णजलानुपानात्।
एषा प्रयुक्ता सहसा निहंति सुरेच्य चादौ मलजातमेव ॥२॥
गुल्मं यकृत्पांडुविबद्धशूलबद्धोदरादींश्च जलोदरादीन्।
अग्निः कुमारो मुनिना प्रयुक्तः प्रकाशिनो दीप इवांधकारं ॥३॥

टीका—शुद्ध जमालगोटा, शुद्धगंधक, शुद्ध पारा, अभ्रकभस्म, काला नमक, सोंठ, मिर्च, पीपल इन सब को एकत्रित कर के सब दवाइयों से सोलह भाग गोमूत्र लेकर तीन दिन तक बराबर घोंटे और बेरों के बराबर गोली बनावे तथा गर्म जल से सेवन करे तो इससे पहिले संचित हुए मल को निकाल कर गुल्म रोग, यकृत् रोग, पांडुरोग, विबद्धता, शूलरोग, बद्धोदर, जलोदर इत्यादि संपूर्ण पेट के रोग शांत होते हैं। यह अग्निकुमार रस पूज्यपाद स्वामी का कहा हुआ रोगरूपी अन्धकार को नाश करने के लिये दीपक के समान है।

१३८—सन्निपाते यमदंडरसः

बंगस्य सप्तभागाः स्यात् सप्तभागरसस्तथा।
एकीकृत्य रसो मर्द्यश्चार्धश्च खलु गंधकः ॥१॥
अर्धभागं तथा तालं वत्सनाभश्च तत्समः।
सर्वमेकीकृतं चूर्णं धूर्तद्रावेण मर्दयेत् ॥२॥

गुंजामात्रप्रमाणेन सन्निपाते च दारुणे।
अनुपानप्रभेदेन प्रयोक्तव्यः सदैव सः ॥३॥
त्रयोदश सन्निपातान् नाशयत्याशु निश्चितम्।
यमदण्डरसः ख्यातः पूज्यपादेन भाषितः ॥४॥

टीका—बंगभस्म सात भाग, शुद्ध पारा सात भाग, इन दोनों को खरल में डालकर मर्दन करे। पीछे उसमें ३॥ भाग शुद्ध गंधक मिलावे तथा आधा भाग तबकिया हरताल भस्म, आधा भाग शुद्ध विषनाग इन सब को एकत्रित घोंटकर कज्जली बना धतूरे के रस से मर्दन करके एक-एक रत्ती की गोली बनावे। अनुपान-भेद से उग्र कठिन से कठिन सन्निपात में भी सदैव प्रयोग करना चाहिये। यह यमदण्ड रस तेरह प्रकार के सन्निपातों को नाश करता है। यह पूज्यपाद स्वामी का कहा हुआ उत्तम योग है।

१३९—अपरो वज्रेश्वररसः

कर्षकिणायोः सत्वञ्च परिणाहके हेमविद्रुते।
परिणाहकसूतं गंधं च द्वयनिष्कं प्रवेशयेत् ॥१॥
प्रवालमुक्ताफलयोः चूर्णं हेमसमांशकम्।
क्रमाद्द्वित्रिचतुर्निष्कं मृतायः शीसबंगकान ॥२॥
चांगेरीअम्लेन यामकं मर्दितं चूर्णितं पृथक्।
निष्कद्वयनीलकटुकी व्योमाद्यः कांततालकाः ॥३॥
अङ्कोलकं कुणीबीजतुत्थभस्मं पृथक् पृथक्।
अष्टौ तु टंकणात्ताराः वराटानां च विंशतिः ॥४॥
महाजंबीरनीरस्य प्रस्थद्वन्द्वेन पेषयेत्।
पिष्ट्वा रुद्ध्वा शरावे च भस्मीभूतं समाचरेत् ॥५॥
मधुना लोडितो लेह्यः तांबूलीस्वरसेन सः।
वह्निदीपनकरः शीघ्रं धातून वर्धयतितराम् ॥६॥
अनुपानविशेषेण क्षयरोगविनाशकः।
रसो वज्रेश्वरो नाम पूज्यपादेन भाषितः ॥७॥

टीका—१ तोला पीपल का सत ले १॥ तोला शुद्ध सोना पिघलाकर उसमें डाल देवे और १॥ तोला शुद्ध पारा, २ तोला शुद्ध गंधक लेकर सब की कज्जली बनावे। पश्चात् १॥ तोला मोती घुटा हुआ, १॥ तोला प्रवाल घुटी हुई लेकर उसी में डाल दे और उसी में

आधा तोला लौह की भस्म, पौन तोला शीसे की भस्म, १ तोला बंग भस्म डाल सब को खरल में एकत्रित कर चांगेरी के रस से १ प्रहर तक घोंट कर सुखा लेवे और उसमें छः-छः माशे नील की पत्ती, कुटकी, अभ्रक-भस्म, कांतलौह भस्म, तबकिया हरताल भस्म, अकरकरा, कुणी का बीज, तूतिया की भस्म, २ तोला सुहागे की भस्म, ५ तोला कौड़ी की भस्म देकर उसी में मिलावे तथा जंबीरी नींबू के दो सेर रस में घोंट एवं सुखा संपुट में बंद करके सुखा कर भस्म करे। इस भस्म को योग्य मात्रा से शहद तथा पान के स्वरस के साथ सेवन करे तो अग्नि दीप्त हो, धातुओं की पुष्टि होवे और अनुपान-विशेष के बल से क्षयरोग का नाश करनेवाला यह वज्रेश्वररस पूज्यपाद स्वामी का कहा हुआ श्रेष्ठ है।

१४०—द्राक्षादि क्वाथः

द्राक्षामधूकमधुकं कोद्रवश्चापि सारिवा।
मुस्तामलकह्रीवेरपद्मकेशरपद्मकं ॥१॥
मृणालं चन्दनोशीरनीलोत्पलपरूषकः।
द्राक्षादेः हिमसंयुक्तः जातीकुसुमेन वा ॥२॥
सहितो मधुसितालाजैर्जयत्यनिलपित्तजं।
ज्वरं मदात्ययं छर्दिं दाहमूर्छाश्रमभ्रमं ॥३॥
ऊर्ध्वाधोरक्तपित्तं च पांडुतां कामलामपि।
सर्वश्रेष्ठहिमश्चायं पूज्यपादेन भाषितः ॥४॥

टीका—मुनक्का, महुवा, मुलहठी, कोद्रवधान्य, सारिवा, नागरमोथा, आंवला, सुगंधवाला, कमलकेशर, पद्माख़चन्दन, उशीर, लालचन्दन, खस, नीलकमल, फालसा इन सब को बराबर-बराबर लेकर हिम (पांच प्रकार के काढ़े में से एक प्रकार का हिम काढ़ा में) बनावे और वह काढ़ा शहद, मिश्री, लाई, चमेली के फूल इन सब के साथ सेवन करे तो वात-पित्त से उत्पन्न हुआ ज्वर तथा मदात्यय नाम का रोग, वमन, दाह, मूर्च्छा, भ्रम उर्ध्वग रक्त-पित्त, अधोग रक्तपित्त, पाँडुरोग, कामला इत्यादि शांत होते हैं। यह सर्वश्रेष्ठ योग पूज्यपाद स्वामी का कहा हुआ है।

इस काढ़े को पकावे नहीं बल्कि सब दवाइयाँ रात को भींगो देवे तथा सुबह मल एवं छान कर पीये।

१४१—अर्शनाशकयोगः

देवदाल्याश्च बीजानि सैंधवं निंबबीजकम् ।
तक्रेण पेषितं सर्व मर्शरोगनिकृन्तनम् ॥
देवदाल्याः कषायेण चार्शोघ्नं शौचमाचरेत् ।
गुडस्य स्वरसेनैव शांतिमाप्नोति निश्चितम् ॥

टीका—देवदाली (यह बहुत कड़वी होती है, इसमें फल लगते हैं और बीज होते हैं) के बीज, सेंधा नमक तथा नीमके बीज इन सब को बराबर-बराबर लेकर मही के साथ पीस कर इनको सेवन करे तो अवश्य ही बादी बवासीर को लाभ हो तथा देवदार का काढ़ा बना कर उसमें एवं गुड़ के स्वरस से भी शौच (आबदस्तलेवे) करे तो लाभ हो।

१४२—ज्वरातीसारे आनंदभैरवरसः

हिंगुलं वत्सनाभं च व्योषं टंकणं कणां ।
मर्दयेच्चार्द्रकेणैव रसोऽह्यानंदभैरवः ॥१॥
गुंजैकं वा द्विगुंजं वा बलं ज्ञात्वा प्रयोजयेत् ।
मधुना लेहयेच्चानु कुटजस्य त्वचं तथा ॥२॥
तच्चूर्णं कर्षमात्रं तु त्रिदोषोत्थातिसारजित् ।
पूज्यपादप्रयोगोऽयं रसश्चानंदभैरवः ॥३॥

टीका—शुद्ध सिंगरफ, शुद्ध वत्सनाभ सोंठ, मिर्च, पीपल, सुहागा इन सब को बराबर बराबर लेकर अदरख के रस के साथ गोली बांध लेवे और फिर इसको एक रत्ती अथवा दो रत्ती प्रमाण से रोगी का बलाबल देख कर देवे और उसके बाद कुरैया की छाल का चूर्ण १ तोला बलाबल के अनुसार कमी-बेशी मधु के साथ चटावे तो इससे त्रिदोष-जन्य अतीसार भी शांत होता है। यह आनंद भैरवरस पूज्यपाद का कहा हुआ है।

१४३—अर्शरोगे अर्शनाशक-लेपः

आरनालेन संपिष्य सबीजां कटुतुंबिकां ।
सगुडां हंति लेपेन चार्शांसि मूलतो दृढं ॥१॥

टीका—बीज सहित कड़वी तुमरियाको कांजी (मही-छाछ) के साथ पीस कर उसकी लुगदी में पुराना गुड़ मिलाकर बवासीर के मस्सों पर लेप करने से मस्से जड़ से कट जाते हैं।

१४४—ग्रहणी-रोगे अर्कादियोगः

अर्कवातार्कवह्नीनां प्रत्येकं षोडशं पलं।
चतुष्पलं सुधाकांडं त्रिपलं लवणत्रयं॥ १॥
वार्ताकोत्थद्रवैः पिष्ट्वा रुद्ध्वा सर्वं पुटे पचेत।
वार्ताकोत्थद्रवैरेवं निष्कांशं गोलकं कृतम्॥ २॥
भोजनांते सदा खादेत् ग्रहणीश्वासकासजित्।
पदभुक्ते तज्ज्वरत्याशु नदीवेगप्रभाववत्॥ ३॥

टीका—सूखे अकौना (आक) के पके पत्ते १६ पल (६४ तोला), सूखे बैंगन १६ पल, चित्रक १६ पल, थूहर के सूखे डंडे ४ पल, ४ तोला सेंधा नमक, ४ तोला काला नमक, ४ तोला समुद्र नमक, इन सब को एकत्रित कूट कर बैंगन के रस से भावना देकर सब को मिट्टी के शरावे में बंद कर के पुटपाक करे। जब पुटपाक हो जाय तब बैंगन के रस से ही इसकी तीन तीन माशे की गोली बांधे और सदैव भोजन के बाद सेवन करे तो यह ग्रहणी, श्वांस, खाँसी को नदी के वेग की तरह शीघ्र नष्ट कर देती है।

१४५—सन्निपाते गंधकादियोगः

गंधकार्द्रकरसं तुत्थं शिलाविषं तु हिंगुलं।
मृतमाक्षिककांताभ्रताम्रलोहाः समं समं॥१॥
अम्लवेतसजंबीरचांगेर्या हि रसेन च।
निर्गुण्ड्याः हस्तिशुंड्याश्च रसेन सह मर्दितं॥२॥
पुटपक्वं कषायेण चित्रकस्य विभावितं।
जग्ध्वा सहिंगुकर्पूरं व्योषार्द्रकरसानुपः॥३॥
मृतोऽपि सन्निपातेन जीवत्येव न संशयः।
पूज्यपादप्रयोगोऽयं सन्निपातरुजांतकः॥४॥

टीका—शुद्ध गंधक आंवलासार, शुद्ध पारा, आदा (सोंठ), शुद्ध तूतिया की भस्म, शुद्ध मैनशिल, शुद्ध विषनाग, शुद्ध सिंगरफ, सोनामक्खी की भस्म, कांतलोह की भस्म, अभ्रक-भस्म, तांबे की भस्म, लोहे की भस्म ये सब औषधियाँ बराबर-बराबर लेकर इकट्ठी करे और अमलवेंत जंबीरी नींबू, चांगेरी (चौपतिया) नेगड़ एवं हाथीशुंडी (शाक विशेष) के रस से अलग अलग भावना देकर सुखावे और पुटपाक करे एवं बाद में चित्रक के स्वरस से भावना देवे। जब सूख जावे तब योग्य मात्रा से हींग एवं कपूर के साथ सेवन

करे तथा उसके ऊपर सोंठ, मिर्च, पीपल, अदरक इनका रस पीवे। इसका सेवन करने से सन्निपात के द्वारा मरा हुआ भी प्राणी जी जाता है। यह पूज्यपाद स्वामी का कहा हुआ योग सन्निपात रोग को अन्त करनेवाला है।

१४६—जीर्णज्वरे औदुम्बरादियोगः

औदुंबरांकुरं चैव मधुवृत्तं च सूतकम्।
नागरं लशुनं चैव गंधं पाषाणभेदकम् ॥१॥
जीरकं तगरं धान्यं चूर्णयेत् सर्वसाम्यकम्।
उष्णोदकं पिवेत्तच्च पुराणज्वरनाशनम् ॥२॥
बालमध्यमवृद्धानां कटुकयाश्च रसेन च।
निष्कद्विनिष्कमात्रेण सितया सह संयुतः ॥३॥
पिबेच्च ज्वरनाशाय परं पाचनमुच्यते।
कोष्ठे बद्धरसेनैव चामयागुडसंयुतं ॥४॥
अग्निधूमस्य पानेन हिक्कायाश्च विनाशनम्।
दूर्वादाडिमपुष्पेण मधुकैः सह संयुतं ॥५॥
स्तनक्षीरेण संयुक्तं हिक्कावंशविनाशनम्।
औदुंबरादियोगोऽयं पूज्यपादेन भाषितः ॥६॥

टीका—ऊमर के अङ्कुर, महुवा की छाल, शुद्ध पारा, सोंठ, लहसुन, शुद्ध गंधक, पाषाणभेद, सफेद जीरा, तगर और धनिया सब को बराबर-बराबर एकत्रित कर पहले पारे और गंधक की कजली बनावे, फिर बाकी औषधियों का चूर्ण कर उस कजली में मिलाकर घोंटे, जब बराबर मिल जावे तब इसको कुटकी के स्वरस अथवा हिम के साथ एवं मिश्री की चासनी के साथ ज्वर को दूर करने के लिये देवे। इससे ज्वर का पाचन होता है। यदि दस्त न हुआ हो या कोष्ठबद्धता हो तो इसको योग्यमात्रा से बड़ी हर्र तथा गुड़ के साथ देवे। यदि इसको अग्नि में डालकर इसका धूम्र पान किया जाय तो इससे हिचकी शांत होती है तथा दूब, अनार का फूल, मुलहठी और स्त्री-दुग्ध के साथ देने से भी हिचकी नहीं आती।

१४७—आमवाते रसादियोग:

भास्यैकं रसं कुर्यात् द्विभागं गंधकं तथा।
त्रिभागं त्रिफलाचूर्णं चतुर्भागं विभीतकं ॥ १ ॥
गुग्गुलुं पंचभागं तु षड्भागं च चित्रकम्।
सप्तभागा च निर्गुण्डी चैरंडतैलसंयुतं ॥ २ ॥
भक्षयेद् गुडसंयुक्तआमवातं तु नाशयेत्।
पूज्यपादोक्तयोगोऽयं अनुपानविशेषतः ॥ ३ ॥

टीका—एक भाग शुद्ध पारा, दो भाग शुद्ध गंधक, तीन भाग त्रिफला का चूर्ण, चार भाग बहेड़े के बकले का चूर्ण, पांच भाग शुद्ध गुग्गुल, छः भाग चितावर, सात भाग नेगड़ के बीज इन सब को एकत्रित कर कूट कपड़छन कर के अन्डी का तेल तथा पुराने गुड़ के साथ योग्य अनुपान एवं योग्य मात्रा से सेवन करे तो उसके सेवन से आमवात नाश होता है। यह पूज्यपाद स्वामी का कहा हुआ उत्तम योग है।

१४८—रसादिमर्दन:

रसगंधौ समौ शुद्धौ विष्णुक्रान्ताद्रवैर्दिनं।
आरक्तागस्त्यजैर्द्रावैः स्त्रीस्तन्येन हि मर्दयेत् ॥ १ ॥
मध्वाज्ययवसंयुक्तमेतदुद्वर्तनं हितम्।
कार्श्यं जयति वर्षमासाद् वत्सरान्मृत्युजिद्भवेत ॥ २ ॥

टीका—शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक इन दोनों को सफेद कोयल के रस से फिर लाल अगस्ति (हथिया) के रस से तथा स्त्री दुग्ध से एक-एक दिन पृथक्-पृथक् खरल करे। तैयार होने पर शहद, घी तथा जौ का आटा इन तीनों को मिला कर उबटन करावे तो इससे शरीर की कृशता दूर होती है। एक वर्ष लगातार उबटन करने से मृत्यु को जीतनेवाला होता है अर्थात शरीर विशेष बलवान हो जाता है।

१४९—पूर्णचन्द्ररसायन:

मृतं सूताभ्रलौहं च शिलाजतु विडंगकं।
ताप्यं क्षौद्रं घृतं तुल्यमेकीकृत्य विचूर्णयेत ॥ १ ॥

पूर्णचन्द्ररसो नाम मासैकं भक्षयेत् सदा ।
अश्वगंधापलार्धं च गवां क्षीरं पिबेदनु ॥ २ ॥
शाल्मलीपुष्पचूर्णं वा क्षौद्रैः कर्षैः लिहेदनु ।
दुर्बलो बलमादत्ते मासैकेन यथा शशी ॥

टीका—पारे की भस्म, अभ्रक-भस्म, लौह भस्म, शुद्ध शिलाजीत वायविडंग, माक्षिक भस्म, शहद तथा घी इन सब को बराबर लेकर एकत्रित कर के तैयार करले। यह पूर्णचन्द्ररस एक माह तक सेवन करने से तथा इसके ऊपर २ तोला असगंध गाय के दूध में डाल कर पीने से अथवा सेमल के फूल का चूर्ण १ तोला शहद के साथ खाने से दुर्बल मनुष्य बल को प्राप्त होता है।

१५०—उन्मत्ताख्यनस्यम्

रसगंधं समांशं तु धत्तूरफलजैर्द्रवैः ।
मर्दयेद्दिनमेकं तु तत्समं त्रिकटु क्षिपेत् ॥ १ ॥
उन्मत्ताख्यो रसो नाम्ना नस्यं स्यात् सन्निपातजित् ।

टीका—शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक दोनों बराबर-बराबर लेकर धतूरे के फलों के रस से एक दिन भर खूब घोंटे, फिर पारा और गंधक के बराबर ही उसमें सोंठ, काली मिर्च तथा पीपल डालकर घोंटे, जब आंख में आँजने के योग्य अञ्जन के सदृश हो जाय तब यह उन्मत्तरस नाम का नस्य तैयार समझे। इस नस्य को सन्निपात की दशा में सुंघाने से मूर्छा दूर हो जाती है।

१५१—कृष्णाद्यो महारसायनः

कांतमभ्रकचूर्णानि शिलामाक्षिकगंधकं ।
तालकं शुल्वचूर्णानि टंकणं कुनटीयुतं ॥ १ ॥
पारदं नागभस्मानि त्रिफला तीक्ष्णलोहकं ।
बाकुचीबीजकं भृंगं गर्वं चूर्णसमं युतं ॥ २ ॥
भक्षयेन्मधुसर्पिर्भ्याम् त्रिभिर्मंडलसंयुतं ।
अष्टादशानि कुष्ठानि सप्त चैव महाक्षयाः ॥ ३ ॥
स्नेहवातार्दिताः गुल्माः ते च सर्वभगंदराः ।
दशाष्ट योनिदोषाश्च त्रिदोषा यान्ति चान्तगं ॥ ४ ॥

कुंचितफेन (?) केशश्च गृद्धाक्षश्च प्रजायते ।
वारणाश्रुतसंपन्नो वराहश्रावणः भवेत् ॥ ५ ॥
षण्मासप्रयोगेण दिव्यदेहो भवेन्नरः ।
संवत्सरप्रयोगेण कायपरिवर्तनं भवेत् ॥ ६ ॥

टीका—कांत लोहभस्म, अभ्रक भस्म, शुद्ध शिला, माक्षिक भस्म, शुद्ध गंधक, तबकिया हरताल की भस्म, तामे की भस्म, सुहागे का फूला, शुद्ध शिला, शुद्ध पारा, शीसे की भस्म, हर्र, बहेरा, आंवला कांत लोहभस्म, बकची के बीज, तज ये सब बराबर लेकर एकत्रित करके खूब घोंट कर तैयार करले और फिर विषम मात्रा शहद एवं घी लेकर तथा समयानुसार विशेष अनुपान से प्रयोग करे तो अट्ठारह प्रकार के कोढ़ रोग, सात प्रकार का ज्वर रोग, स्नेहवात, गुल्मरोग, भगंदर रोग, १८ प्रकार के योनिदोष और त्रिदोष नाश को प्राप्त होते हैं। इस रसायन के सेवन करने से शिर के केश कुंचित तथा मुलायम होते हैं एवं गीध के समान तेज आँखें हो जाती हैं। हाथी और बराह के समान तेज सुननेवाला हो जाता है। और तो क्या छः महीना इसके सेवन करने से मनुष्य दिव्य (सुंदर) शरीरवाला हो जाता है और एक वर्ष प्रयोग करने पर शरीर का एक विशेष परिवर्तन हो जाता है।

१५२—अमृतार्णवरसः

रसभस्मत्रयो भागाः भागैकं हेमभस्मकं ।
भागार्धममृतं सत्त्वं सितमध्वाज्यमिश्रितं ॥ १ ॥
दिनैकं मर्दितं खल्वे मासैकं भक्षयेन सदा ।
कृशानां कुरुते पुष्टिं रसोऽयममृतार्णवः ॥ २ ॥

टीका—पारे की भस्म तीन भाग, सोने की भस्म १ भाग तथा आधा भाग सिंगनाग का सत्व इन सब को मिश्री शहद एवं घी के साथ एक दिन भर खूब मर्दन करे। इसे एक माह तक सेवन करे तो दुर्बल मनुष्य भी बलवान होता है। यह अमृतार्णवरस सर्वश्रेष्ठ है।

१५३—व्रणादौ जात्यादिघृतम्

जातीपत्रं पटोलं च निंबोशीरकरंजकं ।
मंजिष्ठं मधुयष्टी च दार्वी पद्मकसारिवा ॥ १ ॥

प्रत्येकं चूर्णयेत् कर्षं गव्याश्च द्वादशं पलम् ।
घृताच्चतुर्गुणं तोयं पक्त्वा घृतावशेषितं ॥ २ ॥
तेनाभ्यंगैः मर्मघातं व्रणं नाडीव्रणं तथा ।
स्रवन्तं सूक्ष्मछिद्रं च पूरयेन्नात्र संशयः ॥ ३ ॥

टीका—जायपत्री, परवल के पत्ता, नीम के पत्ता, खस, पूतकरंज की पत्ती, मंजीठ, मुलहठी, दारु हल्दी, तेजपत्ता, सारिवा ये सब एक-एक तोला, गाय का घी ४८ तोला, तथा पानी घी से चौगुना लेकर सब को मिला पकावे। जब सब पानी जल जाय सिर्फ घी मात्र बाकी रह जाय तो घी निकाल कर छान लेवे। यह दवा हर प्रकार के फोड़ों पर लगावे तो इससे बहनेवाला बारीक छेदवाला भी नाड़ीव्रण ठीक हो जाता है।

१५४—व्रणादौ अपामार्गादियोगः

अपामार्गस्य पत्रोत्थद्रवेणापूरयेद् व्रणं ।
किंवा तद्बीजचूर्णेन व्रणं दुष्टं प्रलेपयेत ॥ १ ॥
पुरातनगुडैस्तुल्यं टंकणं सूक्ष्मपेषितं ।
तद् वर्त्या पूरयेच्छीघ्रं व्रणं नाडीव्रणं महत् ॥

टीका—अपामार्ग के पत्तों का स्वरस निकाल कर उस रस से फोड़ा भरे अथवा अपामार्ग के बीजों को पीस कर दुष्ट फोड़े के ऊपर लेप करे अथवा पुराना गुड़ तथा सुहागे का फूला इन दोनों को खूब मिला कर उसकी बत्ती बना कर फोड़े में भरने से फोड़ा भर कर अच्छा हो जाता है।

१५५—ज्वरादौ प्राणेश्वररसः

भस्म सूतं यदा कृत्वा माक्षिकं चाभ्रसत्वकं ।
शुल्वभस्मापि संयोज्य भागसंख्याक्रमेण च ॥ १ ॥
तालमूलीरसं दत्वा शुद्धगंधकमिश्रितं ।
मर्दयेत् खल्वमध्ये च नितरां यामयोर्द्वयम ॥ २ ॥
निक्षिप्य काचकूप्यां च मुद्रया कूपिकां तथा ।
खटिकामृदं समादाय लेपयेत् सप्तवारकं ॥ ३ ॥
यथारीत्या परिस्थाप्य पूरयेत् बालुकामयं ।
यंत्रं प्रज्वालयेद्यामं चतुरोव छिना पुनः ॥ ४ ॥

सिध्यते रसराजेन्द्रो बलिपूजाभिरर्चयेत् ।
अनुपानं तदा देयं मरिचं नागरं तथा ॥ ५ ॥
त्रिक्षारं पंचलवणं रामठं चित्रमूलकं ।
अजमोदं जीरकैकं मासं चूर्णचतुष्टयम् ॥ ६ ॥
चूर्णयित्वा तथा सर्वं भक्षयेच्चानुवासरं ।
भक्षयेत् पर्णखंडेन कदुष्णेनापि वारिणा ॥ ७ ॥
प्राणनिर्गमकालेऽपि रक्षकः प्राणिनां तथा ।
ज्वरे त्रिदोषजे घोरे सन्निपाते च दारुणे ॥ ८ ॥
प्लीहायां गुल्मवाते च शूले च परिणामजे ।
मंदाग्नौ ग्रहणीरोगे ज्वरे चैवातिसारके ॥ ९ ॥
अयं प्राणेश्वरो नाम भवेन्मृत्युविवर्जितः ।
सर्वरोगविपघ्नोऽयं पूज्यपादेन भाषितः ॥ १० ॥

टीका—पारे की भस्म तथा माक्षिक भस्म, अभ्रक का सत्व (भस्म होने के बाद सत्व निकाला जाता है) तामे की भस्म कमसे कम १—२—३—४ भाग लेवे, तथा सफेद मुसली के स्वरस में एक भाग शुद्ध गन्धक मिला कर खरल में डाल कर दोपहर तक घोंटे तथा घोंट कर सुखा कर कांच की शीशी में बन्द कर शीशी का मुंह बन्द कर देवे और और शीशी को चारों तरफ से खड़िया मिट्टी से सात बार लेपन कर शीशी को बालुका यंत्र में रख देवे तथा उसको बालू से पूरी भर देवे और उस को भट्ठी में रख कर चार पहर तक पकावे। जब पाक हो जावे तब सिद्ध होना जाने और अपने इष्ट देवता का पूजन करके उसका सेवन करे। इस के खाने के बाद नीचे लिखे चूर्ण को बना कर ४ मासा की मात्रा से अनुपान रूपसे देवेः -

काली मिर्च, सोंठ; तीनों क्षार (सज्जीक्षार जवाखार टंकणक्षार), पांचों नमक (काला नमक, सेंधा नमक, विड नमक, समुद्र नमक, साम्हर नमक), हींग, चित्रक, अजमोदा, सफेद जीरा, ये सब बराबर-बराबर भाग लेकर चूर्ण बनावे। इसकी मात्रा ४ माशे की है।

यह चूर्ण भी पान के रस के साथ तथा थोड़े गर्म जल के साथ देवे। यह प्राणेश्वर रस प्राणान्त काल में भी प्राणों की रक्षा करनेवाला है।

त्रिदोषज ज्वर के भयंकर सन्निपात, प्लीहा, गुल्म रोग, बाल-रोग, परिणामज शूल, मन्दाग्नि, ग्रहणी रोग, ज्वर और अतिसार में यह प्राणेश्वर रस मृत्यु से छुड़ानेवाला संपूर्ण रोगों को नाश करनेवाला पूज्यपाद स्वामी ने कहा है।

१५६—श्वासे इन्द्रवारुणी-योगः

इन्द्रवारुणिका—मूलं देवदारुकटुत्रयं ।
शर्करासहितं खादेदूर्ध्वश्वासहरं परं ॥१॥

टीका—इन्द्रायण की जड़, देवदारु चंदन, सोंठ, काली मिर्च और पीपल इन सबको मिश्री की चासनी के साथ सेवन करने से उर्ध्वश्वास भी अच्छी हो जाती है।

१५७—पांडुरोगे मण्डूरत्रिफलावसु

मंडूरं चूर्णयेत् श्लक्ष्णं त्रिफलावसुगुणे पचेत् ।
त्र्यूषणं त्रिफलां मुस्तां विडंगं चव्यचित्रकं ॥१॥
दार्वी ग्रन्थिं देवदारुं तुल्यं तुल्यं विचूर्णयेत् ।
सर्वसाम्यं च मण्डूरं पाकान्ते मिश्रयेत्ततः ॥२॥
भक्षयेत् कर्षमात्रं तु जीर्णे तक्रभोजनं ।
पाण्डुशोथं हलीमं च उरुस्तभं च कामलां ॥३॥
नाशयेन्नात्र संदेहः पूज्यपादेन निर्मितम् ।

टीका—मंडूर को लेकर आठ गुणा त्रिफला में पकावे अर्थात् शुद्ध करे तथा फिर मंडूर की भस्म कर लेवे और सोंठ, मिर्च, पीपल, हर्र, बहेरा, आँवला, नागरमोथा, वायविडंग, चव्य चितावर, दारुहल्दी, पीपरामूल, देवदारु, चंदन ये सब बराबर-बराबर लेवे तथा सबके बराबर मंडूरभस्म लेवे और फिर पाक कर के उसमें मिलाकर गोली बांध लेवे। इनको योग्य मात्रा से योग्य अनुपान से सेवन करावे और दवा (पच जाने) पर मट्ठे के साथ भोजन करावे। इससे पांडुरोग, शोकरोग, हलीमक रोग, उरुस्तंभ, कामला रोग शांत होते हैं, इसमें संदेह नहीं है।

१५८—विबन्धे चिंतामणि-गुटिका

मरिचं पिप्पली शुण्ठी पथ्याधात्री समं-समं ।
सौवर्चलं समं ग्राह्यं टंकणं च द्विभागकं ॥१॥
शुद्धहिंगुलषड्भागं जयपालः सर्वतुल्यकः ।
जंबीरनिंबुनीरेण मर्दयेद्दिवसद्वयम् ॥२॥

पिष्ट्वा गुंजामितां वटिकां गोघृतेन निषेवयेत् ।
विरेचनकरी शीघ्रं हृद्रुजं नाशयेत्परं ॥३॥
शूलं गुल्मं च शोथं च पांडुप्लीहां च नाशयेत् ।
चिंतामणिः गुटिश्चासौ पूज्यपादेन भाषिता ॥४॥

टीका—काली मिर्च, पीपल, सोंठ, बड़ी हर्र का बकला, आँवला, काला नमक ये सब बराबर लेवे तथा सुहागा दो भाग, शुद्ध शिंगरफ छः भाग एवं सब के बराबर शुद्ध जमालगोटा ले सबको एकत्रित कर जंबीरी नींबू के रस से दो दिन तक मर्दन करे, जब खूब पिस जावे तब एक-एक रत्ती की गोली बांध लेवे। बलाबल के अनुसार गाय के घी के साथ सेवन करावे तो शीघ्र ही दस्त लाता है तथा हृदय-रोग को नाश करता है। और शूलरोग, गुल्मरोग, शोथरोग, पांडुरोग, प्लीहा रोग को नाश करता है। यह चिंतामणि नाम की गोली पूज्यपाद स्वामी की कही हुई बहुत ही योग्य है।

१५६—वाजीकरणे रतिलीलारसः

रसो नागश्च लोहं च भागकं चाभ्रकस्य च ।
त्रिभागं स्वर्णबीजानि विजया मधुयष्टिका ॥१॥
शाल्मली नागवल्ली च समभागान्विता तथा ।
मधुघृतान्विता सेव्या वल्लयुग्मस्य मात्रया ॥२॥
संतोषयेच्च बहुकांताः पुष्पधन्वबलान्वितः ।
रतिलीलारसश्चासौ पूज्यपादेन भाषितः ॥३॥

टीका—शुद्ध पारा, शीसे की भस्म, लोह भस्म तथा अभ्रक भस्म ये सब एक-एक भाग तथा धतूरे के शुद्ध बीज तीन भाग, भांग, मुलहटी, सेमल की जड़, नागरवेल (पान) ये भी समान भाग लेकर एकत्रित कर गोली बांध ले। योग्य ६ रत्ती की मात्रा से मधु तथा घी के साथ देवे तो पुरुष की इतनी ताकत बढ़े कि सैकड़ों स्त्रियों को संतोष कर सके तथा कामदेव के समान बहुत बलवान होवे। यह रतिलीला-रस पूज्यपाद स्वामी ने कहा है।

१६०—त्रिदोष-पारदादियोगः

पारदं हिंगुलं गंधं कृत्वा भागोत्तरं क्रमात्।
नीलबीजञ्च भागैकं मर्दयेत्खल्वके बुधः ॥१॥

विजयाकनकव्योषैः सप्तवारेण मर्दयेत्।
आर्द्रकैः मधुपिप्पल्या दीयते वल्लमात्रया ॥२॥

त्रिदोषं सन्निपातं च नाशयेद्विषमज्वरम्।
शीतोपचारः कर्तव्यः मधुराहारसेवनं ॥३॥

सर्वज्वरविषघ्नोऽयं पूज्यपादेन भाषितः।

टीका—शुद्ध पारा, शुद्ध सिंगरफ, शुद्ध गंधक क्रम से १, २, ३ भाग, नील के बीज १ भाग लेकर खरल में भांग तथा धतूरा के पत्ते के स्वरस से तथा सोंठ, मिर्च, पीपल के काढ़े से अलग-अलग सात-सात बार मर्दन करे और अदरख, शहद तथा पीपल के साथ तीन-तीन रत्ती की मात्रा से देवे तो त्रिदोष, सन्निपात, विषमज्वर को नाश करता है। यदि कुछ गर्मी मालूम हो तो ऊपरी शीतोपचार करना चाहिये और मधुर रस का आहार करना चाहिये। यह सब प्रकार के ज्वरों को नाश करनेवाला योग पूज्यपाद स्वामी ने कहा है।

१६१—सर्वरोगे मृत्युञ्जयरसः

भागैकं मरिचं च लोहकरसौ गंधस्य भागद्वयं।
लोहे न्यस्य गवां घृतेन गुटिकामेतां पचेत्पावके ॥१॥

तालं वै समभागकं प्रविदधेत् म्लेच्छं शराशं विषं।
सर्वार्धं जयपालकं च कुटकीक्वाथेन दध्यंबुना ॥२॥

भाव्यं सूर्यमितं तथार्द्रकरसैः त्रिसप्तकृत्वः दृढैः।
संमर्द्यातपशोषितं शतदलैः पुष्पैः समभ्यर्चयेत् ॥३॥

योज्यं गुंजमिते ज्वरे च सहसा सामे निरामेऽथवा।
जीर्णे वा विषमे समीरणभवे पित्तोत्थिते श्लेष्मजे ॥४॥

द्वन्द्वोत्थेषु च संनिपातजनिते शोकज्वरे चोल्बणे।
शैत्ये स्वेदयुदग्निमांद्यजनिते रोगे च शोफैर्युते ॥५॥

पांडौ चार्शगदार्दिते सुमनसा व्योषाद्यकैः सिंधुना ।
जंबीराम्लद्रवैः परिस्रुतरसः पित्तोद्भवे चामये ॥६॥
मृत्युञ्जयरसो नाम सर्वरोगनिकृन्तनः ।
कथितोऽयं प्रयोगश्च पूज्यपादमहर्षिभिः ॥७॥

टीका—एक भाग काली मिर्च, लौहभस्म, शुद्ध पारा तथा, शुद्ध गंधक दो भाग इन सब को लोहे के खरल में डाल कर गाय के घी से मिला कर गोली सी बांध लेवे और अग्नि में पकावे। पकने पर जब ठंढी होने को आवे तब उसमें एक भाग हरिताल की भस्म, पाँच भाग तामे की भस्म और शुद्ध विषनाग तथा सब से आधा शुद्ध जमालगोटा सब को मिलाकर कुटकी के काढ़े से और दही के पानी से भावना दे धूप में सुखावे एवं कमल-पुष्पों से पूजा करे। फिर एक-एक रत्तीप्रमाण से कच्चे तथा पक्के ज्वर में जीर्णज्वर में, विषमज्वर में, वातजज्वर में पित्तज्वर में कफज्वर में, द्वन्द्वज ज्वर में, सन्निपात ज्वर में शोफ ज्वर में, शीतज्वर में, पसीना-सहित ज्वर में, अग्निमांद्य-जनित रोग में, सूजनसहित रोग में, पांडुरोग में, बवासीर में, सोंठ, मिर्च, पीपल, अदरख, सेंधानमक इनके अनुपान से यथायोग्य देवे तथा पित्तजन्यरोगों में जंबीरी नींबू के रस से देवे। यह मृत्युञ्जय रस सब रोगों को नाश करनेवाला पूज्यपाद स्वामी का कहा हुआ प्रयोग है।

१६२—गुल्मरोगे वातगुल्मरसः

शुद्धगंधं रसाभ्रं च त्रिफला सैंधवं वचा ।
चित्रकं च द्वयक्षारं विडंगं समभागकम् ॥१॥
मातुलुंगरसैर्मर्द्यः वातगुल्महरश्च सः ।
अग्निसंदीपनश्चापि गुल्मशूलातिसारजित् ॥२॥

टीका—शुद्ध गंधक, शुद्ध पारा, अभ्रकभस्म, त्रिफला, सेंधा नमक, दूधिया वच, चित्रक सज्जीखार, जवाखार, वायविडंग ये सब समान भाग लेकर बिजोरा (मातुलुंग) नींबू के रस से घोंटे और घोंट कर तैयार कर ले। यह रस अग्नि को बढ़ानेवाला गुल्मरोग, शूलरोग को नाश करनेवाला है।

१६३—चिंतामणिगुटिका

मरिचं पिप्पली शुंठी पथ्या धात्री विभीतकम् ।
भागैकं रुचकं लवणं टंकणानां द्विभागकम् ॥१॥
दरदं चैकभागं च जैपालषड्भागकम् ।
सर्वं जंबीरनीरेण मर्द्यं च दिवसद्वयम् ॥२॥
चणकप्रमाणवटिकां कारयेच्छुद्ध-बुद्धिभिः ।
गोघृतेनावलेह्यः स्यात् सद्यः रेचः सुजायते ॥३॥
हृद्रोगं शूलगुल्मं च शोफं च ज्वरप्लीहकम् ।
पाण्डुं च नाशयेत् शीघ्रमसौ चिंतामणिर्गुटी ॥४॥
संपूर्णजनहितकरो पूज्यपादेन भाषिता ।

टीका—काली मिर्च, पीपल, सोंठ, हर्र, आँवला, बहेरा और काला नमक ये सब एक-एक भाग; सुहागा २ भाग, शुद्ध सिंगरफ १ भाग और शुद्ध जमालगोटा ६ भाग इन सबको एकत्रित कर के जंबीरी नींबू के स्वरस से दो दिन तक घोंटे और चना के बराबर गोली बांधे। इसको गाय के घी के साथ खाने से शीघ्र ही रेचन करती है तथा हृदय-रोग, शूलरोग, गुल्मरोग, शोथ रोग, ज्वर, प्लीहा, पांडु इन रोगों को यह चिंतामणि गुटिका शीघ्र ही नाश करनेवाली है एवं यह संपूर्ण मनुष्यों को हित करनेवाली है।

१६४—षडांगगुग्गुलुः

रास्नामृता देवदारु शुंठी च चव्यचित्रकम् ।
गुग्गुलुं सर्वतुल्यांशं कुट्टयेत् घृतवासितम् ॥१॥

टीका—रासना, गिलोय, देवदारु, सोंठ, चव्य, चित्रक ये सब बराबर ले तथा सब के बराबर शुद्ध गुग्गुल लेकर घी के साथ गोली बांधे और १ तोला प्रति-दिन सेवन करे तो लाभ होवे।

नोट—इसमें १ तोला की मात्रा लिखी है सो यह प्राचीन काल के मनुष्यों के बलानुसार है। इस समय मनुष्य बहुत कमजोर हैं इसलिये कम मात्रा अर्थात् तीन माशा की मात्रा से खाना चाहिये।

१६५—लूताविष-चिकित्सा

नरनीरेण सर्पाक्षीं पिष्ट्वा लेपं तु कारयेत् ।
असाध्यां नाशयेल्लूतां त्रिदोषोत्थां मुनेर्वचः ॥१॥

टीका—मनुष्य के मूत्र से सर्पाक्षी को पीस कर लेप करने से असाध्य भी मकरी का विष शांत हो जाता है। चाहे त्रिदोष भी हो गया हो तो भी शांत हो जाता है।

नोट—मकरी जब शरीर पर फिर जाती है और वह अपना जहर शरीर पर छोड़ती है तब कोदों के बराबर फुंसी सी हो जाती है, ये पकती नहीं है और बड़ा कष्ट होता है। इस पर उक्त प्रयोग करने से शीघ्र ही शांत हो जाता है।

१६६—पित्तदाहे धान्यादियोगः

धान्यकं मधुकं चैलां समभागेन शर्करां ।
नवनीतं पयः पीत्वा पैत्त-दाह-विनाशनम् ॥२॥

टीका—धनिया, मुलहठी, छोटी इलायची ये तीनों बराबर लेवे और सबके बराबर शर्करा ले एवं मक्खन में मिला कर खाये तथा ऊपर से दूध को पीवे तो पित्त-संबंधी दाह कम हो जाता है।

१६७—दूसरा योग

नवनीतं क्षीरसंयुक्तं शर्करा-पिप्पलीयुतं ।
पित्तदाहं च तापं च चातुर्थं—विनाशयेत् ॥१॥

टीका—मक्खन, शक्कर, पीपल इन सब को मिला कर दूध के साथ पीने से पित्तज, दाह एवं चौथिया ज्वर शांत हो जाता है।

१६८—श्वासे पारदादियोगः

पारदं गंधकं शुद्धं मृतं लोहं च टंकणं ।
रास्नां विडंगं त्रिफलां देवदारुं कटुत्रयम् ॥१॥
अमृता पद्मकं क्षौद्रं विषं तुल्यांशचूर्णितम् ।
त्रिगुंजं श्वासकासार्थी सेवयेन्नात्र संशयः ॥२॥

टीका—शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, लौहभस्म, सुहागा, रासना, वायविडंग, त्रिफला, देवदारु, सोंठ, मिर्च, पीपल, गिलोय, पद्माख, चन्दन, शहद शुद्ध विषनाग ये सब वस्तुएँ बराबर लेवे और सब को एकत्र घोंट कर तीन-तीन रत्ती के प्रमाण से सेवन करे तो श्वांस और खाँसी कम होती है, इसमें कोई सन्देह नहीं है।

१६६—श्वासे सूर्यावर्त्तरसः

सूतार्धं गंधकं मर्द्यं यामार्द्धं कन्यकाद्रवैः।
द्वयोस्तुल्यं ताम्रपत्रं पूर्णपत्रं च लेपयेत् ॥१॥
दिनैकं हंडिकामध्ये पक्वमादाय चूर्णयेत्।
सूर्यावर्तरसो ह्येषः श्वासकासहरः परः ॥२॥

टीका—शुद्ध पारा १ भाग, शुद्ध गंधक आधा भाग—इन दोनों को घीकुमारी के रस से आधे पहर तक मर्दन करे और दोनों के बराबर तामे का पत्र लेकर उस पर लेप करे तथा एक दिन तक हंडी के बीच में रख कर पाक करे। जब पाक हो जावे तब पत्रों पर से निकाल कर चूर्ण कर के अच्छी तरह घोंट लेवे तब यह सूर्यावर्त रस तैयार हुआ समझे। यह श्वास तथा खाँसी को हरनेवाला है।

१७०—हस्तिकर्णतैलम्

षोडशपलं च कंदं च विल्वपत्रं पलाष्टकम्।
आरनालं चतुःप्रस्थं कषायमवतारयेत् ॥१॥
तैलं च कुडवं चैकं मृदुपाकं भिषग्वरः।
हस्तिकर्णमिदं नाम्ना सर्वशीतज्वरापहं ॥२॥

टीका—१६ पल कंदविशेष, ८ पल बेल की पत्ती, चार प्रस्थ (१३ छटांक) कांजी लेकर सब को एकत्रित कर के ४ कुडव पानी में पकावे। जब १ कुडव बाकी रहे तब उतार कर छान ले और फिर उसमें १ कुडव तैल डाल कर मृदु पाक से पाक करे। तैल मात्र बाकी रहे तब छान कर रख लेवे। यह तैल सब प्रकार के शीतज्वर को दूर करनेवाला है।

१७१—विनोद विद्याधररसः

सिन्दूरसागरफलवत्सनागाः ह्यष्टाष्टकैकांशमनुक्रमेण।
जंबीरगोक्षीररसुनालिकेरश्रीखंडवासावरजीरकाणां ॥१॥

जीवंतिकावालुकमेघनादाः एषां रसानां सुरसैः सुपिष्य ।
कस्तूरिकाचंदनकेन सार्धं निधाय शुल्वे बहुशोषयेत्तथा ॥२॥
निक्षिप्य भांडोदरके पिधाय पचेत् तणं मंदहुताशनेन ।
संशोष्य शीतज्वरपीडितानां मात्रां तु माषैकमितां प्रदद्यात् ॥३॥

टीका—रस सिन्दूर, ८ भाग, समुद्रफल ८ भाग, शुद्ध विषनाग १ भाग, इन तीनों को मिलाकर नीचे लिखी वस्तुओं के रस से मर्दन करे :—जंबीरी नींबू, गाय का दूध, नारियल का पानी, चंदन का काढ़ा, अडूसा का स्वरस, जीरे का काढ़ा, जीवंतीका-स्वरस, सुगंध-बाले का काढ़ा, चौलाई का स्वरस इन सब के स्वरस से अलग-अलग भावना देकर कस्तूरी तथा चंदन के साथ ताम्रपत्र में रख कर सुखावे और उन पत्रों सहित एक भांड में बंद करके मन्द-मन्द अग्नि से पकावे। जब वह अत्यन्त शुष्क हो जावे तब तैयार हुआ समझे। यह शीतज्वर में हितकारी है। इसकी मात्रा १ माशे की है।

नोट—यह मात्रा अधिक है। वैद्य महाशयों को चाहिये कि रत्ती के प्रमाण में देवें।

१७२—पारदादि-योगः

पारदं हिंगुलं गंधं सविषं क्रमवृद्धिना ।
सर्वं च मर्दयेत् खल्वे कनकस्वरसेन च ॥१॥
विजयास्वरसैर्वापि व्योषस्य क्वथनेन वा ।
सप्तवारं पृथक्कृत्य मर्दयेत् गुंजमात्रया ॥२॥
आर्द्रकैः मधुपिप्पल्या त्रिदोषं सन्निपातकम् ।
सर्वज्वरहरश्चाशु सर्वव्याधि विनाशनः ॥३॥
शीतोपचारः कर्तव्यः मधुराहारसेवनम् ।
योगोऽयं श्रेष्ठसिद्धश्च पूज्यपादेन भाषितः ॥३॥

टीका—शुद्ध पारा १ भाग, शुद्ध हिंगुल २ भाग, शुद्ध गंधक ३ भाग, शुद्ध विष ४ भाग लेकर इन सब को खरल में डालकर धतूरे के रस से ७ बार, भांग के स्वरस से ७ बार, त्रिकटु के स्वरस से ७ बार भावना देवे और २ रत्ती के प्रमाण से अदरख तथा पीपल के साथ देवे तो त्रिदोष सन्निपात भी शांत हो। यह सब प्रकार के ज्वरों एवं सर्व व्याधियों को नाश करनेवाला है। इसके सेवन करने के बाद शीतोपचार करना चाहिये। यह श्रेष्ठ तथा सिद्धयोग पूज्यपाद स्वामी ने कहा है।